मरुधर केसरी प्रवर्तक
मुनि श्री मिश्रीमल जी महाराज

श्री जैन राम यशोरसायन

मरुधर केसरी प्रवर्तक
मुनिश्री मिश्रीमलजी महाराज

श्री
जैन राम
यशोरसायन

श्री जैन राम यशोरसायन

रचयिता :

स्वर्गीय प्रवर्तक

मरुधरकेसरी श्री मिश्रीमल जी महाराज

प्रकाशक

पूज्य श्री रघुनाथ जैन साहित्य शोध संस्थान

जोधपुर

● श्री रघुनाथ जैन साहित्य शोध संस्थान का द्वितीय-ग्रन्थ

● श्री जैन राम यशोरसायन

● श्रमणसूर्य प्रवर्तक
मरुधरकेसरी श्री मिश्रीमल जी महाराज

● संयोजक
प्रिय शिष्य युवकहृदय श्री सुकन मुनि जी महाराज

● प्रकाशक
पूज्य श्री रघुनाथ जैन साहित्य शोध संस्थान
जोधपुर

● प्राप्तिस्थान
श्री मरुधरकेसरी साहित्य प्रकाशन समिति
पीपलिया बाजार, ब्यावर (राज०)

● अर्थ-सौजन्य
श्रीमान जसवन्तराज जी लूणावत
आनन्दपुर (कालु) एवं बैंगलोर

● मुद्रक
श्रीचन्द सुराना के लिए
प्रिंट सेन्टर,
[illegible] आगरा-3

● प्रथम संस्करण
वीर संवत् — २५०७
वि० संवत् — २०३६, फागुन
ईस्वी सन् — १९८०, जनवरी

मूल्य : लागत मात्र १५) पन्द्रह रुपये

गुरुदेव श्री की काव्य छटा वडी ही मनोहर, प्रवाहपूर्ण तथा गायन मे लयबद्ध, सरसता से परिपूर्ण है। इसमे काव्य, नीति और वैराग्य—ये तीनो ही तत्त्व भरपूर मात्रा मे विद्यमान है।

जैन महाभारत 'पाण्डव यशोरसायन' के नाम से वहुत पहले ही प्रकाशित हो चुका है। यह विशाल काव्य यद्यपि आज दुष्प्राप्य-सा हो रहा है, फिर भी जहा है, उसकी अत्यन्त उपयोगिता है। राजस्थानी भाषा की डिंगल-पिंगल शैली मे इस काव्य की छटा वडी ही वीररस से परिपूर्ण और ओज-तेज से दीप्तिमान है।

रामायण-कथा पर गुरुदेव श्री की यह द्वितीय रचना **'जैन राम यशो-रसायन'** पाठको के समक्ष प्रस्तुत है। इस मन-मोहक सुन्दर काव्यकृति के विपय मे अधिक कुछ लिखना दीपक लेकर सूर्य को दिखाने जैसा होगा। पाठको के कर-कमलो में यह भावपूर्ण रसवाहिनी काव्यकृति प्रस्तुत है, पाठक पढे, भाव-विभोर होकर गाये और वैराग्य-आनन्द-रस की सरिता मे स्वयं भी डुबकियाँ लगाये और श्रोता समूह को भी।

गुरुदेव के प्रिय शिष्य सेवा भावी युवकहृदय मधुरवक्ता श्रीसुकन मुनिजी महाराज की प्रेरणा व साहित्य रुचि के कारण अभी यह प्रकाशन पाठको के हाथो मे पहुंच रहा है।

इस महान कृति के प्रकाशन-मुद्रण मे आनन्दपुर (कालू) निवासी श्रीमान् जसवन्तराज जी लुणावत ने पूर्ण श्रद्धा के साथ अर्थ-सहयोग प्रदान किया है, इसलिए हम आपकी उदारता के लिए आभार प्रकट करते है। साथ ही इसकी मुद्रण व्यवस्था मे श्रीमान् श्रीचन्दजी सुराना का आत्मीय सहयोग मिला है, उनको भी हार्दिक धन्यवाद।

आशा है—'यावच्चन्द्रदिवाकरौ'—यह महान् रचना जन-मन को आनन्दित करती रहेगी।

मन्त्री

—श्री रघुनाथ जैन साहित्य शोध संस्थान
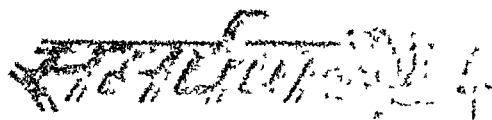
जोधपुर

रुचिकर रामायण (रामरसायण) के लिये

* दोहा *

रचना रामायण तणी बणी घणी सश्रीक।
मिश्री डलिया मोदनी किणने लगे न ठीक ॥ १ ॥

वक्ता ने व्हाली लगे श्रोता ने सुणताय।
छिनभर छूट सके नहो सुधा - घूंट पीताय ॥ २ ॥

विनती म्हारी मानने विरची आ गुरुदेव।
यो उपकार अपार जो राजत हृदय सदैव ॥ ३ ॥

विविध भाव रागो विविध युक्ती विविध विलास।
विविध छन्द की छोलसूं उर उपजे उल्लास ॥ ४ ॥

व्यंग-भाव पुनि विविध है पण्डित परखे ताय।
अथवा अनुभव से पिये रामायण रस प्राय ॥ ५ ॥

कलि-मल-हरणी है कथा भर्ता वाञ्छित भुक्ति।
रामायण रमणीक यह शुकन-श्रमण की सूक्ति ॥ ६ ॥

—श्रमण शुकन

रुचिकर रामायण (रामरसायण) के लिए

कमनीय कामना

वीर छन्द

श्रमण-सूर्य है मरुधर-केहरि आगम-ज्ञाता शान्ति-स्वरूप,
विविध तरह के गायन में जिन रामायण यह रची अनूप।
जो नर पूर्ण-प्रेम से गावे, पावे वाञ्छित फल तत्काल,
इसकी प्रेस-कापी करने का सौभागी मैं हूँ 'कवि बाल' ॥१॥

हरिगीतिका छन्द

सुग्रीव की प्रिय-मित्रता अरु वीर बाली की कथा,
हनुमान की सेवा अनन्य रु सती सीता की व्यथा
सद्भाव धारे हृदय में जो भरत-लक्ष्मण बन्धु में,
दे सीख रामायण यही, तर जाय वो भव-सिन्धु में ॥१॥

—कवि किंकर 'बाल'

सबसे छोटे पुत्र श्री वस्तारामजी का विवाह श्रीमती सूरजबाई के साथ हुआ था। विवाह के एक वर्ष बाद आपका स्वर्गवास अल्प आयु मे हो गया।

स्व० भूरचन्दजी के मझले पुत्र श्री सैलराजजी की रुचि राजनीति की अपेक्षा व्यापार मे अधिक थी। इस हेतु तामिलानाडू को प्रस्थान किया। अनेक कष्टो को सहन करते हुए आपने परिश्रम एवं लगन से सुव्यवस्थित ढंग मे कार्य कर धनार्जन किया और निम्नलिखित स्थानो मे संस्थाये स्थापित की।

(१) मुद्रान्तगम (जिला, चिंगलपेठ)।
(२) आरनी (जिला वेलूर)।
(३) सीरगाली (सीयाली, जिला तन्जाऊर)।

दैविक कृपा से आपके भी तीन पुत्र एव एक पुत्री ने ही जन्म लिया था। ज्येष्ठ पुत्र श्री जसवन्तराजजी, मझले श्री सोहनराजजी व सबसे छोटे श्री मोतीलालजी तथा पुत्री सुन्दरकँवर थी। मझले पुत्र श्री सोहनराजजी का स्वर्गवास आपके जीवनकाल में ही हो गया। विक्रम संवत् १९८९ मे आपका स्वर्गवास भी हो गया। आप अपने पीछे दो पुत्र एवं एक पुत्री छोड-कर स्वर्ग सिधारे। आपकी धर्मपत्नि कन्याबाई धर्मानुरागी, व्यवहार कुशल एवं सेवाभावी थी। यह आश्चर्य है कि कन्याबाई का जन्म, विवाह एव मृत्यु का स्थल आनन्दपुर (कालू) ही रहा। आपका स्वर्गवास विक्रम संवत् २०१२ चैत्र पूर्णिमा को हुआ।

श्री सैलराजजी साहब के ज्येष्ठ पुत्र श्री जसवन्तराजजी का जन्म विक्रम संवत् १९७८ के भाद्रपद शुक्ला ५ संवत्सरी के पावन पर्व के दिन हुआ। आपको अपने बडे पिता श्री केसरीमलजी के दत्तक पुत्र बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। आप अपने पिता की तरह ही व्यापार-कुशल है। आपने अपनी प्रतिभा से बंगलौर मे व्यावसायिक प्रतिष्ठान स्थापित किया जो 'महावीर इलैक्ट्रिक कम्पनी' के नाम से मशहूर है। कर्नाटक और तामिलनाडु मे प्रसिद्ध कम्पनी फिलिप्स के डिस्ट्रीब्यूटर है। इसके अलावा ओ० के०, ओंकार, पोपुलर ट्यूब इण्डस्ट्रीज, इम्पीरियल [illegible] इण्डस्ट्रीज, [illegible], स्पम-

सुमेरमलजी का विवाह मोहनलालजी वाफणा बंगलौर निवासी की सुपुत्री मदनकुंवर के साथ सम्पन्न हुआ। श्री सुमेरमल जी मद्रास प्रतिष्ठान की देखभाल करते है।

शान्तिलालजी का विवाह बंगलौर निवासी जवानमलजी बेंगानी की सुपुत्री तारादेवी के साथ सम्पन्न हुआ। शान्ति लालजी एस० ललित इलैक्ट्रिक प्रतिष्ठान की देखभाल करते है। पुत्री पुष्पा का विवाह संस्कार श्री मदनराज जी, सुपुत्र मोहनलालजी चौधरी जयतारण निवासी के साथ सम्पन्न हुआ। पुत्री चन्द्रकान्ता का विवाह महावीरचन्दजी, सुपुत्र श्री चम्पालालजी गादिया चण्डावल निवासी के साथ सम्पन्न हुआ।

श्रीमिलराजजी साहब के कनिष्ट पुत्र श्री मोतीलालजी व्यापार कुशल, शान्तीप्रिय एवं धर्मपरायण व्यक्तियो की श्रेणी मे है। आप बंगलौर मे इन्द्रा इलैक्ट्रिकल्स प्रतिष्ठान के सफल संचालक है। आपका विवाह लाम्बिया निवासी भंवरलालजी गादिया की सुपुत्री रतनकुंवर के साथ सम्पन्न हुआ। आपके चार पुत्र व चार पुत्रियाँ है। ज्येष्ठ पुत्र उगमराज, रतन एजेन्सी, चितुर आन्ध्र प्रदेश प्रतिष्ठान की देखभाल कर रहे है।

मिलराजजी की सुपुत्री सुन्दरकुवर का जन्म विक्रम संवत् १९७९ के मिगसर शुक्ला १२ को आनन्दपुर कालू मे हुआ तथा पाणिग्रहण संस्कार विक्रम संवत् १९९१ के माघ शुक्ला ४ को जयतारण निवासी श्री चादमलजी मेहता एडवोकेट के साथ सम्पन्न हुआ। आप धार्मिक प्रवृत्ति की विदुषी महिला थी। आपने उपधान तप की आराधना की। आपके तीन पुत्र मानमल, कानमल, सुरेन्द्रमल एवं पुत्री कमलाकंवर है। विधि का विधान है कि जन्म लेने वाला अमर नही होता उसे एक दिन संसार छोडना ही पडता है। अत सुन्दरकुंवरजी हमारे बीच स्थिर कैसे रह सकती थी। अन्त मे ६ मई १९७९ ई० को आपने यह लौकिक संसार त्याग दिया और स्वर्ग सिधारी।

इस प्रकार श्री जसवन्तराजजी सा० लुणावत का परिवार प्रारम्भ मे ही धर्मप्रेमी, समाज प्रेमी, कर्तव्य परायण, पद की गरिमा और प्रतिष्ठा रखने

विषय-सूची

जैन-अजैन सबही मतवाले, जिसका गुण गावे, अजी हां जिसका गुण गावे ।
राम नाम रटता रग-रग मे, आनन्द रग छावे ।।राम० ।।३।।

इष्ट कान्त अति सौम्य सुभग है, शाताकारी जाप, सज्जनो ! शाताकारी०
यत्किञ्चित् भी शका हो तो, अजमालीजो आप ।।राम० ।।४।।

जनक-दुलारी रघुवर-प्यारी, सजा शील शृंगार, उन्होने सजा०
कष्ट सह्या पिण कारन लोपी, अहा ! धन्य अवतार ।।राम० ।।५।।

भ्रात-भक्ति मे हाजर रहियो लक्ष्मण आठोयाम, सज्जनो ! लक्ष्मण० ।
काम सँवार्या निज भुज-बल से, राख्यो राम को नाम ।।राम०।।६।।

दशमुख दश-दिश मे था जाहिर, अष्टम प्रतिहरि खास, भाइयो अष्टम० ।
गौरव राख लिया था गाढ्ड, अभिमानी आकाश ।।राम०।।७।।

मुख्य कथा है इन चारो की, अन्तर्गत है अनेक, सज्जनों ! अन्तर्गत० ।
पुहवी पर परसिद्ध भये है, रख-रख अपनी टेक ।।राम०।।८।।

पिक सहकार[1] अलि मकरँद[2], गज रेवा[3] से प्यार । सज्जनो ! गज रेवा० ।।
ता-विधि भव्य श्रवण जो करसी, होवे बेड़ा पार ।।राम०।।९।।

वाणी सद्गुरु और इष्ट जिन, करो 'मिश्रि' पै महर । कृपालू करो० ।
श्रोता के मन मोद बढे सुण, और ज्ञान की लहर ।।राम०।।१०।।

महत्कार्य प्रारभ करूँ मै, सहायक बनना ईश ! दास के सहायक० ।
कविता कोमल भाव पूर्ण हो, प्रथमा ढाल जगीस ।।राम०।।११।।

दोहा

हरीभद्र हेमा-गणी, केसराज आदीय ।
समयसुन्दर पाठक रची, रामायण रमणीय ।।१।।
वाल्मीक तुलसी अपर - मत मे तास वृतात ।
गुम्फित कीना सरस वे, भक्ति-सहित घर ख्यांत ।।२।।

सवैया

सिन्धु चहै भुज से तिरबो चढबो गिरिराज चहै पग-हीनो ।
शठ गंवार चहै शिव थानक मानिक मोल करे दृग-बीनो ।।

---

१ कोयल को आम से २ हाथी को नदी से
२ भ्रमर को फूलों की सुगन्ध से

जब तक सदाचार मे रहसी, तब तक नहि होगा नुकशान ।।चा०।।१४।।
देकर इन्द्र गयो निज स्थाने, 'मिश्री' दूजी ढाल सुजान ।।चा०।।१५।।

ढाल-पूर्व

जमायो घनवाहन राज, सूर ते जोडे सब साज,
मही पर घन ज्यो रह्यो गाज,
इलाको ले लीनो घेरो, चरण में आन पडे वैरी ।।राम०।।६।।
असल वह क्षत्री महाराजा, विद्या से राक्षस व्है ताजा,
इसी से राक्षसपति-वाजा,
अन्यथा मानव है सागे, दानव तो देख-देख भागे ।।राम०।।७।।
राज्य बहु-काल तलक कीना, तखत महाराक्षस को दीना,
सयम ले मोक्ष-राज लीना
महाराक्षस राक्षस सुत ताई, दीक्षा लो ऋद्धि सभलाई ।।राम०।।८।।

ढाल ३ जी ।।तर्ज—नवीन रसिया०।।

ऐसे भये अनेको भूप, दीख[1] ले शिवपुर को भोगे ।
दीख ले शिवपुर को भोगे, एक से एक भये जोगे ।।टेर।।
काल बहुत बीता है भाई, समय दसम जिनके सुखदाई,
कीरति-धवल भूप अधिकाई, जबरा जिसका ठाठ—
प्रजा के सारे दुख खोगे ।।ऐसे० ।।१।।
उसी समय वैताढ्य-गिरी-पर, मेघाभिध था पुर अति सुन्दर—
खगपतीन्द्र[2] राजा अति दुर्धर, श्रीपति के श्रीकण्ठ रु पुत्री—
हो गइ वर-योगे ।।ऐसे०।।२।।
रत्नपुरी पुष्पोत्तर नरवर, पद्मोत्तर सुत रूप पुरन्दर,
ता-हित देवी मागी हितधर, उसको नही परणाय—
लकपति व्याही घर छोगे ।।ऐसे०।।३।।
कीर्तिध्वज-राणी इन्द्राणी, वा देवी मन मन्दिर मानी,
रत्नपुरी-धव गाठ बँधाणी, नारी योग मे क्लेश केते नर—
पृथ्वी पर भोगे ।।ऐसे०।।४।।

१ दीक्षा लेकर २ विद्याधरपति

रत्नपुरी की पद्मावाई, वा सूती छत-पर जो जाई,
श्रीकण्ठ अपहर कर लेजाई, पुष्पोत्तर की आन लडाई,
लकापति तव प्रवल पक्ष से लगा दिये थोगे ।।ऐसे०।।५।।

ढाल—पूर्व

कीर्तिध्वज समजाई सारा, व्याह तो उसका कर डारा
वसाया अति-समीप प्यारा, द्वीप है वानर वहु रूड़ा—
वसाई किष्किन्वा सूरा ।।राम गुण गावो ।।६।।

दोहा

वानरद्वीपे वानरा, रहते थे अनपार।
मतमारो पालो इन्हे, हुक्म दियो जन पार ।।१।।
राख्यो ध्वज मे चिन्ह कपि, याते वन्दरराय।
विद्या से कपि वनत है, कहते वन्दरराय ।।२।।

ढाल ४ थो ।।तर्ज—लावणी०।।

श्रीकण्ठ कीर्तिध्वज शाला, अपना राज्य जमाया है।
राक्षस वन्दर आपस माये, सुन्दर प्रेम वढाया है ।।
श्रीकण्ठ के वज्र सुकंठज, पुत्र वडा वलधारी है।
स्व-इच्छा से रमण करत है, नहि किसकी दरकारी है ।।
श्रीकण्ठ दे राज्य पुत्र को, स्वय हुआ अणगारी है ।।१।।
रामचन्द्र की कथा रसीली, सुनो भव्य हितकारी है ।।टेर।।

हुये अनेको राजा ताजा, लका अरु किष्किन्धा-पर।
राज्य भोग सव पाप टाल कर, स्वर्ग मोक्ष सुख लीना वर ।।
मुनिसुव्रत भगवान शासन मे, घणोदधि वानर राया।
तडितकेश है लकानायक, दल दंगल जीता भाया ।।
गेलनगो नन्दन-वन राक्षस, साथे राण्यो सारी है ।।राम०।।२।।

इक वानर रमतो राणी की, देह विलूरी आकर के।
कोपानल नृप हो कपि-मारा, एक वाण को जड़ कर के ।।
घायल वानर मुनि-पद पड़गो मुनि नवकार सुनाय दिया।
सर्द हुवा, सुर भुवनपती वह, अवधी का उपयोग लिया ।।
सेवा सारे आ मुनिवर की, मानलिया उपकारी है ।।राम०।।३।।

चल पड़े भ्रात भी साथे, भयकर शैल वन झाडी ।
अचल-आसन लगा वैठे, न खाना और सोना है ॥क०॥५॥
कष्ट से स्पष्ट है सिद्धी, अगर हो नियम मे पक्का ।
फलेगी क्यो नही आशा, आलसी अगर जो ना है ॥क०॥६॥
विद्या इक सहस दशमुख ली, कुंभ पण, विभीपण चारी ।
भाग्य से मिलती है 'मिश्री', पुन्य का हार पोना है ॥क०॥७॥

ढाल—पूर्व

सिंह हो वख्तर तन धारे, कहो फिर है किसके सारे ।
साधना कर घर पहुधारे, विद्या विधि पद्म ग्रन्थ माही—
यहाँ कही थोडे मे भाई ॥राम०॥१॥
साधियो चन्द्रहास्य खर्ग, किया उपवास छह वर्ग,
कला शशि वढे जेम मर्द, वैसे ही दसकन्धर दीपे,—
वहतोडो वैर्या ने जीपै ॥राम०॥२॥

ढाल ९ मी ॥ तर्ज—आखिर नार पराई है० ॥

जब पुण्यदशा प्रकटाती है, दुनियाँ अपनी वन जाती है ॥टेर॥
गिरि वैताढ्य की दक्षिण श्रेणी, सुर संगीत नगर रस लेणी,
मय नृप की जग ख्याती है ॥दुनियाँ ॥१॥
केतुमती राणी की जाई, मन्दोदरि वाला सुखदाई,
अप्सर उपमा पाती है ॥दुनियाँ ॥२॥
मामी लाकर दशमुख ताई, परणादी मन खुशियों छाई,
यह जोड़ी दुनी सराती है ॥दुनियाँ ॥३॥
दशकन्धर गये मेलन वन को, वाला महस्र खट् मिलगी उनको,
लखि मुग्ध सभी हो जाती है ॥दुनियाँ ॥४॥
की विनती परणो मनमोहन, मन वसिया राधा हरि सोहन,
'मिश्री' बिना बुलाई आती है ॥दुनियाँ ॥५॥

ढाल १० मी ॥ तर्ज—कांटो लागो रे देवरिया० ॥

कैसे परणू गी बिन दीधो, तुमरे मात पिता इत नाय ।
तुमरे मात पिता इत नाय, यह तो होता है अन्याय ॥टेर॥
कन्यादान दिया जाता है, नियम अनादि चला आता है ।
इसीलिये तुम धीरज धारो, अपने दिल के माय ॥कैसे ॥१॥

धीरज धीरज नहिं है घणियों, लो सन्तोष काम ही वणियो।
मात पिता तो है हठवादी, परणावेंगे नांय॥
जल्दी करलो रे जीवनधन ! त्यारी, घडी अख्यारथ जाय,—
घड़ी अख्यारथ जाय, म्हांरो जीव लहरिया खाय॥टेर॥
ट-पट मे, मेघरथ ज यो चटपट में।
लट्यो आय॥३॥
जुलम मचाय,—
आई नांय॥टेर॥
जु निगोड़ा।
रके मांय॥कैसे॥४॥
है ऐरी।
कसि माय॥कैसे॥५॥
ारा जद।
है नाय॥६॥
नग चुकाय,—
गलजाय॥टेर॥
डकड ऊछलिया।
गण छाय॥कैसे॥७॥
किम सूजे।
क सुनाय॥कैसे॥८॥
ाजगिया है।
ेर कढाय॥कैसे॥९॥

दोहा

..याधर विषे, ग उतग।
धन्य धन्य व्हाला वदे, वाह कँवरसा रग॥१॥
वन्धन छोड्या हाथ सूं, निपट वधायो नेह।
धन, धण लेकर अपरिमित, दशमुख आयो गेह॥२॥

ढाल—पूर्व की

हाक तो फूटी चउफेर, जीतीयो विद्याधर घेर,
विसरगा सारा ही वेर, महोदर नृप स्वरूप-नयना,—
महाराणी जिसके मृदु-वयना॥राम गुण गावो॥१९॥

पुत्रिका तास तड़ित्माला, डोला ले आया तत्काला,
कुंभ को व्याही सुविशाला, पंकजश्री विभीषण पाई,—
ज्योतिपुर राजा की जाई ॥राम०॥२०॥

सवैया

म्हेल मनोहर राणि मन्दोदरि पौढ रही परियंक सुहानी।
स्वप्न लियो मृगराज तणो पति मे कहि बात हिये हुलसानी॥
पुत्र अनूप अहा ! प्रसव्यो जग-जीत अजीत भई नभ बानी।
उच्छव गाय बजाय कियो अरु नाम दियो हरिजित् सुलतानी॥१॥

घनवाहन नन्द भयो फिर से भुजदण्ड प्रचण्ड विहन्डन सो।
डसडी जग जोट मरोड कहाँ यमराज मिजाज जु खण्डन सो॥
क्षणदाचर[1] खूब खुश्याली लहै दुय नन्दन भे कुलमण्डन सो।
दशकण्ठहु के लघु-भ्रात उभै सुविचार कियो रिपुतन्डन सो॥२॥

छन्द-पद्धरी

सजि चलै भ्रात दुहुँ लंक तीर, खोसत पुनि लूटत देत पीर।
हो दुखित प्रजा कीनी पुकार, सुन धनद हृदय कीनो विचार॥१॥
सूमाली नृप को उपालम्भ, शिशु को समजावहु विनविलम्ब।
नातर पाओगे असह दुक्ख, तब उत्तर दीनो दसहमुक्ख॥२॥
जा दूत धनद से समाचार, कह देना हम है आनहार।
यदि चहै भला, दे लंक छोर, है लंक हमारी तोर जोर॥३॥
रावण चट चाल्यो भ्रात साथ, वैश्रमण भणी दिखलाय हाथ।
वह शुद्ध-भाव चारित्र लीध, दशमुख भी जा पद सीस दीध॥४॥
ले लिवी लंक पुष्पक विमान, कर अमल थापियो राज-थान।
मन चाह फली माता निहार, भव मोद वढ्यो जा के अपार॥५॥
करि भुवनालंकृत श्वेत गाहि, आलान बांधि दीयो उमाहि।
नृप जमालियो सब ठाट पाट, दसमुख अति दीपत अरी पाट॥६॥

ढाल ११ मी ॥तर्ज—ख्याल की०॥

खगचर[2] इक आयो, हाल सुनायो दशमुख भूप ने ॥टेर॥
किष्किन्धा नगरे कपिराजा, कीनी चपल चढ़ाई।
यमराजा पकरी कारागृह, दीना है पधराई जी ॥खगचर० ॥१॥

१ निशाचर राक्षस   २ विद्याधर या आकाशचारी।

आद-जुगादसूँ आपरा स वे, लागे विणठी वात।
जल्दी जाय छुड़ायदो-सरे, सुण लकारानाथ जी ।।खग ।।२।।
पुष्पक नाम विमान वैठ के, गो किष्किन्धा ठेट।
यमराजा री सभी तरहसूँ, सटक निकाली टेटजी ।।खग ।।३।।
सूरजरज ने राज समर्पी, यम काढ्यो दुतकारी।
जा कहदे थूँ इन्द्रराय ने, आजा वे कर त्यारी जी ।।खग ।।४।।
हरि सूँ जाय भिडाई यमडे, दसमुख लका लीधी।
किष्किन्धा पुनि पुष्पक लीधो, इसडी करडी कीवी जी ।।खग ।।५।।
इन्द्र सुणी अति रीस भरायो, चढवा करी तयारी।
मन्त्रीसर वरजी ने राख्यो, यमको दिया निकारी जी ।।खग ।।६।।
पुर सगीत पटो दे करके, मन्त्री वात जमाई।
'मिश्री मुनि' कहे पुण्य अगाडी, चलती ना अकडाई जी ।।खग ।।७।।

ढाल-पूर्वकी

सूर्यरज किष्किन्धा थापै, ऋक्षरज रक्षपुरी आपै,
दसानन सारा दुख कापे, आपणा करके ही राखे,
लोग मुख भली-भली भाखे ।।राम० ।।२१।।
वधायो लंका जव आयो, सजन जन मोद घणो पायो,
सूर्यरज वाली सुत पायो, जोध वड जन्म्यो जयकारी,
महर्धिक मोटो वलधारी ।।राम० २२।।

शिखरिणी-छन्द

पढी विद्या सारी प्रवलमति जी को विमल है।
प्रभू आज्ञाधारी नियम दृड पाले सघन वे ।।
समुद्रान्ते जारी प्रतिदिवश घूमे इल परे[1]।
जमी ऐसी शका सवल नर पावो शिर घरे ।।१।।

दोहा

लघु भ्राता सुग्रीव है, चपल सुचारु धीय।
सिंह शार्दूल तणी परे, विचरे वीर अवीह[2] ।।१।।

---

१ भूमि पर · तट पर २ निर्भय

सुप्रभा इक वेनड़ी, गुणवल्ली गज-गेलि।
क्षीण-कटी, चख झख[1] सुभग, रूपे रूपारेल ॥२॥

ढाल-पूर्व

रक्षरज हरी कान्ता नारी, पुत्र भे नल रु नील ज्हारी,
रक्षपुर रजधानी ज्हाँरी, सूररज वाली नृप थापै,
दीख ले कर्मों ने कापे ॥राम० ॥२३॥

ढाल १२ मी ॥तर्ज—हाँ सगीजी ने पेड़ा भावे०॥

हाँ दसानन नृप दिल दरियो, अपने कुल को उज्ज्वल करियो।
डरियो नहि यमराज से भलपन सूँ भरियो रे ॥द० ॥टेर॥
मेरु गिरि खेलन हित जावे, इत खर दूषण लका आवे।
शूर्पनखा अपहरी सभी भय दिल से हरियो रे ॥द० ॥१॥

दोहा

खर विद्याधर एकदा, नभगति बैठ विमान।
जाता था वह कार्यवश नजर पडी उद्यान ॥१॥
उसमे सुन्दर महल की—छत्त पर रावण बैन।
खेल रही अति खात से, खग निरखी निज नैन ॥२॥

चद्रायणा

खगचर यान उतार आया आराम मे।
अन्योऽन्यविलोक व्यथितभये काम मे।
लेकर कन्या ताम विद्याधर, दड वडे।
अन्तेपुर मे ताम पहुँच गये स्वर वडे।

ढाल १२ मी ॥ तर्ज—हाँ संगीजी ने पेड़ा भावैं० ॥

चन्द्रोदर रविरज नृप नन्दन, लंक पयाला को अभिवन्दन।
खर राजा उत जाय अचानक उनसे लडियो रे ॥द० ॥२॥
उसको मार राज निज थाप्यो, अनुराधा ने दियो रडापो।
गा वन जायो पुत्र कन्ना करके परवरियो रे ॥द० ॥३॥
सुणी दशानन दल बल चढियो, मन्दोदरि वर्ज्या उण विरियो।
बहिन दीवी परणाय आय वो पावां पडियो रे ॥द० ॥४॥

---

[1] मीन के समान नयन

सेवत चवदा सहस विद्याधर, भ्राता त्रय खर दूषण त्रीशर ।
लंक पयाला राज करे सेवा दसमुख अनुसरियो रे ॥द० ॥५॥
वीर विराध चन्द्रोदर वारो, चन्द्रनगर वन मे वसनारो ।
वैर विरोध न कोपियो—रगड रढियालो रे ॥द० ॥६॥
इक सरदार भिडाई भिलती, वाली नृप नावे है गलती ।
ढलती जमगी वात दशानन सुन परजलियो रे ॥द० ॥७॥

ढाल १३ मी ॥तर्ज—मांड॥

दूत पठायो शीघ्र ही रे, वाली नृप के पास ।
क्यो नहि आवो सेवा मे इत, मन की दो परकास हो ॥१॥
मत भूलो वातो, पूरव खातो, हाथो विगडे वात ॥टेर॥
श्रीकण्ठ राजा पूर्वज थारा, कीर्तिधवल लकेश ।
तिणथी मालिक सेवक केरी, चाले रीत हमेश हो ॥म० ॥२॥
अब अभिमान चलेगो नांही, पूरो लीजो सोच ।
जेम मानोगे तेम मनासूं, पूरी म्हारी पोंच हो ॥म० ॥३॥
आयो दूत उतावलो रे, कपिपति के दरबार ।
ठाट अणूतो देखियो रे, झुक-झुक कीध जुहार हो ॥म० ॥४॥
वाली पूछे महाराजा के, वर्ते क्षेम कल्याण ।
सो कहे मुनिसुव्रत स्वामि प्रसादे, आणंद है महिराण हो ॥म० ॥५॥
एक कमी, नहि आप पधारो, सेवा मे श्रीमान् ।
इतरो वेगो भूल गया किम, आगे रो अवसान हो ॥म० ॥६॥
खरी वात है दूत तिहारी, वो घर यो घर एक ।
प्रेम प्रवाह पुराणो चाले, इण मे मीन न मेख हो ॥म० ॥७॥
देव, गुरू अरु धर्म सिवा तो, मैं न नमाऊँ शीश ।
इण कारण सू मैं नहि आयो, रखे करे नृप रीस हो ॥म० ॥८॥
धणी—चाकर री वातो झूठी, साचो मित्राचार ।
'मिश्री' मधुर-पणा सूं कहिजे, वना रहै व्यवहार हो ॥म० ॥९॥

दोहा

दूत जाय दाखी सयल, वाकी राखी नांय ।
एक तणी इकवीस ही, मिथ्या दिवी मिलाय ॥१॥
पृथ्वीपति प्रजल्यो प्रवल, जा पाछो कह देह ।
आ अकड़ाई थाहरी, खरी मिलासूं खेह ॥२॥

ढाल १४ मी ॥तर्ज—कांइ रे मिजाज करे रसिया०॥

काइ रे मिजाज करे अणहोतो, ओद किसी है जाणू सो तो ॥टेर॥
वाप पड्यो थो कैद के मांही, उणने आय छुडायो मैं तो ॥का० ॥१॥
जवरो आज वण्यो है टणको, म्हारा सूं टेडो हाँ वेतो ॥का० ॥२॥
सीधी तरह से अव आजावो, नहितर हेत मे पडसी रेतो ॥का० ॥३॥
नियम तणा नखरा सव जाणूं, घरविध जाण कहलायो मैं तो ॥का० ॥४॥
राइ भरोसे चावे मत मिरचो, मूंडो वलेला राखजे चेतो ॥कां० ॥५॥
कडवा वचन सभा मे भाख्या, दूत जरा नहिं डरप्यो केहतो ॥का० ॥६॥
'मिश्रि' कहे कद सुणवा वालो, नृप वाली नहिं कायर एतो ॥का० ॥७॥

चन्द्रायणा—छन्द

बके दूत क्या वोल ढोल फूटा जिसो।
दसमुख के मनमाय जोम छायो इसो॥
कालो जाण भुजग मूपक मत मानजे।
राख्यो च्हावे मान आगे मत ताणजे॥१॥

॥ ढाल १५मी—तर्ज-ना छेड़ो गाली दूंगी रे० ॥

मत छेडे मैं हूं वेडो रे, मरणे को तेड़ो मान ॥टेर॥
मैं भली वात कहलाई, नहि समज्यो उणरे माही,—
क्यो लकड वण्यो है एड़ो रे ॥म०॥१॥
मैं लोक-लाज सूं लाजूं, कँहि प्रेम विगड़सी काजू,—
सम्वन्ध घणो है नेड़ो रे ॥म०॥२॥
हा ! वात वणे ना जोगी, दुनियो मे हांसी होगी,—
दुश्मन करतेसी केडो रे ॥म०॥३॥
नहीं-माने तो आजाना, पुरसूला पूरसल खाना,—
करदेसूं सभी निवेडो रे ॥म०॥४॥
धक्का दे दूत निकारो, कर तीला पग, मुख कारो,—
मैं शार्दूलसिंह, नहि भेडो रे ॥म०॥५॥
क्या उपकार गिणाया, यह दोतर्फा चलि आया,—
है नहीं आजको मेडो रे ॥म०॥६॥
'मिश्री' अव तणगी काठी, जा दूत पटाई पाटी,—
सिरोपाव देयलो सेरो रे ॥म०॥७॥

ढाल—मूलगी

चढाई दशमुख कर डारी, भ्रात दो और फोज सारी,—
वातो रजवाडो विस्तारी, लकपति किष्किन्धा चढियो,—
देखवा मेलो ही मँढियो ॥राम०॥२४॥
वाली नृप आयो मैदाने, घुरे है चहरे सँदाने,
देवता आया देखाने, देखोला किसो जग थासी,—
आखिरी फतै कौन पासी ॥राम०॥२५॥
विभीषण कुंभकर्ण भाई, वाली से बोल्या अकड़ाई,
आवतो शर्म नही आई, मालिक से सामनो करणो,—
दीसे है आयो तुम मरणो ॥राम०॥२६॥

ढाल १६ मी ॥ तर्ज—ख्याल की० ॥

मत चूको लाला, होस राखी ने मीखो बोलणो ॥टेर॥
आछो नहिं हे इसो बोलणो, किसो घराणो थारो।
रचमात्र भी लका मेती, नहिं झगडो है म्हारो ॥
नहिं झगडो है म्हारो, दशानन साथ मे।
आंट पडी ना छोडूँ मैं लख वात रे ॥मत०॥१॥
नाहक लोक मरावणा सरे, म्हारी मरजी नाय।
द्वन्द युद्ध करणो मैं चावूँ, नृप ने देवो सुणाय।
नृप ने देवो सुणाय मान वे जावसी।
लड़वारो पिण मजो खूव ही आवसी ॥मत०॥२॥
हो शर्मिन्दा दोनो भाई, नृप ने जाय सुनाई।
हाँ भर आय गयो मैदाने, भर्‌यो रीस के माही ॥
भर्‌यो रीस के माहि, वचन कहे वावरा।
वाली कहे तिणवेर हुकम जोरावरा ॥मत०॥३॥
सिहनाद कर बोल्यो वाली, नर, सुर रहि जो साखी।
झगडारी इत वात नही है, जरा न नाइतफाकी ॥
जरा न नाइतफाकी, हुकम है रावनो।
दोनो को वल किसो, आज वतलावनो ॥मत०॥४॥
दोनो ही श्रावक भला सरे, दोनों ही रणधीर।
लोक वचाया मरणनूँ सरे, जाणे पराई पीर ॥

ढाल १४ मी ॥तर्ज—कांइ रे मिजाज करे रसिया०॥

काइ रे मिजाज करे अणहोतो, ओद किसी है जाणूं सो तो ॥टेर॥
वाप पड्यो थो कैद के माही, उणने आय छुडायो मैं तो ॥का० ॥१॥
जबरो आज वण्यो है टणको, म्हारा सू टेडो हाँ वेतो ॥का० ॥२॥
सीधी तरह से अब आजावो, नहितर हेत मे पडसी रेतो ॥कां० ॥३॥
नियम तणा नखरा सव जाणूं, घरविध जाण कहलायो मैं तो ॥का० ॥४॥
राइ भरोसे चावे मत मिरचो, मूंडो वलेला राखजे चेतो ॥का० ॥५॥
कडवा वचन सभा मे भाख्या, दूत जरा नहिं डरप्यो केहतो ॥कां० ॥६॥
'मिश्रि' कहे कद सुणवा वालो, नृप वाली नहिं कायर एतो ॥का० ॥७॥

चन्द्रायणा—छन्द

वके दूत क्या वोल ढोल फूटा जिसो ।
दसमुख के मनमांय जोम छायो इसो ॥
कालो जाण भुजग मूपक मत मानजे ।
राख्यो च्हावे मान आगे मत ताणजे ॥१॥

॥ ढाल १५मी—तर्ज-ना छेड़ो गाली दूंगी रे० ॥

मत छेडे मैं हूं वेड़ो रे, मरणे को तेड़ो मान ॥टेर॥
मैं भली वात कहलाई, नहि समज्यो उणरे मांही,—
क्यो लकड वण्यो है एडो रे ॥म०॥१॥
मैं लोक-लाज सूं लाजूं, कहिं प्रेम विगडसी काजू,—
सम्बन्ध घणो है नेडो रे ॥म०॥२॥
हा ! वात वणे ना जोगी, दुनियो मे हाँसी होगी,—
दुश्मन करतोसी केडो रे ॥म०॥३॥
नही-माने तो आजाना, पुरमूला पूरसल खाना,—
करदेसूं सभी निवेडो रे ॥म०॥४॥
धक्का दे दूत निकारो, कर लीला पग, मुख कारो,—
मैं शार्दूलसिंह, नहिं भेड़ो रे ॥म०॥५॥
क्या उपकार गिणाया, यह दोतर्फा चलि आया,—
है नही आजको गेडो रे ॥म०॥६॥
'मिश्री' अब तणगी काठी, जा दूत पटाई पाटी,—
सिरोपाव देखलो मेरो रे ॥म०॥७॥

ढाल—मूलनी

चढाई दशमुख कर डारी, भ्रात दो और फोज सारी,—
वातो रजवाडो विस्तारी, लंकपति किष्किन्धा चढियो,—
देखवा मेलो ही मँढियो ॥राम०॥२४॥

वाली नृप आयो मैदाने, धुरे है चहरे सेदाने,
देवता आया देखाने, देखोला किसो जग थासी,—
आखिरी फतै कौन पासी ॥राम०॥२५॥

विभीषण कुंभकर्ण भाई, वाली से बोल्या अकडाई,
आवतो शर्म नही आई, मालिक से सामनो करणो,—
दीसे है आयो तुम मरणो ॥राम०॥२६॥

ढाल १६ मी ॥ तर्ज—ख्याल की० ॥

मत चूको लाला, होस राखी ने सीखो बोलणो ॥टेर॥

आछो नहि है इसो बोलणो, किसो घराणो थारो।
रंचमात्र भी लंका सेती, नहि झगडो है म्हारो ॥
नहिं झगड़ो है म्हारो, दशानन साथ में।
आँट पडी ना छोडूँ मैं लख वात रे ॥मत०॥१॥

नाहक लोक मरावणा सरे, म्हारी मरजी नाय।
द्वन्द युद्ध करणो मैं चावूं, नृप ने देवो सुणाय।
नृप ने देवो सुणाय मान वे जावसी।
लडवारो पिण मजो खूब ही आवसी ॥मत०॥२॥

हो शर्मिन्दा दोनो भाई, नृप ने जाय सुनाई।
हाँ भर आय गयो मैदाने, भर्‌यो रीस के मांही ॥
भर्‌यो रीस के माहि, वचन कहे वावरा।
वाली कहे तिणवेर हुकम जोरावरा ॥मत०॥३॥

सिहनाद कर वोल्यो वाली, नर, सुर रहि जो साखी।
झगडारी इत वात नही है, जरा न नाइतफाकी ॥
जरा न नाइतफाकी, हुकम है रावनो।
दोनों को वल किनो, आज वतलावनो ॥मत०॥४॥

दोनो ही श्रावक भगा सरे, दोनो ही रणधीर।
लोक वचाया मरणसूँ मरे, जाणे पराई पीर ॥

जाणे पराई पीर, वीर विख्यात है।
देखोला दिलखोल दिखासी हाथ ए ॥मत०॥५॥

विन्ध्याचलना हाथिया सरे, महा मदान्धी दोय।
ताविध दशमुख वाली दोनो, भिड़ग्या आपस मोय॥
भिड़ग्या आपसमोय, टले नहिं टालिया।
महायुद्ध री झाल, झिले किम झालिया ॥मत०॥६॥

विद्याधर सुरवर कइ आया, दोनो दल रा वीर।
निरख रह्या आपस मे वर्षे, दारुण तीक्षण तीर॥
दारुण तीक्षण तीर, शस्त्र केइ भांत रा।
उडगण उडे अपार, पडे नहि आंतरा ॥मत०॥७॥

कभी अष्टापद सिंह सलूना, कभी गरुड वनजावे।
सांड वणी आहुडता सागे, पन्नग वणी फुङ्कारे॥
पन्नग वणी फुकारे, अड्या है आकरा।
करे चोट पर चोट, रुप्या ज्यो भाखरा ॥मत० ८॥

विद्या दिखाई भांति-भांति री, लोग अचंभो लावे।
किसाक जननी जोध जिण्या है, हट्या न हटवा च्हावे॥
हट्या न हटवा च्हावे, दशानन हेरियो।
वड़ी करी मैं भूल, इसे क्यूं छेडियो ॥मत०॥९॥

महावलवन्तो है मयमन्तो, सतवन्तो यह सूर।
विद्या तणो विकास सिन्धुवत्, अथवा सरिता-पूर॥
अथवा सरिता-पूर, कारी अव क्या लगे।
लाजे जननी दूध, यहां से यदि भगे ॥मत०॥१०॥

इतेक वाली आय आसनो, पकड काख मे घाले।
किदुकनी परे पीडियो सरे, लोग उभोडा भाले॥
लोग उभोडा भाले, सात दधि फेरियो।
सूरत रोवणी देख, हाथ मे टेरियो ॥मत०॥११॥

दोहा

जा, रोवणिया! छोडियो, भूल दशानन नाम।
अवसे रावण जाणजो, वालीहंदा काम ॥१॥

ढाल १७ मी ।। तर्ज—बाजरा री पाणत करतो० ।।

वाललीला करतो काई जोर आयो क ।
डतरो कांइ तूं घवरायो थारो काइ खायो ।।टेर।।
थारा सूं नहीं वैर म्हारे, पेला चेतायो ।
पिण केणो नी मान्यो, जिणरो फल पायो ।।१।।
आज तो विराजो अठै, काल जाजो क ।
कांइ भेद है आपो मे, जग मे एक वाजो ।।२।।
सुग्रीव ने बुलाई राज्य दियो वाने क ।
मैं लेऊँला सजम, नही रहणो म्हाने ।।३।।
उभोडा छिटकायो, मुनिराज वणगा क ।
सवने लिया रे खमाय, समभाव झिलगा ।।४।।
रावण ने सुप्रभा कपिपति व्याही क ।
वडा ठाट सूं पांचाया, लका माही ।।५।।
वाली मुनि साधना मे, घोर जूंजै क ।
इण करणी अगाड़ी, नर सुर पूजे ।।६।।
धन्य धन्य वालो मुनि, तप धार्यो क ।
एतो लब्धिवन्त हुवा, निज काज सार्यो ।।७।।
अष्टापद ऊपरे, शुभ ध्यान ठायो क ।
ज्यां ने आत्मा शोधन मे, आनन्द आयो ।।८।।
नित्यालोक पुर, नृप तणी वाई क ।
वा तो रत्नावली नाम मे, प्रसिद्धी पाई ।।९।।
रावण परणन जावे, यान वैसी क ।
वो तो चालतो रुकयो रे यान, हुई कैसी ।।१०।।
वाली मुनि देख्या, जव नीचो आयो क ।
आयो आयो रे अणमाप उन्हें,—गुस्सो आयो ।।११।।
'मिश्री मुनि' कहे, खाली वैर राने क ।
देखलो जिणीरा कांइ,—फल चाखे ।।१२।।

ढाल—पूर्वकी

अधो शिर दे पर्वत पाडे, शैल पिण हिलियो तिणवारे ।
वाली मुनि अँगूठो डारे, त्रास कर मुनि शरणे आयो,—
खमो अपराध शीस न्हायो ।।राम०।।२७।।

भक्ति मे होग्यो तल्लीन, वाली-मुनि केवल ले-लीन,
इन्द्रादिक आये समीचीन, केवल को मोच्छव करवायो,—
वाली-मुनि शिवपुर ही पायो ॥राम०॥२८॥

रावण की भगती नीहारी, श्री धरणेन्द्र सु-विचारी,
अमोघा विजय-शक्ति भारी, अडतालिस सेस सुरी सेवे,—
रावण को इन्द्रराज देवे ॥राम०॥२९॥

ढाल १८ मी ॥ तर्ज—मनवा समजले र वीर० ॥

मानव तृष्णा दे तूँ छोड, मानव तृष्णा दे तूँ छोड ।
अणलिखियो पावे नही, कर कितना ही कोड ॥टेर॥

रावण के जो लिखा भाग्य मे, अणसोच्यो मिल जात ।
उसकी होड़ करे सो मूरख, फिर दे शिर रोवे हाथ ॥मा०॥१॥

गिरि वैताढ्य ज्योतिपुर राजा, ज्वलनसिह गुण-धाम ।
श्रीमती राणी के उर उपनी, तारा सुता सुनाम ॥मा०॥२॥

अद्भुत रूप गुणो कर भूषित, जैन तत्त्व की जाण ।
उण सारीखी मिले न दूजी, कितनी करलो छाण ॥मा०॥३॥

साहसगति चक्राक तणो सुत, विद्याधर विख्यात ।
तारा री वह करी याचना, सम-कुल, सम-धन जात ॥मा०॥४॥

वानरपति सुग्रीव ऊपरे, तारा निश्चय कीध ।
राणी-द्वारा राजा जाणी, सचिव सल्हा ले लीध ।मा०॥५॥

तारा दीधी वानरपति ने, धूमधाम कर व्याह ।
तारा उदरे ऊपना सरे, अगज दो सुखदाय ॥मा०॥६॥

जयानन्द अगद ये आछा, दीठो आवे दाय ।
चन्द्ररश्मि वाली-सुत वाको, वाली जिसो दिखाय ॥मा०॥७॥

साहसगति रोवे घणो सरे, झूरे रात ने दीह ।
दाव उपाव सोचे दिल माही, कर्म तणी ए लीह ॥मा०॥८॥

रूपपरावर्तन विद्या को, हेमवन्त-गिरि जाय ।
विद्या-साधन करे एक चित, तारा की तृष्णाय ॥९॥

नृप सुग्रीव और नवापति, सुख से कर रहे राज ।
"मिश्रीमुनि" दिग्विजय करण अब, रावण सजियो साज ॥१०॥

ढाल १६ मी ॥ तर्ज—गंगश्याम की महिमा अपार है ॥

पुण्यों को प्रबल प्रकाश, आशा सकल फलै ॥टेर॥

भावो की है जोड मजारी, और सहस विद्या रो धारी।

सेना को बल खास ॥आशा०॥१॥

उदित सूर्य सम मुदित होय के, ज्योतिषि द्वारा मुहुर्त जोय के।

चढ़िये सह-उल्लास ॥आशा०॥२॥

लंकपयाला पहले आयो, खर दूषण ने ताम वधायो।

आज्ञा मानी ने सुविलास ॥आशा०॥३॥

चवदा-सहस्र विद्याधर लारे, चढग्या है मालिक शिर धारे।

डेरा किष्किन्धा जास ॥आशा०॥४॥

श्री सुग्रीव देय मिजमानी, तीस अक्षोहणी ले सेनानी।

लार हुवो गुणरास ॥आशा०॥५॥

नदी नर्मदा पास पडाव, सभा बणा के बैठो राव।

नदी जल बाध्यो तास ॥आशा०॥६॥

सारो साज डूबण की त्यारी, करो खबर है कौन अनारी।

तद दास करी अरदास ॥आशा०॥७॥

माहिष्मति सहस्रांश भूपती, सहस भूप पै आण जु वहती।

राणी सहस्र आवास ॥आशा०॥८॥

चन्द्रायणा

जलक्रीडा त्रिय-नाथ बाँध जल नित करे।

दोय लाख सरदार पहरे पै वे खडे॥

पञ्चेन्द्रिय सुख-भोग भोगवै मन-धरी।

किसकी नहिं है शक्त अनड पदवी वरी॥१॥

ढाल—मूल की

फौजो नर रावण का जावे, फोडदो पाला उन पावे।

देत तकलीफ न सर्मावे, श्रवण कर सुभट सभी आगा,—

सामने लडवा ही लागा ॥राम०॥३०॥

लडाई आपस में माची, दशानन फौज घिरी पाछी,

ऊठियो कपिपति रण-राची, बाँधकर रावण पै लायो,—

इते मुनि गगनागण आयो ॥राम०॥३१॥

ढाल २० मी ।। तर्ज—मीठो खरबूजो० ।।

मुनि उपदेश सुनावियो, छोडो कुटिल कषाय,
भव-भव दुखकारी ।
नहीं इण मे कुछ भी सार, भव-भव दुखदाई ।।टेर।।
स्व-धर्मी दोनो ही पक्का, फिर क्यो वैर विरोध ।।भ०।।
रावण वन्दी छोडिया, पाया परम प्रवोध ।।भ०।।१।।
सहस्रार-सुत मुनिवर केरो, पायो विमल वैराग ।।भ०।।
राज भलाई पुत्र ने, धर्‌यो सजम सूं राग ।।भ०।।२।।
अन्यरण्य अजोध्या नृप सूं, वहुलो मित्राचार ।।भ०।।
मास दोढ नो दशरथ राजा—भणी दियो अधिकार ।।भ०।।३।।
दोनो आतम-पथ उजवाले, रावण मनाई आण ।।भ०।।
इतेक नारद आवियो, वदन लोहूलुहान ।।भ०।।४।।
रावण पूछ्यानन्तर भाखे, नारद-ऋषी महान ।।भ०।।
राजनगर नो राजियो, नामे मरुत अज्ञान ।।भ०।।५।।
जीवत जीव मारे यज्ञ अन्दर, मैं वर्ज्यो स-सनेह ।।भ०।।
द्विज कोप्या मार्‌यो मुज गहरो, मिथ्या पूरित तेह ।।भ०।।६।।
रावण भाखे मत घवरावो, ले लूंगो सव वैर ।।भ०।।
आयो राजपुरे सही, भेज्यो दूत अवेर ।।भ०।।७।।
राजा आयो सामने, मिलतो दीधो मान ।।भ०।।
क्यो करते हो हिंसा इतनी, यह अधर्म पिछान ।।भ०।।८।।
अज्ञानी विप्रो ने मार्‌या, खाल उधेड़ी ताम ।।भ०।।
जीव न होमो यज्ञो माही, सुधरे थारो काम ।।भ०।।९।।
सव पूज्या पांवो पड्या, मोटी सभा भराय ।।भ०।।
कव से यह अकृत चला, 'मिश्री' नारद सुनाय[1] ।।भ०।।१०।।

दोहा

क्षीरकदम्वक पुत्र था, पर्वत अति पापीय ।
तिणथी परम्परा चल पडी, खाट्यो पाप अतीय ।।१।।

---

१ नारद ने हिंसक यज्ञों की उत्पत्ति की कथा सुनाई

ढाल २१ मी ॥ तर्ज—सलूणा० ॥

सुक्तिवती नगरी भली, पाठक क्षीरकदव, सलूणा ।
नारद वसु-पर्वत त्रिहूँ, पठन करत अदव, सलूणा ॥
मुणिये यज्ञ री वारता ॥टेर॥

जघाचारण मुनिवरू, उतर्‌या गगन थी दोय ॥स०॥
पाठक उठ वन्दन कियो, जावत बोल्या सोय ॥स०॥२॥
पण मय शिशु के मायने, पढना मे त्रय तेज ॥स०॥
नर्क-गामि युग एक है, स्वर्ग-गामि सु हेज ॥स०॥३॥
चमक्यो पाठक गुण करी, मुनिवर तो गये चाल ॥स०॥
निज बुद्धी सूँ सोचने, कृत्रिम कुरकट ताल ॥स०॥४॥
तीनो ने इक इक दिया, फिर दी आज्ञा एम ॥स०॥
जित कोई देखे नही, हनन करो उन टेम ॥स०॥५॥
ले चाल्या वन गिरि गुहा, आया दोय विनास ॥स०॥
सध्या तक आयो घरे, नारद वदन उदास ॥स०॥६॥
ला सूँप्यो ज्यूँ को तिहूँ, पूछै पाठक ताम ॥स०॥
क्यूँ नही मार्‌यो, सो कहे, इसो मिल्यो नहिं ठाम ॥स०॥७॥
क्यो नहिं मिलियो वह वदे, म्हूँ देखूँ हरवार ॥स०॥
अनन्तज्ञानी ऊपर लखे, तिण कारण हियधार ॥स०॥८॥
'मिश्रीमुनि' पाठक लख्यो, धन्य धन्य मुनिराज ॥स०॥
अध्यापन को छोडगे, सार्‌या आतमकाज ॥स०॥१०॥

ढाल २२ मी ॥ तर्ज—घुंसा री० ॥

हिंसा फैली रे राजा सुन लेना, हिंसा फैलीरे० ॥टेर॥
वसु कुँवर निज राज संभाल्यो, नारद दीक्षा ले चाल्यो ॥हिं०॥१॥
न्याय करे अछलक वसु राजा, इक दिन भील सुनाई आके ॥हिं०॥
स्फटिक-शिला[1] इक अधर अरण्य मे, मैं देखी शर[2] दीयो मारी ॥हिं०॥२॥
पढि नीची तत्क्षण ही, डरतो अरज करी आई ॥हिं०॥३॥
नृप उत जा पग स्वच्छ प्रक्षाली नजर अपने पाई ॥हिं०॥४॥
लायो नृप तिणपर सिंहासन धरत अधर वह ठहराई ॥हिं०॥५॥

---

१. स्फटिक पारदर्शी शिला २. बाण

देवयोग सब मालुम होता, जिसमें वढी है प्रभुताई ॥हिं०॥६॥
क्षीर-नीरवत् न्याय निवेडे, महिमा दुनियो मे छाई ॥हिं०॥७॥
पर्वत अध्यापन आदरियो, प्रसिद्ध हुई है पडिताई ॥हिं०॥८॥
वर्षान्तर नारद-मुनि मिलवा, आय गयो पर्वत ताई ॥हिं०॥९॥
दे सम्मान बिठाया पास मे, 'मिश्री मुनि' गयो हर्षाई ॥हिं०॥१०॥

कवित्त

विद्यार्थी आकर पूछ्यो अर्थ अजैर्यष्टव्यम्—
वालो के दौरान बीच मिथ्या अर्थ के-डार्यो।
तीन वर्ष अजापुत्र यज्ञ मे हवन करो—
नारद कहत तद अलिक तूं उचार्यो॥
अजनमा व्रीही होमो अर्थ कहा गुरुदेव—
लायो हो कठासूं नयो किणसेती तूं धार्यो।
पर्वत ताण बैठो यो, अर्थ सच्चा कहा मैंने
आप भूल गये अर्थ, उपालभ दे डार्यो ॥१॥

दोहा

घटी न युक्ती गहन है, पटी पढी इक साथ।
नटियो मैं मानू नही, हठी छोड हट वात ॥१॥

ढाल २३ मी ॥तर्ज—पनजी मूँढे बोल०॥

अर्थ तुम्हारो रे, नही शास्त्रज सम्मत करो सुधारो रे ॥अ० ॥टेर॥
हिंसा मे मत धर्म निहारो, ज्यो पूनम मे कारो रे।
कुण देख्यो बतलादे म्होने, इमरत खारो रे ॥अ० ॥१॥
क्या समझो ऋषि आप वेद मे, थारो पंथ निरालो रे।
झूठो व्हूँ तो जीभ कटादू, व्यर्थ झिकालो रे ॥अ० ॥२॥
नारद कहे झूठ होवे तो, वसू भूप पै चालो रे।
तीनो पढिया साथ करे कैसे गोटालो रे ॥अ० ॥३॥
निर्णय काल सभा मे करस्यो, दोनो गये निज थानो रे।
पर्वत खिन्नानन घर आयो, मात पूछे क्या ध्यानो रे ॥अ० ॥४॥
बात सुणत माता यूं बोली, झूठी क्यो पक्कामी रे।
अनन्तज्ञानी का चोर बने, अर जीव गमासी रे ॥अ० ॥५॥

ज्यूं ज्यूं कर तूं मात बचादे, अब छोडी नहिं जावे रे।
पुत्र-स्नेह मे प्रेरित माता, नृप पै आवे रे ॥अ० ॥६॥
दे सन्मान राजाजी पूछै, केम पधार्या माजी रे।
कहो वही मैं करसू 'मिश्री' भइ मन राजी रे ॥अ० ॥७॥

चन्द्रायणा—छन्द

चीत्यो सो विरतंत सुणी वसु बोलियो,
झूठो पर्वत खास हिये नहिं तोलियो।
मैं किम बोलूं झूठ माताजी ! सोचिये,
डूबूं कालीधार आप आलोचिये ॥१॥

ढाल २४ मी ॥तर्ज—इण सरवरिया री पाल०॥

इम किम बोलो आप, वचन म्होने दियो, मोरा लाल वचन०।
भूलो मत भोपाल, कवन जो थां कियो, मोरा० ॥१॥
माता रो कुल खोय, मान किम दीजिये, मोरा०।
ज्यूं-त्यूं कर महिपाल ! एतो जस लीजिये, मोरा० ॥२॥
धर्म सकट वसु राज, चिन्तातुर हो गयो, मोरा०।
पृष्ठ तटी अग्र बाघ, न्याय ए पो-गयो, मोरा० ॥३॥
प्रात सभा के माय, देव नर अति घणा, मोरा०।
मिलिया राणोराण, होनी क्या सब भणा, मोरा० ॥४॥
नारद पर्वत उभय, अर्थ निज निज कहा, मोरा०।
निर्णय दो नरराज, गुरु से जो गहा, मोरा० ॥५॥
वसु निर्णय दियो मिश्र, भाषा से तत्क्षणे, मोरा०।
दोनो होते अर्थ, अनर्थ इनको भणे, मोरा० ॥६॥
कुपित भये तब देव, सिंहासन पाडियो, मोरा०।
गयो नर्क-गति भूप, पर्वत ने ताडियो, मोरा० ॥७॥
तिण दिन से यह जीव हिंसा मग चालियो, मोरा०।
मेनन मिथ्यावाद, उवट पथ डालियो, मोरा० ॥८॥

दोहा

मिथ्या-मत मर्दन कियो, दया धर्म दीपाय।
रावण जस लीधो प्रबल, नारदजी हर्षाय ॥१॥
कनक-प्रभा नृप-कन्यका, रावण ने परणाय।
मारग माहे चालियो, मथुरा पहुंच्यो आय ॥२॥

॥ढाल २५ मी ॥ तर्ज—सुहागन जायो ढोकरो०॥

हरिवाहन उत राजियो, सुखकारी रे।
पुत्र मधू मनोहार, लाल, जयकारी रे॥
रावण रे पग लागियो, मनलाई रे।
कर भेट त्रिशूल उदार, महा भयदाई रे ॥१॥
दशमुख दाखै शस्त्र यह, कित पायो रे।
मधु भाखे मृदु वयण, चमरेन्द्र दिवायो रे ॥२॥
मित्र मेरे पूर्व भव तणो, सो दाख्यो रे।
भूलो नही वो प्रेम, हृदय मे राख्यो रे ॥३॥
ऐरवय क्षेत्र शतद्वार पुर, सुखदाई रे।
राय सुमित्र सुभग, प्रभव मित्राई रे ॥४॥
कला पढ्या गुरु पास मे, वा प्रीति वँधाई रे।
एक दिन खेलन चालिया, अटवी के मांही रे ॥५॥
मग भूला पल्ली-पती, घर लायो रे।
वनमाला अति लाडली यौवन वय पायो रे ॥६॥
सुमित्र भणी परणाय दी, ले शीख सिवायो रे।
प्रभव अति उदासियो, नृपती वतलायो रे ॥७॥

शिखरिणी छन्द

उदासी क्यो ऐसी वदन तुझ लूगा पड गया।
वतादे हो जैसी, मगर वह लज्जा-युत भया॥
लगाता क्यो देरी शपथ अव मेरी सच कहो।
डरो ना, क्या ऐरी अव तक छिपाता किण मुदे ॥१॥

॥ढाल २६ मी ॥तर्ज—घुउलो घूंमेला जी घूंमेला०॥

तू कहदे मन री वात, काज तुज वनजासी रे, वन जासी।
तो मे अन्तर नहि तिलमात, हृदय कलि खिलजासी रे खिलजासी ॥टेर॥
शकित वात कही दिलवर मे, तव-तिय हित मेरा मन तरसे।
कुछ भी समजो भ्रात, हृदय को परकाशी रे, परकाशी ॥१॥
भूप कहे क्या वात वडी है, तेरे चित मे जाम चढी है।
तज चिन्ता का पराल, रात को आजासी रे, आजासी ॥२॥
नृप महलो आकर कहे वाणी, तू पतिव्रता परम सयानी।
जावो मित्र के महल आज्ञा शिर चढवासी रे, चढवासी ॥३॥

सुणत पाण वा हुई रवाने, पहुँच गई नृप मित्र के स्थाने।
देखी गो दहलाय मित्रता है खासी रे, है खासी ॥४॥
धन्य धन्य है मित्रराज को, मो-हित तजदी गेह लाज को।
है मोकूं धिक्कार मानवता मुज नासी जी मुज-नासी ॥५॥
ऊठ कहे माताजी आवो, चरण-धूल दे सफल करावो।
मैं हूँ नीच निराट, कलंक क्या धुपजासी जी, धुपजासी ॥६॥
यो कहि निज शिर छेदन लागो, छिप्यो भूप द्रुत आयो आघो।
छीन लीवी तरवार, कायर ओ मरजासी जी, मरजासी ॥७॥
मित्र प्रशंसा कर, ले नारी, महल गयो प्रीती विस्तारी।
कालान्तर ले दीख स्वर्ग गो सुखरासी जी, सुखरासी ॥८॥
देव ईसान हो मधु अवतरियो, तापस बन पर भव संचरियो।
भवान्तर चमरेन्द्र वात यह परकासी जी, परकासी ॥९॥
यो त्रिशूल योजन द्वय संहस, अरि शिर लाय करे कर पेश।
रावण पाय प्रमोद मनोरमा, परणादी जी, परणादी ॥१०॥
आण मनाई साथे लीनो, पुर दुर्लंघ्य डेरो आ दीनो।
'मिश्री' वर्ष अठार बीतगे, छम्मासी जी छमासी ॥११॥

कवित्त

विकट असाली कोट पर्वत की ओट जैसे,—
चोट कौन करे आय प्राण आस छोर के।
बड़े बड़े वसुनाथ धरा को धुजानहारे,—
आये किन्तु हार खाय गये घर दौर के॥
अहमेन्द्र बने नलकूबर आलीजे भूप,—
लेत हैं निशंक नींद शत्रु भय तोर के।
कपिनाथ विभीषण कुम्भकर्ण आदि सारे,—
हार खाय बैठे नृप पास कर जोर के॥१॥

छन्द—अडोल

गढ़नायक मन घबराय गयो मग-सालत कौतुक कैसो भयो।
यदि हाथ सनत्न के लोट परे मय, बीध कराया मे रेत रले ॥१॥
इतने मे राणी नल-कूबर की, उतरी है गगन मे अप्सर-सी।
कुम्भकर्णानुज से वात करी, मति देख समय स्वीराणी धरी ॥२॥

वह लौट गई मन आम भरी, निज भ्रात पै रावण रीस झरी।
पुरुषोत्तम पर-तिय केम चहै, तस चाह कियो बदनामि लहे ॥३॥
लहु भापे व्योपार हो जहेर तणो, विन खाये न होवत है मरणो।
यदि काम कडावण काज करे, फिर भी दश-आनन यों उचरे ॥४॥
यह वात भरी पूरण छल मे, शोभा तो तभी है करै बल से।
हाँ सत्य यही उपाय नही, याते आप रहो अब मौन गही ॥५॥
उपरम्भा उपस्थित आन खरी, आसालिक विद्या दीध परी।
पुनि चक्र सुदर्शन शस्त्र घने, सब सौपदिये विषया व्यसने ॥६॥
विद्या साधी उपाधि हरी सघरी, जद दूत भिजाय दियो नगरी।
नल-कूवर आय मैदान लड्यो, कपिनाथ तदा उत जाय भिड्यो ॥७॥
दुर्लंघ्यपति निज हार लखी, निज नारि पै जाय के अस्त्र चखी।
अधोशिर होय चवै चतुरा, शस्त्रास्त्र लिये मुझ से मगरा ॥८॥
फिर लौट रणांगण मेल कियो, दशकन्धर अति सन्मान दियो।
भगनी परताप यह काम वना, रहसी अहसान ओ नित्य वना ॥९॥
वहु प्रेम वढाय लियो सग मे, रथनूपुर जाय चढ्यो रग मे।
नृप इन्द्र वकार लियो तव ही, 'मुनि मिश्रि' यह ढाल सुचग कही ॥१०॥

ढाल—पूर्वकी

इन्द्र से दूत जाय दाखी, अगर तूँ रखता है नाकी,
जग मे दिखलादे-झाँकी, जरा मत मनमाही रखना,—
कायर हो नाहक ही छकना ॥राम०॥३२॥

दोहा

धस्यो दूत दलपति सभा, कसी कही कटु वात।
पुर वीट्यो क्या सोचता, क्यो न दिखावत हाथ ॥१॥
सहस्रार सुत इन्द्र को, समजायो एकान्त।
भूलकरी भिडजे मती, अरि-बल है सभ्रान्त ॥२॥

ढाल २७ मी ॥ तर्ज—सूरो ने लागे वचन रो ताजणो० ॥

बेटा वधारी तूँ सम्पदा, पूर्वज थी अधिको थारो नाम।
कुमणा नहि किंचित राखी राज मे, माने बड राजा भूप तमाम ॥१॥
नटनो नहि आछो, लागो हो न चीते मोटो राजवी ॥टेर॥

सहस्रों सूं सेवित सहस्रांस प्रति, जीत्यो अष्टापद लियो उठाय ।
मरुत गमायो मारो मारजनो, शक्ति अमोघा इन्द्र दिराय ॥ल०॥२॥
वैश्रमण ने यमराज तणो, गाल्यो मद काढ्या कूटी व्हार ।
जीत्यो नल कूंवर वातो मायने, वाली नेह लियो सजम भार ॥ल०॥३॥
सुग्रीव सरीखा सेवक बन गया, चारो दिशा मे एक ही धाक ।
तीनो ही खण्डरा माथे राजिया, विद्या बल पूरो चुस्त चलाक ॥ल०॥४॥
रूपवती तो प्यारी पुत्रिका, परणाई उनको आधो काट ।
जैसे अष्टापद पर्वत ने हणे, तोड़े पग निज को खोवे गाट ॥ल०॥५॥
मूंछो फेरी ने हरी हंस बोलियो, धन्य पिताजी आप विचार ।
मार्यो मैं व्हावूं किम थू पुत्रिका, वैर पूर्वलो दियो विसार ॥ल०॥६॥
जीतूं फिर जीतू-इणने पकडी ने न्हाखूं जेल मे ॥टेर॥
गाल्यो नहि मावित केणो मूलथी, दूत निज्र छी भाख्यो एम ।
राक मनावी बयो राजी हुवा, पिण नही मिलियो रोके जेम ॥ल०॥७॥
दल बल ने चढियो रेणू नभ चढी, डेरा तो दिया रण-स्थल जाय ।
'मिश्री मुनि' भाखे अवसर साधनो, विरला नरो रे माय ॥ल०॥८॥

ढाल २८ मी ॥तर्ज—मान न कीजे रे मानवो०॥

दोनो दल सिन्धू सारिखा, जोस भरियोरा नैण ।
बातो तोले रे मोटकी, फटबा काढे मुख-वेण ॥१॥
झगरो माच्यो रे जोर रो, नर सुर खेचर अनेक ।
देखो कुण जीते जंग मे, किणरी निभेला टेक ॥टेर॥
प्रथम सेनानी ऊठिया, वहे खारी तरवार ।
ऊठे बरणाटा बाण रा, सेल भाला अणपार ॥झ०॥२॥
गदा गुप्ति बन्दूक सूं, मुद्गर तोमर ने तीर ।
गोफण वाजे रे सोतरी, बर्षे घटा रो नीर ॥झ०॥३॥
सूर्य छायो दीसे नहीं, जोधा रोषा री जेष ।
आगे आवण मे आकरा, भूला सगपण सेण ॥झ०॥४॥
इन्द्र-सेनापति हारगो, नटियो आप सहित्गण ।
थर-थर धूजे रे मेदनी, गूंजे पर्वत असमान ॥झ०॥५॥
रावण सैना रण नाठने, जावे दहभुज-दण्ड ।
माला सनसना रे रून रा, तरता जावे नर-मुण्ड ॥झ०॥६॥

धायो विभीषण सामुहो, धायो कुम्भ कपिनाथ।
तदपि झाल्यो रे ना झिले, चाले चपला ज्यो हाथ ॥झ०॥७॥
कपिपति मुद्‌गर वाहियो, इन्द्र किया शत-खण्ड।
इसडो टणको नही जाणियो, गलियो सब को घमण्ड ॥झ०॥८॥
कुम्भकर्ण ने पाड़ियो, मार्‌यो गदा रे घाव।
चाप तोड्यो कपिराज रो, भूलो विभीषण भाव ॥झ०॥९॥
इन्द्र तीनो ने मारसी, राई रति ना फेर।
अडियो हेमाद्री सारिखो, नाचै नटवा ज्यो फेर ॥झ०॥१०॥
अमर पाछा ही ओसरे, रखे लगजासी फेट।
वाण पूगा है पूरज्यो, तम्बू रावटियो ठेट ॥झ०॥११॥
रावण - सेना मे खलवली, मचगी हाक हिलोर।
वेग वचावो आयने, हा ! हा ! लका शिरमोर ॥झ०॥१२॥
उठ्यो दशानन वेग सूँ, चढ़ियो करके सिहनाद।
सारी सेना ने पूठदे, आगे आयो अहलाद ॥झ०॥१३॥
इन्दर देखी ने वोलियो, कठै छिपियो रे जाय।
थागा थोगी काइ कर रह्यो, पौरुप दे नी दिखलाय ॥झ०॥१४॥
पौरुप देखेला माहरो, किणरी आखो सूं मूढ।
इतरो क्यूं नाचे वावरा !, 'मिश्री' नही जाणे गूढ ॥झ०॥१५॥

ढला-पूर्व

कियो टकार चाप चाढ्यो, भग्यो दल पाछो अति दाढ्यो,
रह्यो दल रथ सेती वाढ्यो, वांधलियो इन्द्र-भणी सटके,
मानो सिह मृग पं कर पटके ॥राम०॥३३॥
दियो कठपीजर मे जकडी, छोड़दी सेना जो पकडी,
इन्द्र के दिवी गोडा लकडी, फिरा के आण शैल सारे,
रावण फिर लका पहुधारे ॥राम०॥३४॥

ढाल २८ मी ॥ तर्ज—पनिहारी० ॥

मोतियन थाल वधावियो, पुरवारा रे।
वाजा विविध प्रकार, केई परकारा रे॥
कोकिल-कण्ठी कामनी, सिणगारा रे।
घर, गावे गीत रसाल, मधुर अपारा रे ॥१॥

पुर सिणगार्यो जोर सूं पैसारा रे।
गज रथ पै असवार, है महिपारा रे॥
सिंहासन विराजिया, जुहारा रे।
ले निछरावल सार, दे सरदारा रे॥२॥

तीनखण्डना भूपती, मन सारे रे लो।
सेवा घर कर प्यार, आज्ञा पाले रे लो॥
उनको उनके राज्य नो, संभलाया रे लो।
और वधारा दीप, सब हर्षाया रे लो॥३॥

सीख दीवी जावो घरे, मनमाई रे लो।
आवो बुलाया आप, सेवा माही रे लो॥
करी व्यवस्था सुन्दरू, थी चारू रे लो।
राज्य प्रजा मन चैन, अरि-मद-गारू रे लो॥४॥

माय मनोरथ पूरिया सुत सागे रे लो।
दे आशीस अपार, व्हाला लागे रे लो॥
रथनूपुर ने आवियो, सहल्यारो रे लो।
ले कपिपति ने साथ, कियो जुहारो रे लो॥५॥

पुत्र शिक्षा सुन आपिये, कर किरपा रे लो।
सिर पर धर दो हाथ, तुम अति गिरवा रे लो॥
रावण कहे नहीं छोड़तो, उस ताँई रे लो।
तो भी तोर निहाज, शर्त सुहाई रे लो॥६॥

नगर बुहारे मायरो, स्वच्छ रागे रे लो।
कपिपति अर्जि यो कीध, तब नौशाने रे लो॥
थोडी छुट दिराय दो, करसी कामो रे लो।
नौकर द्वारा प्रतीप, वो नित नामो रे॥७॥

दोहा

हूँ भरती करणी सफल, छोड्यो इन्द्र नरेन्द्र।
रजजा आपं सर्व सुख, निरख तीन अरविन्द॥१॥
गन आरत आगे घणी, पाणी उतर्यो सर्व।
मारो झाली गरुण है, मन बीजो सब गर्व॥२॥

ढाल ३० मीं० ॥ तर्ज—चौक नीं० ॥

मुनिराज मिले वदन कर तिनवार इन्द्र यों पूछियो।
करूं नीच कर्म इमठो पूर्व पाप मैंने तो क्या कियो ॥टेर॥

मुनि कहे पूर्वभव भाखूं, मत बांधो कर्म तुम्हे दाखूं।
शुध संयम रस मन सूं चाखूं ॥मु०॥१॥

अरि जयपुर राणि गुण गाथ, ज्वलनसिंह घर साख्यात।
वेगवती तिय रलियात ॥मु०॥२॥

अहिल्या पुत्री प्यारी स्वयम्वर मण्डप की त्यारी।
अचलापति आया अनपारी ॥मु०॥३॥

आनन्दमाली परणी नारी, लगी तडितप्रभ को अति खारी।
कर मसलत घर गये उस वारी ॥मु०॥४॥

कालान्तर श्री आनन्दमाली, ले दीक्षा कीनो विहारी।
भये ध्यानारूढ अटवी भारी ॥मु०॥५॥

तडितप्रभ परिपह दीना, ध्यान-भग्न उसको कीना।
भये स्वान सिंह पद से हीना ॥मु०॥६॥

कल्यान मुनि आनन्द-भ्रात, तेजूलेश्या की उत्पात।
मरणा से डरियो अकुलात ॥मु०॥७॥

सत्य श्री तोरी नारी, कर प्रार्थना तिणरवारी।
शान्त बनाया अणगारी ॥मु०॥८॥

भव-भ्रमण किया तेने गहरा, शुभ पुण्यों का आया लहरा।
हुआ इन्द्र भूप के नृप सहरा ॥मु०॥९॥

आनन्दमाली रावण थायो, दुख दीधो याते तूं पायो।
सुणी इन्द्र 'मिश्रिमुनि' समझायो ॥मु०॥१०॥

—ढाल-पूर्व—

तज राज इन्द्र संयम धारा, कर्मो का काटा दल सारा,
ले केवल शिवालय संभाला, एक दिन रावण महाराजा-
स्वर्णतुंग गये गिरी ताजा ॥राम०॥

अनतवीर्य मुनि केवलनाणी, वाणी सुण पूछे पुन प्राणी,
मृत्यु मम किण हाथे मानी, परस्त्री निमित कारण बणसी,
जिमि रे वासुदेव हणसी ॥राम०॥

दशानन नियम लिया धार, इच्छा बिन तिय पर परिहार,
वन्दन कर पहुँचा निज द्वार, गाहवी अथखण्डी माणे,
सकल सुर नर शंका आणे ॥राम०॥३७॥

ढाल ३१ मी ॥ तर्ज—मूदड़ी० ॥

सुनिये सुनिये हो भवि-वृन्द कथा मन-भावनी रे।
मीठी इमरत सूं भी अधिक, भजन सुहावनी रे ॥टेर॥
रूपाचल पर्वत है रमणीक, देखने योग्य स्थान सम्प्रीक,
पुर आदित्य वहाँ तहनीक, न्यायी प्रह्लाद परवीन,
राती गहरावनी रे ॥सु०॥१॥

ढाल ३२ मी ॥ तर्ज—छोटे से बलमा मोरे० ॥

बाबा बजरंगी तेरी आज मिलकर महिमा गावे ॥टेर॥
नाम हनुमन्त सुहावनो, जगतीतल जाणे।
चरमशरीरी पुनवान, पद ही दर्शन माने ॥बा०॥१॥
भक्त शिरोमनि श्रीमद् राम नो मनड़ानो-मोजी।
रावण सरीखा रे मनमुख जाय किमड़ो की कोजो ॥बा०॥२॥
श्रीमुख से राम प्रशंसियो, उपकारी मेरा।
ऊरण होने का इससे नाथ, लूटा दुश्मन डेरा ॥बा०॥३॥
सीता खबर मुज लाय दी, मृत्यू मुख जाके।
मरतो बचायो म्हारो वीर, सरजीवन लाके ॥बा०॥४॥
भक्त कहे सब आपरो, आश्रय मैं पायो।
जिससे सुधरा सारा काम, मानिक राम सुहायो ॥बा०॥५॥
राम सरिखो कोई राजवी दूजो नहि थावे।
भक्त हनुमत रे जेवड़ो, जोयो नहीं पावे ॥बा०॥६
उत्पत्ति उसकी सोभनी भैया, हम आज सुनावे।
'मिश्री मुनि' कहे सान सारी दुनि मनावे ॥बा०॥८॥

ढाल ३३ मी ॥तर्ज—तृषावन्त नदी सुत० ॥

पुर आदित्य स्वर्ग सम सुन्दर, नृप प्रह्लाद उदारो।
केतुमती नामवन्ती रानी, प्रीतवती सुखकारी रे ॥१॥
भविजो राम कथा रसभीनी ॥टेर॥

शुभ सुपनो अवलोकी अभिनव, शुभ वेला शुभ वारो।
नन्दन नीको सवा नव मासो, प्रसव्यो प्रेम अपारो रे ॥भ०॥२॥
पवनजय अभिधान अनोपम, दिव्य देव अनुसारो।
व्हालो लालो सभी जनो ने, हुलरावे हरवारो रे ॥भ०॥३॥
गिरि गह्वर मे लता चपक-सो, दिन-दिन वढतो जावे।
यौवन वय परिपक्क हुवो जद, कला पढी घर आवे रे ॥भ०॥४॥
वहोत्तर, वत्तीस, चतुर्दश, चार-चार पट् जानो।
सात, आठ, अट्ठारे हरिया, इसडो पुरुप प्रधानो रे ॥भ०॥५॥
शोभा सायर, गुण मे गाहड़, नाहर-सो निरभीको।
मात, तात, सज्जन मन रजन, गजन अरि कुल टीको रे ॥भ०॥६॥
पुर महेन्द्र, महेन्द्र नराधिप, हृदय-सुन्दरी रानी।
इक-शत पुत्रो ऊपर पुत्री, अजना वडी सयानी रे ॥भ०॥७॥

शिखरिणी-छन्द

पवित्रा प्रेमालू पट-गुण प्रयुक्ता पतिव्रता।
विदूपी लज्जालू जिनवयण-रक्ता विमल धी ॥
क्रिया सच्ची पाले अलिक-पथ टाले विनय से।
रती, रम्भा जैसी जगतितल ऐसी अवर ना ॥१॥

ढाल-चालू

हेज घणो है तात-मात नो, भायो रो अनुरागो।
भोजायो भल-मन सूँ च्हावे, आदर लहै अथागो रे ॥भ०, राम०॥८॥
सगपण कर, परणावन पुत्री, जरदी मावित धारे।
'मिश्री मुनि' मत्री ने पूछ्यां, घर वर नाम उचारे रे ॥भ०, राम०॥९॥

ढाल ३४ मी ॥ तर्ज—मन मोह्यो रे तुंगियापुर नगर० ॥

घणां ठिकाणा मत्री दाखिया रे, नही आया नृप के दायरे।
दोय कुँवर तो जचिया सारिखा रे जोसी ने पूछ्यो ताम बुलाय रे ॥१॥
जोसी वतलावो निर्णय देख ने रे, बाई रे जोगो वर है कौन रे।
प्रथम पवनजयराय प्रह्लाद नो रे, दूजो तो विद्युत्प्रभ गुण-भौन रे ॥टेर॥
निर्णय दीनो ताम निमित्तियो रे दोनो ही राजकुँवर पुनवान रे।
किन्तु विद्युत्प्रभ अल्पायुपी, अष्टादश वर्ष लहे निर्वाण रे ॥जो०॥२॥

लोखो पिण जो को सोखो है नहीं रे, पवनजय पूर्णगुणी प्रधान रे ।
सगपण इसीलिए उनसे करो रे, बाई के योग्य ये ही वर जाण रे ॥जो०॥३॥
अष्टाह्निक मोच्छव नंदीश्वरे रे, पर्वत पै खेचर मिलिया आय रे ।
साग्रह श्री महेन्द्र नरेन्द्र जी रे, कन्या तो पवनजय दिखाय रे ॥जो०॥४॥
सारा ही भलो भलो भाखे सही रे, जोडी जुगती रो एह सम्बन्ध रे ।
जीम्या मिजमानी जाजा मोद सू रे, पहुँच्या है अपने स्थान नरिंद रे ॥जो०॥५॥

सोरठा

प्रहस्त मित्र प्रवीन, पवनजय रो खास है ।
उनसे कहे नवीन, वनिता जाय विलोकनी ॥१॥

प्रखागा निज श्रोण, सुनी जिसी या अधिक है ।
मित्र वदे तज मौन, सांज पड्यो दिखलावसूं ॥२॥

ढाल ३५ मी ॥ तर्ज—मोहन आज्ञो० ॥

अति उमग बढ्यो तस देखवा रे, मन आतुर चतुरा पेखवा रे ॥टेर॥
दोनो मित्र विमान सजावियो रे, गगन गति से सननन आवियो रे ॥अ०॥१॥
प्रच्छन्न पणे जालान्तरे, निरखे नेह भरी नयनोतरे रे ॥अ०॥२॥
ज्यो ज्यो देखे त्यो त्यो प्रेमांकुरो रे, किन्तु भाग्य वहे उत बांकुरो रे ॥अ०॥३॥
रंग महल बैठ्या सखि साथ मे रे, बात मगन मनोहर बात मे रे ॥अ०॥४॥
सखि वसन्ततिलका एवदो रे, बाई ! भाग्य तुम्हारो है वडो रे ॥अ०॥५॥
श्री पवनजय पति पावियो रे, सारा लोग उन्हे ही सरावियो रे ॥अ०॥६॥
कहे सुकेशी विद्युत ही भलो रे, वो तो परम प्रतापी कुल-तिलो रे ॥अ०॥७॥
कहे वसती समझे नही बापडी रे, उसकी आयु अलप आंटी पडी रे ॥अ०॥८॥
आयु अल्प हुवे तो क्या हुवा रे, मोक्षगामी विषय से है जुदा रे ॥अ०॥९॥
सुधा स्वल्प तथापि अमोल है रे, नमूं नमूं अवर कुण तोल है रे ॥अ०॥१०॥
भयो कुपित पवन सुण बातडी रे, गुणहीनी केवल रूपे नटी रे ॥अ०॥११॥

—ढाल तर्ज—मूंदडी—

रोक्यो प्रहस्त साहस इण ठोर, हो मेरी, चहातो है और,
संभो पहे करे सदा शोर, नारी भवकप है निर्दोष,
बात विमासणी रे ॥मु०॥२॥

उनने एक न वचन उचारा, बोली वह है नारि अवारा,
कुँवर कहे क्यो ना फटकारा, मत्री समजा के ले साथ
गृह-गति जावनी रे ॥सु०॥३॥

ढाल ३६ मी ॥ तर्ज—दादरा ॥

कर्मो रो मेल कैसो होवे रे पलक मे ३ ॥टेर॥
मनधारी उडजावे सारी,
मोति फिटक को राख दे गलक मे ॥क०॥१॥
प्रेम को विसार फैले द्वेष जो अपार जहाँ,
असल को नकल बनादे खलक मे ॥क०॥२॥
एतादृश पवन आया था किस रग भरा
बैरीसा बनाय घर लौटगा ललक मे ॥क०॥३॥
मै न करूँगो सादी इसके सग मे
प्रथम कटोरे माखी पडी है मिलक[1] मे ॥क०॥४॥
मन मोती अरु काँच तूटगा
फिर नही सँधता देखलो हलक मे ॥क०॥५॥
नारि कुपातर, नहि है सुपातर
केवल सुन्दर मुख दिखता अलक मे ॥क०॥६॥
कहदो पिता से नही व्याह रचावे
'मिश्री' मनावे मित्र वचन ढलक मे ॥क०॥७॥

ढाल ३७ मी ॥ तर्ज—गिणगोर को० ॥

मतकर ताणाताण सज्जन तूँ मतकर ताणाताण।
अजी थे तो घणा हो चतुर सुजान ॥टेर॥
लोक हँसेगा, वैर वसेगा, सज्जन परेशान
अजी थांरा गौरव मे पिण हाण ॥मत०॥१॥
वचन दियो है राज राजेश्वर, रहसी कैसे जबान
अजी थोडो सोचो बुद्धि-निधान ॥मत०॥२॥
कालकूट शिव हाथ लग्यो सो, आरोग्यो पुनवान
अजी जिण मे वाजे देव महान् ॥मत०॥३॥

१ दूध

विषधर कागे उदधी[1] लाधो, पहनो निज गल स्थान
अजी अजहू देवे जहान ॥मत०॥४॥
बात चिठादे पवनजय के, मत्री मीठे बान
अजी तब व्याह रच्यो चढ़ी जान ॥मत०॥५॥
तोरण मार चट्या चट चॅवरी, कन्या कीध पिछान
अजी थारे नयनो नही रस-पान ॥मत०॥६॥
गज, रथ, घुडला, नौकर चाकर दीधो धन असमान
अजी वे तो विन मन आया स्थान ॥मत०॥७॥

दोहा

सासु सुसरा हरखिया, दीना महल उतग ।
पट्टा परवाना दिया, दिया मान अणभग ॥१॥
नारी री नरा सायको, सहु जन ने सन्तोख ।
पिण प्रीतम को हे नही, रती प्रेम को पोख ॥२॥

ढाल ३८ मी ॥ तर्ज—म्हारा छैल भँवर रो कांगसियो० ॥

म्हारा मनमोहन पिवुडा ने महियर कुण भरमायो रे ।
म्हारा नवरगा हिवडा रा फूल ने कुण भरमायो रे ॥टेर॥
प्रथम मिलन मे आंट पड़ी गया, दिलनूं दाय न आई रे ।
गलती रा मोती हि न मिलियो, गलती मरा दिखलाई रे ।
करेजे दाह लगायो रे ॥म्हा०॥१॥
सुगनतोर रो मैं न विचार्यो, यो काई साज्यो आंटो रे ।
बना बनाया मोद महल मे, कुण यो न्हाख्यो भाटो रे ।
हाय माड उणरे आयो रे ॥म्हा०॥२॥
एकलडी महलो मे झुरूं, किण पे जाय पुकारूँ रे ।
म्हारी ने म्हारा पीहर री, किणविध आन विचारूँ रे ।
हाय जिवड़ो घबरायो रे ॥म्हा०॥३॥
नजर न मेले, आवे न ढगे, हेला भी न करायो रे ।
इसो काई अपराध हुयो है, मन ही मन सीनायो रे ।
सोग सरसो उपजायो रे ॥म्हा०॥४॥

---

१ समुद्र

लात मार अपमानित करके, मिल्यो कटक मे जाय जी ।
वसन्तमाला पडती झेली, लाई महलो मांय जी ॥भा०॥२॥
दुख देखण क्यो मुज को सर्जी, इतरो क्यो कर द्वेष जी ।
जावतडा दुख दीधो स्याने, करियो व्यर्थ कलेश जी ॥भा०॥३॥
हे प्रभु ! क्षेम पती ने होज्यो, शूल बनी जो फूल जी ।
विजय करीने वहिला आइज्यो, अरि होवे अनुकूल जी ॥भा०॥४॥
पवनजय पै वसन्त-तिलका, करडी काढै वाण जी ।
सती कहे मत बोले सहियर, स्वामी है गुणवान जी ॥भा०॥५॥
धन्य-धन्य है सती-शिरोमण, अवगुण अपना देखे जी ।
पर औगुण ने पीवणवाली, जीतव जिणरो लेखे जी ॥भा०॥६॥
सामायिक ले बैठगई सा, जिन स्तवना मुख गावे जी ।
'मिश्री मुनि' कहे निकट समय मे, वात अलौकिक थावे जी ॥भा०॥७॥

दोहा

कटक विकट पौच्यो सटक, मानसरोवर जाय ।
डेरा दीधा दलपती, भोजन आदि कराय ॥१॥
निज निज डेरे सूयगा, रयणी अर्द्ध सुमार ।
चकवा चकवी चह चहै, अलग अलग तरु-डार ॥२॥

ढाल ४२ मी ॥ तर्ज—घनघोर घटा मे० ॥

पवनजय पूछे सरदारो !, चकवा चकवी क्यो कुरलाते ।
ये शब्द हृदय की वेदन के, सुनते ही हृदय जो दहलाते ॥टेर॥
स्वामिन् ! यह कुदरत की लीला, रात्री मे साथ न रह सकते ।
विरहातुर चकवी का क्रन्दन, चकवा भी मन से तडफडते ।
पशु-योनी भी नही बरदास्त करे, हो मनुष्य कैसे जो निभा जाते ॥१॥
अरे मित्र ! वडा अन्याय किया, अवला को मैंने छिटकादी ।
कैसे वीताये इते वर्ष, की उसके प्रेम की वरवादी ।
नही आशा रही अब मिलने की, कुण धैर्य उसे जो बँधवाते ॥२॥
दिन उदिन आशा है मिलने की, वह भी तो रोते धोते है ।
आशा की दोर टूटी जिसकी, पथ शून्य नयन से जोते है ।
मरगट या मरजावेगी स्त्री-हत्या पातक को पाते ॥३॥

ढाल ४५ मी ॥ तर्ज—हां र कायथडा० ॥

हांरेक पापी जोध पधार्‌या जग मे, हांरेक पापी माथे सूर समाज।
अब लागो दाव लुच्चो रे हाथ मे, वे आवे अधरात मे ॥१॥
हां, लाज चिहूणो बोलतो, हांरेक नकटा न आणी टुक लाज।
क्या समझे, यह घर छै सतियो तणा, नाहक क्यो च्हावे मरणा ॥२॥
हांरे० चमडी लूण भरावसो, शूली पर चढवावसो।
हां० देखी अवलो भणी एकली, हां० आयो हिम्मत धार।
तो निश्चे सारे थारे हां नही, लात मार मारो सही ॥३॥
हां० पतिय पधार्‌या फोज ले, हां० लेवे उणोरो नाम।
नही लाजे, नकोंहदा नेरीया, ऊकलता क्यो ऊरीया ॥४॥
हां० मन्त्री पवनजय ने भाखियो, हां कहो कुण खासी मार।
बोलदो किसडी बीती बातडी, कठे बितावो रातडी ॥५॥

चन्द्रायणा छन्द

बोलो विचारी बोल खोल पट ओलखो।
भाग्य प्रबल थी समय मिल्यो अणमोलरो ॥
खोवण मे नहि सार कहूं छूं हितधरी।
जावणरी तकरार युद्ध मे छै घणी ॥

ढाल-पूर्व

सुणत स्वर दीपक कर झाली, बसती ओलखली आली,
सखी के गल बैय्यो डाली, बधाई दे दे तूं बाई,
असम्भव सभव दर्शाई ॥राम०॥४०॥

ढाल ४६ मी ॥ तर्ज—आवो आवो हो नेम नगीना० ॥

आये आये है राजकुंवरसा कर मेरूं सी मेहर ॥टेर॥
द्वार खोल स्वागत मैं करलूं, तुम सजलो सिणगार।
क्या सराऊं भाग्य तुम्हारा, पियुजी गये पधार ॥आ०॥१॥
जब सिन्धू मे सरिता मिलती, कितना जल विस्तार।
ऐसे अजना फूली तन, मन, बढग्यो मोद अपार ॥आ०॥२॥
खोल द्वार सखि मुजरो कीनो, बोला राजकुमार।
धन्य सखी! सखि प्राण रखिया, हिम्मतवर हो नार ॥आ०॥३॥

किण मग कर्म कमावियो रे, जल्दी नाम बताय ।
ठोकर मारी पूछियो रे, हंटर ले कर मांय ॥ल०॥३॥
सती कहे कर जोडने हो माता, मै न कियो अन्याय ।
जाया थारा लौट पधार्‌या, रण सूं तीन निशाय ॥ल०॥४॥
साची भाखूं हो सासूजी था से झूठ न दाखूं हो ॥टेर॥
पाप पथ पेडो नहिं भरियो, करीजु कुलवट रीत ।
एलो सेनाणी हाथ री, आतो मुद्रिका परम पुनीत ॥मा०॥५॥
पडी गिरि ले मुद्रिका रे, साची वणें वदजात ।
शकुन न लेवे लाल हमारो, सो किम रहवे रात ॥मा०॥६॥
जावतडो दे लात गुडाई, कुण नही जाणे वात ।
एकदम आयो कुण या माने, किसी जिणी है मात ॥ल०॥७॥
जो उन्माद चढयो आ तोरे, क्यो न मरी विप खाय ।
यो जीवन किण कामरो रे, लाखीणि लाज गमाय ॥ल०॥८॥
केतुमती कलह-प्रिया रे, एक सुणें है नाय ।
हाका माड्या जोर रा वा तो, कालरूपणी थाय ॥ल०॥९॥

चन्द्रायणा-छन्द

कहरी वसन्ती वात अकज्ज किण साथ मे ?
भेली विश्वावीस रही तूं साथ मे ॥
सा कहे थारा पूत और कुण आसकै ।
कोरो कलक चढाय भूल खावो रखै ॥१॥

ढाल ४७ मी ॥ तर्ज—॥बोलो न चाहे बोलो० ॥

मानो न चाहे मानो, मैं तो सच्च बात कहती ॥टेर॥
इस घर का चून खाया, इसको न मैं लजाया ।
क्यो रीस मे भराया, मरजाद बीच वहती ॥मा०॥१॥
जितनी भी गाली दे लो, चाहे वही जु ले लो ।
महलो मचादो मेलो, दुनियो कहेगी गलती ॥मा०॥२॥
केतुमती न माना, ऐसा हुकम सुनाना ।
हटर भिजो लगाना, मुझपै भी चाल चलती ॥मा०॥३॥
उसको पकड के टेरी, मारी है मार गहरी ।
चमडी को वे उधेडी, आखो से धार ढलती ॥मा०॥४॥

ढाल--पूर्वकी

इती नहि पचा सकी बात, ओछी बुध नारी की जात,
निकाली घर से उत्पात, करे क्यो होणी सो होगी।
ऐसी नही जाणी नाजोगी ॥राम गुणगावो॥४२॥
केतुमति सुण के रीसाणी, तजूँगी मैं भोजन-पाणी,
राजाजी ज्यादा नही ताणी, दुखित-मन गये जु मुँह टारी।
वेष दे कारो निक्कारी ॥राम गुणगावो॥४३॥

ढाल ४६ मी ॥तर्ज—मैदूलारा गीतरी० ॥

हय रथ काला आणिया, कांइ दीधो हो सा कालो वेष।
सखी चली है साथ मे, काइ काढो हो बाहिर निज देश ॥१॥
कर्म कहानी यह बुरी, कांइ कम्पे हो सुणता सब गात।
रोवतडी रथ वेसगी, कांइ कुरलावे हो व्हारी अति आंत ॥क०॥२
निश्र्छी वचने तदा, काइ फेंकी हो धोबो भर धूल।
पवनजय परवश पणे, काइ करदी हो वो इसडी भूल ॥क०॥३
तिणरा फल सति भोगिया, काइ कुम्हलाई वल्ली के जेम।
रथ चाल्यो पुर मध्य हो, काइ किंचित भी लागी नहि टेम ॥क०॥४
पुर पीहर के बाहिरे, रथ रोक्यो हो सारथि ततकाल।
दोष नही मम मातजी, लारे लागो हो पापी पेट चडाल ॥क०॥५
दोनो ही उतरी रथ थकी, काइ थारो हो नही दोष लिगार।
आसूँ न्हाख पाछो वल्यो जी, काइ पहुँच्यो हो पुर महेन्द्र उदार ॥क०॥६
वे दोनो बाहिर रही, तन वेदन हो वली भूख रु प्यास।
दिन ऊगो लज्जा घणी, किम जावो हो मुखडे उदास ॥क०॥७
हवले हवले हालती, काइ पहुँची हो वे गढ री पोल।
आ रक्षक रोकी जवे, कुण बाई हो मुख बोलो बोल ॥क०॥८
कहे वसन्ती बाइजी, काइ आया हो दुर्समय विचार।
भूप भणी खबरो करो, चर आयो चट 'मिश्री' दरबार ॥क०॥९

दोहा

नौकर से नरपति सुणी, निज-पुत्री उदन्त।
रहे नाठो, गाग्यो मती, दीठा आग जरन्त ॥१॥

म्हारी सुणलो रे घर मे राख लो, पति आवे जग जीत माताजी।
मालुम होसी रे थाने मूल थी, किण कीवी है अनीत, मा० ॥दे०॥५॥
एक सुणे नही चाली वहाँ थकी, सौ भाई घर द्वार, सनेही।
कोई न वोले रे ऊभा देखता, नयनो वर्षे रे खार, सनेही ॥दे०॥६॥
कहे वसती रे चालो यहाँ थकी, नही रहवण मे सार, सनेही।
जो लिखियो वो हुवाँ ही सरें, कहे 'मिश्री अणगार, सनेही ॥दे०॥७॥

ढाल ५१ मी ॥ तर्ज—चौकनी० ॥

शील धर्म है परम सुखावह, तन मन से धारण करता।
आपद मिट सपत्त पा जावे, मनचाया पाशा ढलता ॥टेर।
भूखी-प्यासी वहुत उदासी, दोनो वाला निकल पडी।
सभी नगर के नर नारी के, अँखियो अँसुवन की लगी झडी ॥
कैसा निष्ठुर हुकम लगाया, पुत्री की नहि पीर हरी।
दुश्मन से भी देखो इसने, अपमानित है किसी करी ॥

शेर

नगर वाहिर आ गई वे पैर उनके लडथडे।
खून झरता नीर ढलता, लाचार वोलो क्या करे ॥
विप्र देखी दुर्दशा यह कहे पाणी पीजिये।
और कोई योग्य सेवा वहनजी कह दीजिये ॥

चलित

कैसे पीवूं नीर वीर सुन मेरी,
हुकम तात को नही भग इनवेरी ॥
कर सकती नहि आज लिखा सो होगा,
हमने कीने कर्म वही जो भोगा ॥

दौड

विप्र दयालू अपार, चला मनियों के लार, सीमा लँघते जिवार
झट पाया पाणी, झट पाया पाणी
वाई दोनों जावो भाई, मैं तो वन वीच जाई, भोगूं कर्म कमाई
फरमाई ज्ञानी, फरमाई ज्ञानी ॥

शुध सयम अराधी, देव ऋद्धि उसे लाधी, दूजे देवलोक साधी,
फिर नर थावे, फिर नर थावे ॥
पुर मृगाक अभूत, नृप हरिश्चद्र पूत, कर करणी प्रभूत,
सिह चन्द्र थावे, सिह चन्द्र थावे ।
धर्म-करणि कर, सुर हो पीछा, मनुज बनी जन दुख हरता ॥शील०॥२

विमलनाथ भगवान शासन मे, सिहवाहन राजा प्यारा ।
लातक सुर भे आप कुक्षि मे, आकर लीना अवतारा ॥
अब सुनलो पूरब भव तुमरा, कैसे वैर वसाया था ।
ईर्षावश नहि ध्यान दिया और शिर पै बोझ उठाया था ॥

शेर

कनकपुरी नगरी भली, कनकरथ है भूप जी ।
कनकोदरी अरु वती लक्ष्मी, राणी दोय स्वरूप जी ॥
कनकोदरी के पुत्र जनमो, देव-सो सुखमाल जी ।
लक्ष्मीवती छिपाय लीनो, पाडोसणी घर बाल जी ॥

चलित

भइ पुत्र विना वह दुखी तजा अन-पाणी,
करे विलाप अत्यन्त घणी विलखाणी ॥
पाडोसण के योग सौप जब दीना,
तेरा घडी अन्तराय कर्म-बन्ध कीना ॥

दौड़

माफी लक्ष्मीवती मांगी, शुध मार्ग मे लागी, भई सजम की रागी,
की करणी खरी, की करणी खरी ॥
पांचो पहले देवलोक, पाई सुख तणा थोक, चवि वहाँ से अलोक,
मिली पुन्य की झरी, मिली पुन्य की झरी ॥
भई अजना तू खास, लेवो दिल में विमास, एहो त्रास तेरह मास,
बाई ! पाई तू घणी, बाई ! पाई तू घणी ॥
दियो पाडोसण माय, वैर भाव नही जात, मार खाई सखी थाथ,
रही पास ठणी, रही पास ठणी ॥
कर्म-बन्ध नहीं छूटे, हर्गिज, भोगे जो कुछ भी करता ॥शील०॥३॥

शुध सयम अराधी, देव ऋद्धि उसे लाधी, दूजे देवलोक साधी,
फिर नर थावे, फिर नर थावे ॥
पुर मृगाक अभूत, नृप हरिश्चद्र पूत, कर करणी प्रभूत,
सिह चन्द्र थावे, सिह चन्द्र थावे ।
धर्म-करणि कर, सुर हो पीछा, मनुज बनी जन दुख हरता ॥शील०॥२॥

विमलनाथ भगवान शासन मे, सिहवाहन राजा प्यारा ।
लातक सुर भे आप कुक्षि मे, आकर लीना अवतारा ॥
अब सुनलो पूरव भव तुमरा, कैसे वैर बसाया था ।
ईर्षावश नहि ध्यान दिया और शिर पै बोझ उठाया था ॥

शेर

कनकपुरी नगरी भली, कनकरथ है भूप जी ।
कनकोदरी अरु वती लक्ष्मी, राणी दोय स्वरूप जी ॥
कनकोदरी के पुत्र जनमो, देव-सो सुखमाल जी ।
लक्ष्मीवती छिपाय लीनो, पाडोसणी घर वाल जी ॥

चलित

भइ पुत्र विना वह दुखी तजा अन-पाणी,
करे विलाप अत्यन्त घणी विलखाणी ॥
पाडोसण के योग सोप जब दीना,
तेरा घडी अन्तराय कर्म-बन्ध कीना ॥

दौड़

माफी लक्ष्मीवती मांगी, शुध मार्ग मे लागी, भई सजम की रागी,
की करणी खरी, की करणी खरी ॥
पाँचो पहले देवलोक, पाई सुख तणा थोक, चवि वहाँ से अलोक,
मिली पुन्य की झरी, मिली पुन्य की झरी ॥
भई अजना तूं खास, लेवो दिल में विमास, एहो त्रास तेरह मास,
बाई ! पाई तूं घणी, बाई ! पाई तूं घणी ॥
दियो पाडोसण साथ, वैर भाव नहीं जात, मार खाई सखी थाथ,
रही पास ठणी, रही पास ठणी ॥
कर्म-बन्ध नही छूटे, हर्गिज, भोगे जो कुछ भी करता ॥शील०॥३

चैत्र शुक्ल पूनम शशि पुण्य नक्षत्र आयो रे।
रात पाछली आवतो ज्योतिर्धर जायो हो राज० ॥श्री०॥१॥
जाणे बादल फाडने, सूरज प्रगटायो रे।
राक्षस मान गमावनो, अवतार लिरायो हो राज ॥श्री०॥२॥
शुचि कर्म सहियर कियो, पुत्र पाग पोढायो हो।
निरखत नयन धापे नही, हिये मोद भरायो हो राज ॥श्री०॥३॥
जन्मोच्छव इत कुण करे, पितु कटक मे माले हो।
इसडारो उच्छव नही, यह हिवडा मे साले हो राज ॥श्री०॥४॥
सति खोले सुत लेय ने, पय पान करावे हो।
हाथ फेरे शिर ऊपरे, अति आनद आवे हो राज ॥श्री०॥५॥
सूवावडरो साज तो, अकस्मात दिखायो हो।
दोनो विस्मित हो गई, यो कौन पठायो हो राज ॥श्री०॥६॥
अभिनव वागा तीन के, ऊतरीया सागे हो।
'मिश्री' कहे यह देखलो, शुभ ज्योती जागे हो राज ॥श्री०॥७॥

ढाल-पूर्व

तीजे दिन विरहातुर राणी, रोवती जातो खग जाणी,
उतरियो नीचो कहे वाणी, बाईसा! रोवो थे स्याने,
विपिन मे काढ्या कुण थाने ॥राम०॥४४॥
नाम है प्रतिसूरज म्हारो, आयो मैं रोज सुण्यो थारो,
वगती हाल कह्यो सारो, भाणेजी भली आज मिलगी,
सेवा हित भाग्य दशा खिलगी ॥राम०॥४५॥

चन्द्रायणा छन्द

खोले लीधो खेच नानोसा! लाल ने।
जैसे हर्षे कृपण देखि बहु माल ने॥
लीनो लग्न उदार-क ग्रह बलवान है।
दीर्घायू दलनाथ बडा पुनवान है॥

कवित्त

मातुल महान मनुहार करी राणी-सह,
हनुपुर चालो बाई!, यान भी तैयार है।

कवित्त

पेख के प्रह्लाद पूत जोरा एक धोस धाल्यो—
वरुण विशाल दल पल मे पछारगो।
सूर सुलतान भागे भागे भारी जोध केते—
मोरने टिके न वाण मेह-सो उछारगो।
दिग्मूढ वरुण समेत सुत सारे भये—
आज वायू दीठ पर्यो जगत अगार सो।
छिपै कहां छोरे नाही मारे है करारी चोट—
सुरेन्द्र से चले हाथ वज्र के प्रहार-सो ॥१॥

सवैया

लकेश लखि खुश होय रहा पवनजय पौरुप पूरण है।
वक निशक निकारन को भुजदड महा रिपु चूरण है॥
सूर निसूर भये सगरे असमान मिलावत धूरन है।
कोप कियो जस वोत लियो वस काम कटाक्ष हि नूर न है॥१॥

दोहा

जैसे दधि शिव मथन कर, लियो काल को जीत।
वैसे रिपु-दल मथ दियो, पवनजय जु पुनीत ॥१॥

ढाल—पूर्व की

पकड के वरुण-सहित सारे, वचा नही वीर एक लारे,
विजय के वाजे नक्कारे, रावण की आण मनाई हे,
पवन की महिमा छाई है ॥राम गुणगावो०॥३६॥
कियो प्रहलाद नाम ज्हारी, लकपुरी आई असवारी,
रक्षपती मान्यो वलधारी, दियो सन्मान अतुल अर्थ,
गाम केई दीना समर्थ ॥राम गुणगावो०॥४७॥

ढाल ५४ मी ॥ तर्ज—घुडला री० ॥

अवै सीख दिरावो राज, गाम निज जावू ला जी जावू ला॥
जोवे वाट समाज, गाम निज जावूंला० ॥टेर॥
मात-तात परिवार उडीके, जाकर दर्शन करू उन्ही के।
कई घरेलू काज, गाम निज० ॥१॥

ढाल ५९ मी ॥ तर्ज—श्यामसुन्दर चित चोर लियो रे० ॥

कठैगइ कठैगइ कठैगई रे, सत्य धरम ज्हाज कठैगई रे ॥टेर॥
लाज औ लिहाज वाली, व्रत और नियम-वाली,
मर्यादा की राखनारी, गति गजराज-वाली,
कोकिल आवाज वाली कठैगइ रे ॥१॥
गम खाऊँ, लाधी नही, हेर हेर हार्‌यो, वेर वेर काढ्यो वेर दुक्ख देय डार्‌यो।
चिन्तामणि, चित्रावेल कठैगइ रे ॥२॥
अब अनमोल ऐसी इण भव माही, लाखो ही मिलेगी नहि सुण मेरा भाई!
पावक प्रजार तन होमूँ सही रे ॥३॥
तात मात भणी जाय कह दीजे सारी, जोयलीवी मिली नही पतिव्रता नारी।
वाट मेरे आने की न जोवे वही रे ॥४॥
मित्र उडी गयो रत्नपुरी नृप पासे, पुत्र प्रजारे निज तन को विनासे।
सुणताइ हलचल मचगइ रे ॥५॥
क्रन्दन करत तात मात उठ चाले, सासु सुसरादि सारा आंखो जल राले।
शोधवा चाल्या है ताम वन-माही रे ॥६॥
लकड़ खिडक चिता त्यार कर डारी, अगनि जलाय लीनी पडने की त्यारी।
यान से उतर झेला बाथ-माही रे ॥७॥
करे काई कायर-सो काम लाल मेरे, ज्यादा हम कहे काई, अपराधी तेरे।
वीरता विसारमती, कहना यही रे ॥८॥
लकड विखेर दिया आग को वुझाई, जावो सरदारो! सारा, शोध लावो भाई।
पुत्र भिक्षा देवे कोऊ लाभ लही रे ॥९॥
मूँगी कर काढी मोई मूँगी भई भारी, वारणा लेवे है जिने वार जो निकारी।
मिश्रि मुनि' भाग्य जग मोटो सही रे ॥१०॥

दोहा

नदीपूर-सम चढ चले, दश दिशि मे खगराय।
गाम-गाम घर-घर जई, शोध रहे अकुलाय ॥१॥

ढाल ६०मी ॥ तर्ज—गांधण जी रो० ॥

खबगे पहुँची मेचगे हो, मित-मिल के—
वाटे कर रहे दौडा-दौड, पतो नहि पायो हो, जी हलाि।

अजना प्रति खबर सागी, वसती बोली पग-लागी,
कुँवर जी तो विन ले आगी, मामो कहे जल्दी मे चालो,
पावणा जरे बचा डालो ॥राम०॥८१॥

ढाल ६२ मो ॥ तर्ज—मूंदडी० ॥

मामा आया रे भाणे जी ले-कर साथ में रे।
ऊभा सारा जोवे वाट गुणो रा गाथ मे रे ॥टेर॥
नजरो लागी है गगनागण, इतरे उतरयो नीचे सननन,
ऊभा हो गया सब ही राजन्,
मिलिया हनुपुर नृप से ताम घालकर बाथ मे रे ॥मा०॥१॥
धिन-धिन नृप ! तुमरी वलिहारी, सखरो समय साँधियो भारी।
म्हारा प्राण बचाया आप बात की बात मे रे ॥मा०॥२॥
सती पधारी, पति सुख पायो, सखियुत सादर शीश झुकायो।
गोद से हणू-कुँवर को शीघ्र लियो है हाथ मे रे ॥मा०॥३॥
भाखे पवन धन्य हो बाला, कितनी सही दुखो की ज्वाला।
व्हाला दे दीना सब छेह, सह्या दिन रात मे रे ॥मा०॥४॥
धन्य वसती रग थने है, धन्य मावितो तुझे जणे है।
कितनी मार अरु दुख सह कर रहि साथ मे रे ॥मा०॥५॥

चन्द्रायणा-छन्द

सासर पीहर साथ आया लज्जा भरी,
सती उठकर ताम सबो के पद पडी।
मत आणो मन शक वक कर्मों तणी,
याते बणियो एह भाख्यो त्रय-जग-धणी ॥१॥

ढाल ६२ मी ॥ तर्ज—नमूं अनन्त चौवीसी० ॥

पती-पतनी मिलिया टलिया सारा दुक्ख।
निज-निज जो वीती सभी रखी सन्मुक्ख।
दुख हर्ष साथ मे अनुभव हुवा दोय,
जो लिखा भाग्य मे वही जीवन मे होय ॥१॥
कहे वसत-तिलका राजवियो री रीत,
मैं लखी अनोखी अर्क-पुष्प सी प्रीत।

सति कलंक उतरियो जस पाई वेहद,
यह शील-धर्म की महिमा फैली सद्य।
दोउ पक्ष उजाल्या धीरज मन में धार,
सुख सारो वर्त्यो कहे 'मिश्रि' अणगार ॥६॥

दोहा

वजरंगी ह्वालो सवै, वढै ज्युं द्वितिया चन्द।
कला ग्रही ल्याकत लही, वलशाली ज्यों इद ॥१॥
पुनरपि वरुण विरोध कृत, जिससे लकाधीश।
पवनंजय प्रतिसूर्य को, याद किया अवनीश ॥२॥

ढाल ६३ मी ॥ तर्ज—जुहारमल जाट रा० ॥

वरुण प्रति जग जोडनो, नृप वेगा आइजो राज।
के रुण रग खेलनो, मत देर लगाइजो जी ॥टेर॥

प्रतिसूर्य और पवनजी, चाले चमू[1] लेई रे।
प्रतिपेधी हनुमानजी, सज्ज थयो है वेही हो राज ॥व०॥१

लंका-नगरी जावतो, दशकन्धर दाखी हो।
वाल भणी क्यों भेजियो, जीते किम डाकी हो राज ॥व०॥२

हनु हँसकर भाखे भला, क्यो चिन्ता लावो हो।
हाथ हमारा देखजो, थें पिण उत आवो हो राज ॥व०॥३

आग, नाग अरु वाघ ने, छोटा मत जाणो हो।
प्राण लेवे पल एक मे, अभरोपो – न आणो हो राज ॥व०॥४

चढियो वरुण के ऊपरे, ततखिण वजरगी हो।
जग जुड्यो है जोर रो, सोसुत के सगी हो राज ॥व०॥५

वन्दर फोज वणाय के, रिपु-दल पै कटक्या हो।
मानो गज-दल केशरी, अति रोपे रटक्या हो राज ॥व०॥६

हाय-हाय कर भागगा, हनु पूंछ विस्तारी हो।
बांधलिया सो साथ मे, इमडो वलधारी हो राज ॥व०॥७

रावण के चरणो मे डारा, वन्ध खोल दो अवै डणारा ।
नही करसी तकसीर वचन के वधा में ॥रा०॥४॥
वजरगी की करे प्रशसा, वीर वहादुर उत्तम अशा ।
कहे मिश्री अणगार, सभी सुख-छदा में ॥रा०॥५॥

छप्पय-छन्द

वरुण-सुता सुख-धाम नाम है सत्यवती शुभ ।
परणादी धर प्रेम, गुणो पर हो अति लोलुप ॥
अनगकुशमा और, दशानन की भाणेजी ।
सूर्पनखा अगजात दिवी परणाय सु-हेजी ॥
पद्मसुरागा वालिका, कपिपति की वर अगना ।
हरिमालिनि नल की सुता, हनु परणी चित चगना ॥१॥

दोहा

अवर विद्याधर उमग के, कन्या एक हजार ।
वजरगो को व्याह दी, और द्रव्य अनपार ॥१॥

ढाल ६५ मी ॥ तर्ज—जावो वन्हा सव सव देश०॥

लेकर महिला मान माल अनमापरो जी ।
आयो निज के नगर, दर्श कियो वापरो जी ॥१॥
अजना आनन्दपूर, वहुओ पावो पडी जी ।
ऊभी एक हजार, सेवा मे हर घडी जी ॥२॥
पवनजय सुविचार, तिलक कियो राजरो जी ।
हनुमत ने धर प्यार, जाणी रक्षक ताजरो जी ॥३॥
लीनो सजम भार, पवनजय अंजना जी ।
आतम करन विशुद्ध, कर्मरिपु दल गजना जी ॥४॥
पवनजय गये मोक्ष, सती स्वर्ग सचरी जी ।
वजरंगी री एह कथा,—'मिश्री' ऊचरी जी ॥५॥
पाले आनन्द मे राज, सकल शिरोमणि जी ।
पर उपकारी एह, दीपे ज्यो दिनकणी जी ॥६॥
अव सुण जो भव्य लोग, राम सीता तणो जी ।
आगल सरस सम्वन्ध, उल्लमित हियवणो जी ॥७॥

वज्रबाहु कहे यहि इच्छा है, अवसर अच्छा आया ॥
शाला बोला फिर क्या देरी, होता है मनचाया ॥ह०॥७॥
बहुत ठीक अब लेता संजम, दीक्षा दो गुरुराया ।
शालो कहे क्या सच्ची करते, मैंने हास्य कराया ॥ह०॥८॥
अब नहिं कच्ची सच्ची समझो, यूं कही संजम पाया ॥
काकण बंधन चिह्न मिटा नहिं, कैसे जोग रमाया ॥ह०॥९॥

चन्द्रायणा

मरजासी मुज बहिन विरह दुख अथग है ।
मोने देसी श्राप अयश अति लग्ग है ॥
वज्रकहे त्वं नेह पती संग संचरैं ।
कायर हो जो नार आंख आंसू झरे ॥१॥

दोहा

भगनी भल समजाय के, तुम पिण संजमभार ।
लेलो, आतम उद्धरे, होवे भव-दधि पार ॥१॥

ढाल ६८ मी ॥ तर्ज—हांरे वन्हा चौटा री चलगत छोड़ दो०॥

हांरे सुणतो बेन भाई पिण चेतिया ।
हांरे वे पिण ले लीनो संजमभार ॥
ऐसे त्यागियों की महिमा अपरपार है ॥टेर॥
हांरे ए तो ऊमोडा घर छिटकावियो ।
हांरे ए तो हँसी से हुवो धर्म-प्रचार ॥ऐ०॥१॥
हांरे देखो साचो सगो संसार मे ।
हांरे देवे धर्म मे साज ॥ऐ०॥
हांरे खबर सुणी अजोध्यापती ।
हांरे दियो पुरन्दर ने राज ॥ऐ०॥२॥
हांरे नृप विजय संयम ले चालियो ।
हांरे वो तो कियो आतम - कल्यान ॥ऐ०॥
हांरे पुरन्दर मुन जनमियो ।
हांरे कीर्त्तिध्वज गुण-खान ॥ऐ०॥३॥

नहीं आज्ञा रहने की मेरी, देर न इसमें करो चरों।
नफर गये, कहे भगो यहाँ से, अग्र पैर नहि एक भगो॥
पड़े कड़कती धूप तथापी, महाश्रमण पाछो घिरियो॥है०॥३॥

हाहाकार मच्यो पुर सारे, राणीसा अन्याय किया।
उनका पती, हमारा नायक, अहार पाणी नहि लेन-दिया॥
चोर उचक्के ढोगी योगी, सब रहते क्या सन्त लिया।
कर अपमान महापुरुषो का शक्त जराया सुजन-जिया॥
धा-माता यह हाल सुनत ही, हियडे जियडे दुख भरियो॥है०॥३॥

दौड गई दरबार नयन से अश्रुधारा चलती है।
भूप कहे क्या हो गया बोलो, हुई कौन-सी गलती है॥
पिता राजका, स्वामि हमारा, आतम शान्त-रस झिलती है।
माता ने पुर द्वार निकारे, आँतडिये हम जलती हे॥
महाराजा सुन कोपानल हो, हुक्म तुरत ही यो करियो॥है०॥४॥

मेरे हुक्म बिन जो भट जाके जुलम जबर कर डारा है।
जूते मार लावो मुज पासे, बाँधा-कर्म का भारा है॥
मैं जाता हूँ गुरुदेवपै, वो तो तात हमारा है।
माफी उनसे लेलूं जरदी, व्है मुनि-कोप करारा है॥
'मिश्री' नृप घोड़े चढ़ चाल्यो, जा चरणो मे शिर धरियो॥है०॥५॥

ढाल ७० मी ॥ तर्ज—घुडलारी० ॥

यों मतलबियो ससार, आछो कुण माने जी कुणमाने।
कहे ध्यान पार अनगार, नृप को समझाने जी समजाने॥टेर॥
तब माता सेवा करती थी, मेरे मरणे वा मरती थी।
वा सहदेवी नार निकाल्या म्हाने जी वा म्हाने जी॥यो०॥१॥
अहार पाणी लेने नही दीना, अपमानित चवडे ही कीना।
यह जग का व्यवहार, जाहिर सब जाने जी सब जाने॥यो०॥२॥
जर, जमीन, जोरू का झगडा, रात दिवस करते है रगडा।
मगरो रे इकमार दिल मे नही, ठाणो जी नहि ठाणे॥यो०॥३॥
तजदो राज-काज अघ-भारा, सयम-पथ झेलो सुखकारा।
करदे भव-जल पार दुर्लभ दुनिया ने जी दुनिया ने॥यो०॥४॥

शिष्य पयपे सूर्यवश मे, भागो लाजे जात, गुरुजी ! भागो० ॥
सिहणी से सिह कभी न डरता, भले करे वा घात ॥मु०॥५॥
करा देओ सथारा मुजको, जीवूं तो आगार मुजे है जीवूं तो० ॥
मुगती किल्ला कायम करलूं, करो गुरु उपकार ॥मु०॥६॥
कर सथारो उपधी गुरु ढिग, मेल अगाडी वीर, सज्जनो मेल० ॥
ईर्या-समिति शोधत चाले, ज्यो रण-चढता धीर ॥मु०॥७॥
इतेक आई वाघणी सरे, दी पंजे की मार, सज्जनो दी० ॥
काय-विलूरे मुनि समता में, पायो केवल-सार ॥मु०॥८॥
कट-कट खाय रही सा पापण, दन्त पक्ति सा न्हाल, सज्जनो ! दन्त० ॥
सोचे सूरत लगे सेदी-सी, लख कहे मुनी-दयाल ॥मुं०॥९॥
पुत्र मार तूं खायगी सरे, मरीजु जिसके मोह, भोलकी मरी० ॥
अनरथ हाथो करदियो सरे, सुध बुध सारी खोय ॥मु०॥१०॥
धूजी मन मे सिहणी सरे, लज्जा लिवी अतीय, वाघणी लज्जा० ॥
जातीस्मरण पा गई स वा, वन्या भाव रमणीय ॥मु०॥११॥

चन्द्रायणा

सथारो मन धार गुरु वन्दन कियो,
जाण मनोगत भाव गुरु पचखादियो ।
गई आठ मे स्वर्ग कीर्तिधज मुनिवरु,
गये मोक्ष सुख-धाम कर्म आठो हरू ॥१॥

ढाल ७२ मी ॥ तर्ज—माली रा वाग में दोय नारंग पक्की रे ॥

चित्र सुमाला राणीए, जायो नन्दन नीको रे लो, अहो जायो० ॥
हिरण्यगर्भ नामे भलो, सुकोमल जी को रे लो, अहो सुकोमल ॥१॥
राज्यपाले रलियामणो, सबने सुखदाई रे लो, अहो सबने० ॥
मृगावती पटरागणी, सुत नघूक सोहाई रे लो, अहो सुत नघू० ॥२॥
हिरणगर्भ नृप एकदा, शिर केस संवारे रे लो, अहो शिर० ॥
धवलो केश दिखाइयो, तब एम विचारे रे लो, अहो तब० ॥३॥
ए आयो जम-दूत जो, मैं सभलजाऊं रे लो, अहो मैं० ॥
तनछिन नघुक कुमार ने, कीधो तब राऊ रे लो, अहो कीयो० ॥४॥

दोहा

कालान्तर छोनीश के, दुस्सह रुज तन-दाह।
प्रबल पीर ना सह सके, करने लगे हा! हाह!! ॥१॥
लागू औषध ना पडे, अरती बढी अपार।
दोष उतारण आपणो, राणीसा तिणवार ॥२॥

ढाल ७४ मी ॥ तर्ज—राजा रे राघव कहावे० ॥

राणी वाणी सुधा-समाणी, बोली सबदे साखी रे।
निजपति टाली अवर न वछ्यो, त्रिकरण सुद्धी राखी रे ॥टेर॥
तो नृपनो तन नीरुज करजो, शासनदेवी आई रे।
कहि इतनो नृप-तन कर फेर्यो, दृढता से मनलाई रे ॥रा०॥१॥
गरुड देखि ज्यो पन्नग भाजे, ताविधि रोग नशायो रे।
राजा रीज्यो राणी ऊपर, कृत अपराध खमायो रे ॥रा०॥२॥
पचेंद्री सुख राजा भोगे, पुत्र भयो सौदासो रे।
पाट थापी ने सयम लीनो, उत्तम गति मे वासो रे ॥रा०॥३॥
अष्टान्हिक महोच्छव मंडवायो, सौदास छोनीसो रे।
जीव दयानो पडह वजायो, मत्री हर्ष विशेषो रे ॥रा०॥४॥
कुसगति से भूप शिकारी, भयो मास अभिलाषी रे।
मत्री कहे महीपति! यह रीती, समजो है अघराशि रे ॥रा०॥५॥
'तव' पूर्वज कोइ नहि अपनायो, अभख यह सुन लीजो रे।
गौरव घर को राखण च्हावो, तो वेगो तजदीजो रे ॥रा०॥६॥
चातुरता से मानी राजा, पिण मन मे न सुहाई रे।
कुव्यसन लागे सहजपणाथी, पिण छूटे नही भाई रे ॥रा०॥७॥
सूद रे पासे गुप्त मंगावे, क्षण भर रह्यो न जावे रे।
सारे पुर मे मिले नहीं है, कहो किम काम बणावे रे ॥रा०॥८॥
बालक मरियो, लाय खिलायो, स्वाद घणेरो आवे रे।
रसगृद्धी होकर के नित को, माणस एक मरावे रे ॥रा०॥९॥
प्रजा पीडाणी, मत्री जांणी, गुप्त सभा बुलवाई रे।
करिके सगठन आया सभा मे, अर्जीयो गुजराई रे ॥रा०॥

दूत भेजियो पुरी अयोध्या, आवो सेवा मांही रे।
सिहरथ पाछो यूं कहलायो, शर्म न आई रे ॥राजा०॥३॥
न्यात जात रो नहीं ठिकाणो, हुकम चलावत तगडो रे।
पहुंच होय तो चढकर आजा, मेटूं रगडो रे ॥राजा०॥४॥
महापुर से सेना ले चढियो, आयो अयोध्या ताई रे।
पिता पुत्र के आपसमाहे, हुइ जबर लडाई रे ॥राजा०॥५॥
सुत तो पिता अगाडी हार्यो, मनडा में मुरझायो रे।
आत तपाणी पिता तणी, खोले वैसायो रे ॥राजा०॥६॥
दोय देश नो राज्य भोलावी, राजा सजम धार्यो रे।
षटकाया रा रक्षक 'मिश्री', काज सुधार्यो रे ॥राजा०॥७॥

कवित्त

'सिहरथ' नृप पुत्र 'ब्रह्मरथ' मेघाविध—
'चतुमुख' 'हेमरथ' सत्यरथ जानिये।
'उदय' उदित ज्योति 'पृथु' 'वारीरथ' नामी—
'शरिरथ' 'सूर्यरथ' 'मानधाता आनिये ॥
'वीरसेण' 'प्रत्युमन्यू' पद्मबन्धु' 'रविमन्यू'—
'वसन्त' 'कुवेरदत्त' 'कुन्थु' जो वखनिये।
'शरभ' 'द्विरभ' नृप सिंह दरशन देख—
'हिरण्यकस्युप' अरु 'पुंजस्थल' मानिये ॥१॥

दोहा

प्रौढ और कुकस्थ नृप, श्री दिलीप रघुराय।
अन्यरण्य आदे भये, सूर्यवशि वडराय ॥१॥
कई स्वर्ग कइ मोक्ष गे, विश्व वीच वड वश।
विस्तरियो वट वृक्ष ज्यो, अवधपुरी अवतश ॥२॥

चौपाई

अन्यरन्य युग सुत अभिरामा, अनतरथ दशरथ सुखधामा ॥
महसकीर्ण खग साथ मिताई, अन्यरन्य मन दीख सुहाई ॥१॥
अनन्तरथ पितु पद मन जामूं, साथ भयो भक्ती-रस प्यासूं ॥
सुभ्रगतो सयम युत साधी, वीरव्रती जित तजी उपाधी ॥२॥

ब्रह्मा बांचे वेद सभा में विन हुंकारे।
दाणो दलती त्रिधी, राणियो सहस अठारे॥
राजा सहस बतीस, राज त्रयखण्ड मजारे।
सुर, दानव अरु मनुज धाक उनकी सब धारे॥
पर्यंक पाय तल नव हि ग्रह, सहस एक विद्या विपुल।
अस ठाट पाट लंकेश का, देखी खुश होवे सयल॥२॥

ढाल-पूर्व की

एक दिन परिषद पूराणी, सिंहासन बैठो सुलतानी,
उपस्थित परिषद मनमानी, नैमित्ती आयो इक ज्ञानी,
दशानन पूछे अभिमानी ॥राम०॥५

हुंवा नहि, है, नहि नहि होगा, जगत मे हम जैसा जोगा,
सभी से ऊपर हम छोगा, बतादे जन्मे कोइ ऐसा—
मेरे से जग करे जैसा ॥ राम०॥

ढाल ७७ मी ॥ तर्ज—वेधक वयण सुणी वेधालो० ॥

नैमित्तिक असुहानी वाणी, लखि ज्योतिप बोल्यो ताणी रे,
सुण नृप रढियाला।
इतरो जोम लियो दिल ठानी, निपट समझ नादानी रे,
हठ भीना राणा ॥१॥

इन्द्र चन्द्र तीर्थंकर चक्री, विरला गये कइ वक्री रे ॥सुण०।
पुण्योदय से सपति पाई, सुन्दरता अधिकाई रे ॥हठ०॥

तीन लोक मे कटक वाजे, छोटी वातो तुम्हे नहि छाजे रे ॥सु०।
एक एक से अधिका होग्या, भली बुरी बातो ने बोग्या रे ॥ह०॥

पूछया रो प्रत्युत्तर देसूं, साचो निर्णय केसूं रे ॥सु०।
सुणकर अरुण नयन मत कीजो, सावधान होय रहिजो रे ॥ह०॥

ज्योतिप वचन मृपा मत माने, होनी सो ही बखाने रे ॥सु०।
'मिश्री' गम वो वयण उचारया, नृप का दृग जो उघारया रे ॥ह०।

दोहा

वने एक उपाय तो, टलै तुम्हारी देण ।
किन्तु यह नही होनका सरे, साची भाखूं सेण ॥
झूठ नही देऊँ हूकारो ॥ज्यो०॥४॥

वता दो उद्योगी वनकर, वना ले काम जो सत्वर ।
गणिक कहे कहता हूं नरवर, सुणो अव वचने का अवसर ॥

दोहा

रत्नसेण नृप नगर विशाला, प्रीतवती पटनार ।
रत्नदत्त है कुंवर अनोखा, सूरवीर सरदार ॥
रूप मे कामदेव सारो ॥ज्यो०

यौवनवय कुँवर को जाणी, सचिव से दाखे नृप वाणी ।
कुँवर के योग्य कन्या छानी, तुल्य गुण वय भी लो मानी ॥

दोहा

चढ़जावो अव ही तुरत, नही देरी का काम ।
ले सरदार चढ्यो मंत्रीश्वर, घूम्यो देश कइ गाम ॥
'मिश्री' कहे वीते मास चारो ॥ज्यो०

ढाल ७६ मी ॥ तर्ज—लावणी०॥

इक देखा सरोवर कमलाच्छादित वारी, कमला० ।
चहुं तर्फ वगीचा खिल रही है फुलवारी ॥
वहाँ डेरा दिया मंत्रीश रम्य-स्थल भारी, रम्य० ।
घो टहल रहे सर-पाज[1] दुखित-मन सारी ॥
क्या करे वना नही काम अडी क्या मगरी ॥१॥
यह कथा वडी रमणीक पूरित रस सगरी ॥टेर॥

प्रकटी एक पणिहार स्वर्ण-घटवारी, स्वर्ण० ॥
पोडशवर्षी वाल रूप मन-हारी ॥
मन्त्री सोचा जिगर तिया मतवारी, तिया० ।
पूछं उनमे वात लगे कुछ कारी ॥
आटा ऊभा आय पूछे क्या नगरी ॥यह०॥२

१. तालाव की पूर्णी पर

दोहा

सच्ची कहो कच्ची नही, रची जची दिल माय।
पची पेट में सबहि के, गची लची हो नाय ॥१॥

ढाल ८० मी ॥ तर्ज—थें तो माला पहरो जड़ाव री० ॥

ओ तो मंत्री उठकर भूप से रे लाल, ओ तो कहे युक्ति युत वेण हो।
॥ सलूणा राजा ॥
मैं घूम्यो देश विदेश मे रे लाल, इक निरख्यो सुदर नेन हो।
॥सालूणा राजा ॥१॥
वात कहूँ कौतुक भरी रे लाल ॥टेर॥
ओ तो नगरविशाला रो राजियो रे लाल, ज्यारो रत्नदत्त सुकुमार हो।स०॥
अद्‌भुत रूप लावण्यता रे लाल,वो तो परतिख सुर अवतार हो ॥स०॥वा०॥२॥
सुणी पृथ्वीपति यो पूछियो रे लाल, किम जाणसको उणताय हो, स०॥
मत्री पट दिखलावियो रे लाल, सब देखे नजर लगाय हो ॥स०॥३॥
वह कन्या निरख्यो व्यग से रे लाल, वो तो वसियो दिल रे माय हो ॥स०॥
नमन करी कन्या गई रे लाल, निज महिलो विलखाय हो ॥स०॥४॥
मत्री से महिधव वदेरे लाल, अति दूर वणे किम काम हो ॥स०॥
फिर भी सब मिल सोच लो रे लाल, जिते ठहरो धवले धाम हो ॥स०॥५॥
ओ तो डेरे दिरयो ढग सूं रे लाल, नृप पट राणी के पास हो ॥स०॥
सर्वोद्‌दत[१] सुणावियो रे लाल, मत्री निज से हुलास हो ॥स०॥६॥
इस कन्या कुम्हला रही रे लाल, तस सहियर जब पूछत हो ॥स०॥
शाकिनी ग्रसित ज्यो भई रे लाल, 'मिश्री' यो पभनत हो ॥ स० ॥७॥

चन्द्रायणा छन्द

दाखी कल्पित वात सखी कहे झूठ है,
मोसे रही छुपाय सभी तुम्हे छूट है।
मैं जाणू मन वस्यो देख्यो पट सो खरो,
बना देऊंगी काज इता क्यो दृग भरो ॥१॥

---

१ सब वृत्तात सुनाया।

ढाल ८२ मी ॥तर्ज—राघव आवियो हो०॥

नृप दशानन नाग तक्षक लियो शीघ्र बुलाय ।
जा विशाला रत्नदत्त को डक दो विष लाय ॥१॥
स्वार्थी करत है अन्याय ॥टेर॥
कुँवर सूतो ढोलिये पर, लेत सुखभर नीद ।
दुष्ट तक्षक डक दीनो, मुरज्यो ज्यो अरविन्द ॥स्वा०॥२॥
प्रात मुजरे नही आयो, खबर ताम कराय ।
वदन सारो जहर पूरित, हरित स्याम दिखाय ॥स्वा०॥३॥
राजा राणी और परिकर, करे रुदन अपार ।
रगमे ओ भंग होग्यो, पुन्य गे परवार ॥स्वा०॥४॥
खाय मूर्च्छा पडे धरणी, मच्यो हाहाकार ।
देव ! तू ए स्यू कियो रे, डूबगे मँझधार ॥स्वा०॥५॥
हियो हुबके, नीर टपके, करत कइ उपचार ।
किन्तु कारी नही लागी, मृत्यु सम तन भार ॥स्वा०॥६॥
मन्त्री भाखे रखो धीरज, रुदन से क्या होय ।
लिख्यो लाभे टले नाही, ज्ञानी भाख्यो सोय ॥स्वा०॥७॥
साथ जरसूं, रहूँ नाही, गई चीज विलाय ।
लेइ चाल्या मरघटोपरि, प्रजा दुक्खित प्राय ॥स्वा०॥८॥
तीर गगा पोचगा सब, रुदन को नही पार ।
राजा राणी आदि केई, जरेगे नर नार ॥स्वा०॥९॥
आयो एक निमित्तियो रे, जरो जारो नाय ।
दिवस मतरे स्वस्थ होसी, जहर जासी विलाय ॥स्वा०॥१०॥
भूप भाखै पडी मट्टी, कौन जीवन आस ।
मत्री कहे लो धैर्य धारी, गणिक[1] पै विश्वास ॥स्वा०॥११॥
मान एक मगाय पेटी तास मे पोढाय ।
चुहायदी विष्णुपदी मे[2], आंख ओजल थाय ॥स्वा०॥१२॥
विनयना सब घरे पोच्या, विप्र वचनाधार ।
'मुनी मिश्री' कहे भैय्या !, पुण्ये जय-जयकार ॥स्वा०॥१३॥

---

१ पंडित २ नदी

सोरठा

तू खाजे फल फूल, डरजे मत, रमजे अठे।
आसी दिन अनुकूल, धर्म प्रतापे सुन्दरी! ॥१॥
मैं आसूं झट जाय, फिर ले जामूं लक को।
रावण ने सँभलाय, निज मन्दिर जासूं त्वरित ॥२॥

ढाल ८४ मी ॥तर्ज—चांदणी ढल जायगी०॥

सदन पोचावसी, मावित मिल जावसी।
आनन्द थासी रे, दुखड़ो विलासी रे ॥टेर॥
सुरी[1] गी गगन मे, वाला वेलू-कण[2] मे।
फिरत उदासी रे, कद पियु आसी रे ॥स०॥१॥
आवत पेटी निरखी, काढी बाहिर हरखी।
शुकन सुखासी[3] रे, वस्तु मिल जासी रे ॥स०॥२॥
तालो खोल डारयो रे, पुरुष निहारयो रे।
सूरत सुहासी रे, पट मे प्रकाशी रे ॥स०॥३॥
हा हा! जहर छायो है, मोहन क्या विलायो है।
मिल नही पासी रे, लगी दुख फांसी रे ॥स०॥४॥
मणी-मुद्री खोल के, वारी से झकोल के।
कृपा प्रभु थासी रे, जहर मिटासी रे ॥स०॥५॥
गिणी नवकार को, छाटे जलधार को।
गले उतरासी रे, स्वस्थ हुय जासी रे ॥स०॥६॥
गयो विष छोर के, उठ्यो आलस मोर के।
'मिश्री' प्रकाशी रे, भाग्य उजासी रे ॥स०॥७॥

दोहा

नारी निरखे नाह ने, नाथ आपणी नार।
दोनो मौनी उत घटे, चन्द्रावति तिणवार ॥१॥

---

१ देवी २ धूलि पर ३ सुख की आशा का संकेत देने वाले

पिण कुण केवे उण डाकी ने, करे जिसोई चाले।
रयणी में पेटी लेकर के, सँभला देसूं काले ।।प०।।२।।
मोजा चन्द्रा काल ले जासूं, चिन्ता तजदे दूरी।
अब क्या चिन्ता है माता जी !, पूरी करो अधूरी ।।प०।।३।।
पेटी उठाई, बोझो ज्यादा, देवी कहे क्यो भार।
चन्द्रा कहे भोजन पाणी को, अथवा गये विसार ।।प०।।४।।
पौ फाटी पेटी लेकर के, लका सभा मँझार।
पेटी रख रावण पै जाकर, अरजी दीवी गुजार ।।प०।।५।।
आज दिवस उन्नीसमो मालिक, पेटी हाजर कीनी।
रावण कहे अष्टादशमो दिन, भूली किम मति-हीनी ।।प०।।६।।
पहरा लगावो मैं आता हूँ, देवी मन शकाई।
एक दिवस री गलती कर दी, पड़ी भरम के माही ।।प०।।७।।
खलक-मुलक मिलियो नृप परिषद, शोभे राजा राणा।
पण्डित को हाजर अब कर दो, कैसा ज्ञान वखाना ।।प०।।८।।
आतुरता सब ही खलकत को, रावण खेच सुनाई।
कहो पण्डितजी सावा उन्हो का, टलिया के वो नाही ।।प०।।९।।
सत्य ज्ञान की आज परीक्षा, सारा विच हो जासी।
'मिश्री मुनि' कहे झूठ न चाले, ज्ञान प्रभा प्रकटासी ।।प०।।१०।।

ढाल ८७ मी ।।तर्ज—मोहन मुरली वाले०।।

कहता ज्योतिषी सुणले भूप, ज्ञानी वचन झूठ नहि होता ।।टेर।।
यह नही लग्न टलेगा लाखो, मैं तो चवडे चवडे भाखो।
किसकी शंका जरा नही राखो ।।ज्ञा।।०१।।
खोलो पेटी देर न लाना, जाहिर सभा बीच वतलाना।
निर्णय इसका पाना ।।ज्ञा०।।२।।
सब के दिल मे वटा विचार, होगा कौन यहाँ निरधार।
जीते ज्योतिषी या दरवार ।।ज्ञा०।।३।।
रावण हुक्म दिया ललकार, खोलो मजूषा इसवार।
बनगा ज्ञानी मे सरदार ।।ज्ञा०।।४।।
हम मे अकड़ यहाँ कुण जीता, उल्टा उसका हुआ फजीता।
'मिश्री' कृटत ऊज्वल रीता ।।ज्ञा०।।५।।

ढाल—पूर्व की

पूछना[1] 'यह' गणिक मेती, तेरे पै विद्या है एती,
तेरे शिर वर्षेगी जेती, बता दे यह पहले हमको,-
ज्यादा क्या कहना है तुमको ॥राम०॥६४॥

दोहा

चटपट पेटी खोलतो, निरखे नर नारीय।
यह पति पत्नी पेखनो, गणिक गिरा वरणीय ॥१॥

ढाल ८८ मी ॥ तर्ज—एक दिवस लंकापति०॥

सारी सभा सरदार ए, अचरज लह्यो अपार ए,
बहुवार ए, धन्यवाद दे विप्रने ए।
तिमगला गइ भाज ए, कहे दशानन राज ए,
आज ए, परचो पायो ज्ञान रो ए ॥१॥
सवालखी पोशाख ए, और दक्षिणा लाख ए,
अभिलाख ए पूरण कीधी जेहनी ए।
बात शास्त्र अनुसार ए, के दीनी ललकार ए,
निरधार ए, दोष नहीं छै एहने ए ॥२॥
रत्नदत्त चन्द्रावती, दे सन्मान जु भूपती,
कर खातर अती, निज निज घर पोंचाविया ए।
हर्ष्यो सब परिवार ए, परिगल वोरव्यो प्यार ए,
गुण अधिकार ए, कौतुक पायो है घणो ए ॥३॥
रावण भयो उदास ए, लख्यो विभीषण तास ए,
सुविलास ए, कहे चिन्ता मन टारदो ए।
दशरथ जनक कुमार ए, म्हारूं[illegible] रमणी मार ए,
[illegible] ए बीज बिना फल किम हुवी ए ॥४॥
रावण वदे सुण भ्रात ए, जोशी [illegible] बात ए,
[illegible] ए, करवानो [illegible] नहीं ए ॥
उपमनो अधिकार ए, [illegible] नहीं [illegible] ए,
[illegible] ए, [illegible] ए ॥५॥

१ निमित्तज्ञ

नारद-मुनि कर श्रौन ए, उड्यो गगन ज्यो पौन ए,
वस मौन ए, उपकारी धर्म आगलो ए।
दशरथ जनक सुणावियो, सद्योपाय वतावियो,
फावियो, मन्त्री दोनो राज रा ए ॥६॥
भेप वदल नृप वन गया, उपक्रम लारे रच नया,
नही लया, भेद कोई जन तेहनो ए।
निर्मित पुतला सेज ए, पौढाया धर हेज ए,
विन जेज ए, वन्दोवस्त पक्को कियो ए ॥७॥

ढाल--पूर्व की

रयणि मे विभिपण आयो, शीश को छेदन करवायो,
हा! हा रव उभयस्थल थायो, राणियो रनवासे रोई,
विभीपण घिरियो दृश जोई ॥राम०॥६५॥

सुना दी रावण को सारी, पूठ जव लहु की फटकारी,
भ्रात मुझ तू आज्ञाकारी, फेलगो त्रिहू खण्ड हाको,
रावण ने कीनो है साको ॥राम०॥६६॥

चन्द्रायणा छन्द

दशरथ जनक भमत गुहा गिरि वन घणा,
वदन कापडी वेप आहार वन फल तणा।
देखो कैमी वणी अचानक आय के,
केवो किणने वात कही भी जाय के ॥१॥

कवित्त

सोते सुख सेज ताका धरण ककर भरी—
उवड खावड तरु-तल जो निवास है।
सुन्दर पौशाखो पंरनारे वलकल धार—
भोजन सरस नही वन फल खास है॥
सेवा मे हजारो पै न एक उत मिले कहाँ,
नाटक चेटक गये, मुखडे उदास है।
हा! हा! है कराल चाल कर्मन की जान 'मिश्री',
दोनो दल-नाथ हू के मिले ना आवास है ॥१॥

पधारो झगडा रा माजी, व्हावो थें वरमाला ताजी,
दियो विन होसो वेराजी, माला नही माग्यो सूं आवे,-
मांगीयो मंगता कहलावे ।।राम०।।६८।

भालों की अणी वीच माला, व्हावे तो आवो मतवाला,
दिखादो रगडपन आला, वजावो गाल अठे स्याने,-
जीमलो मिजमानी भाणे ।।राम०।।६९।।

हठीला करदीनो हल्लो, लुटेरा लूटे ज्यो गल्लो,
वाणों रो वर्ष्यो है घल्लो, सारथी कैकइ व्ही साटे,-
चल्यो रथ झणणन गरणाटे ।।राम०।।७०।।

काल सम दशरथ दरशायो, विपक्षी दल सब दहलायो,
प्राण ले इत उत ही धायो, जीतगो अवधपुरी रायो,-
असल यो अन्यरण्य जायो ।।राम०।।७१।।

दोहा

खरो खिलाडी खेत-रण, पिशुन दिया पोढाय ।
रया सया भागी गया, रुप्या न सन्मुख आय ।।१।।

ढाल ८० मी ।। तर्ज - घोड़ी तो आई थारा देश मे० ।।

भाग्य वडो ससार मे, भवियणजी, और समय दे साथ हो ।
रगभीना कार्य सुधार ले, भवियणजी ।।
दशरथ जीत्यो जग मे । भवि० । जबर वाज्यो झूंझार हो ।।
रगभीना कार्य सुधार ले, भवि० ।।१।।

व्याह हुवो अति ठाट सूं ।भ०। तूठो कैकइ पे भूप हो ।रग०।।
जो चाहे सो मांग लो, राणी जी, देमूं तुम्हे धर चूंप हो ।रग०।।२।

सा कहे श्री भण्डार मे, राजाजी, आप रखावो स्याम हो ।रग०।।
अवसर पे मैं मागमूं हो, राजाजी, पडसी म्हारे काम हो ।रग०।।३।

केकइ माथे लेयने० ।भ०।, राजग्रह नो राज ते लीनो कर के वीरता०।
राजधानी उत थाप दी, राजाजी, सिह वसे सो ही साज हो ।।ले०।।४।।

जनक गयो मथुरा प्रति ।भ०। मोद सहित महाराज हो ।।ले०।।
देस घणा जीती लिया, दशरथ जी, राजग्रह नरराज हो ।।ले०।।५।।

अवर राण्यो साकेत[1] से०, ।भ०। बुलाली वी गुणरास हो ।रग०।।
वासर जावे विनोद में० ।भ०।, हिम्मत किम्मत हो तास हो ।रग।।६।।

---

१ अयोध्या

प्यारी पियुडा से भणी, वाजा०, राजा लह्यो आनद के, वा ॥
शुभ वेला सुत जाइयो, वाजा०, स्याम वर्ण ज्यो इद के, वा० ॥६॥
तोला माप वधाविया, वाजा०, छोडया वन्दीवान के, वा० ॥
साजनिया मनहरपिया, वाजा०, महा उत्तम पुनवान के, वा० ॥७॥
कर उत्सव ते उमँग से, वाजा०, दियो नारायण नाम के, वा० ॥
वीजो लक्ष्मण थापियो, वाजा०, सकल गुणों रो धाम के, वा० ॥८॥
दोनो रवि शशि सारिसा, वाजा०, सुख मे वाधे सोय के, वा० ॥
नीलाम्बर पीताम्वरी, वाजा०, लाडकडा है दोय के, वा० ॥९॥

मालिनी-छन्द

जन-जन मन-हारी, नीर गगा रसारी,
पढ लिख हुशियारी दक्षता स्वच्छ धारी।
सुरगुरु समतारी ले वलैया जिणारी,
लखन रमण दोनो दीपते पुन्यशाली ॥१॥

ढाल ६२ मी ॥ तर्ज —मनाऊँ मै तो श्री अरिहन्त०॥

जतलाना ये ही, कैसी पुण्यो की वहार ॥टेर॥

दोनो कुँवर राम अरु लक्ष्मण, श्याम गोर तनवान।
कलावान विद्वान विचच्छन, गिरवा महा गुणवान ॥ज०॥१॥
धनुप चढाते वाण फेकते, सूरज शका आन।
मत पाडो अयि प्यारे वच्चो, वारू मोर विमान ॥ज०॥२॥
अपने भुजवल और पुत्रवल, जानी हो दृढ जाम।
अवधपुरी मे लौट पधारे, करी व्यवस्था आम ॥ज०॥३॥
मनोमन महा हर्पियारे, सज्जन पुरजन जान।
सुप्रभा शत्रुघ्न जनमियो, केकइ भरत प्रधान ॥ज०॥४॥
चारो पुत्र गजदन्ता जैसे, मेरू शोभा पावे।
दशरथ राजा वैसे वो भी, तन मन से हर्पावे ॥ज०॥५॥
दिन पै दिन वहु वढे सपदा, और राज्य विस्तार।
राजागण माने है शका, दोर दड दिलधार ॥ज०॥६॥
दिन अच्छा अरु साधन सागे, प्रभुता को नहि पार।
वढे प्रताप प्रभाकर जैसे, कहे 'मिश्री' अणगार ॥ज०॥७॥

प्यारी पियुडा मे भणी, वाजा०, राजा लह्यो आनंद के, वा ॥
शुभ वेला सुत जाइयो, वाजा०, स्याम वर्ण ज्यों इद के, वा० ॥६॥
तोला माप वधाविया, वाजा०, छोड्या वन्दीवान के, वा० ॥
साजनिया मनहरपिया, वाजा०, महा उत्तम पुनवान के, वा० ॥७॥
कर उत्सव ते उमँग से, वाजा०, दियो नारायण नाम के, वा० ॥
वीजो लक्ष्मण थापियो, वाजा०, सकल गुणो रो धाम के, वा० ॥८॥
दोनों रवि शशि सारिसा, वाजा०, सुख मे वाधे सोय के, वा० ॥
नीलाम्वर पीताम्वरी, वाजा०, लाडकडा है दोय के, वा० ॥९॥

मालिनी-छन्द

जन-जन मन-हारी, नीर गगा रसारी,
पढ लिख हुशियारी दक्षता स्वच्छ धारी ।
सुरगुरु समतारी ले वलैया जिणारी,
लखन रमण दोनो दीपते पुन्यशाली ॥१॥

ढाल ६२ मी ॥ तर्ज —मनाऊँ मै तो श्री अरिहन्त०॥

जतलाना ये ही, कैसी पुण्यो की वहार ॥टेर॥

दोनो कुँवर राम अरु लक्ष्मण, श्याम गौर तनवान ।
कलावान विद्वान विचच्छन, गिरवा महा गुणवान ॥ज०॥१॥
धनुप चढाते वाण फेकते, सूरज शका आन ।
मत पाडो अयि प्यारे वच्चो, वारू मोर विमान ॥ज०॥२॥
अपने भुजवल और पुन्नवल, जानी हो दृढ जाम ।
अवधपुरी मे लौट पधारे, करी व्यवस्था आम ॥ज०॥३॥
मनोमन महा हर्पियारे, सज्जन पुरजन जान ।
सुप्रभा शत्रुघ्न जनमियो, केकइ भरत प्रधान ॥ज०॥४॥
चारो पुत्र गजदन्ता जैसे, मेरु शोभा पावे ।
दशरथ राजा वैसे वो भी, तन मन से हर्पावे ॥ज०॥५॥
दिन पै दिन वहु वढे सपदा, और राज्य विस्तार ।
राजागण माने है शका, दोर दड दिलधार ॥ज०॥६॥
दिन अच्छा अरु साधन सागे, प्रभुता को नहि पार ।
वढे प्रताप प्रभाकर जैसे, कहे 'मिश्री' अणगार ॥ज०॥७॥

॥ द्वितीयोल्लास प्रारभ्यते ॥

ढाल—पूर्व की

मंगलमय श्री गौतम-स्वामी, अनुग्रह उनका ले नामी,
शरण जस पुण्यों का पामी, बखाणूं राम सुयश वारू,
सुगुरु कर-कमल शीश धारू ॥ राम गुण गावो ॥६४॥
भामंडल सिया युगल वान, जन्म वे पाया इक साथ,
अलग भये कारण क्या भ्रात, वर्णवे वही कथा चंगी,
सती भई सीता इकरंगी ॥ राम० ॥६५॥

ढाल ६२ मी ॥ तर्ज—यह मीठा प्रेम का प्याला० ॥

यह राम सुयश रस आला, पी करके बनो मतवाला ॥टेर॥
जम्बूद्वीप भरत के माही, था 'दारू' ग्राम इक भाई।
वसुभूति विप्र इक त्वांही, अनुकोश्या नारी वाला ॥ पी० ॥१॥
अनुभूति तरुण था बेटा, सरसा तस नारी खेटा।
अपहरी कयानक घेटा', वह वैर वसाने वाला ॥ पी० ॥२॥
अनुभूति प्रेमवश पागल, चल पडा गवेपण आगल।
पितु-मात मोह वश छागल, पुत्र गवेपण वाला ॥ पी० ॥३॥
मग मिले मुनी गुणधारी, उपदेश सुना सुखकारी।
वे तात मात तिणवारी, मन समझाने-वाला ॥ पी० ॥४॥
ले संयम विप्र करी करणी, वीतराग ने जो वरणी।
लगी प्रथम स्वर्ग की निसरणी, आनन्द मनाने वाला ॥ पी० ॥५॥

दोहा

वहाँ से चवी वैताढ्य पै, रथनूपुर सुखकार।
चन्द्रगती राजा बण्यो, पुष्पवती पटनार ॥१॥
सरसा पिण संयम लियो, पांची दूजे स्वर्ग।
प्रिया-विरह क्रन्दन करत, अनुभूति गो नर्क ॥२॥

कुण्डलमण्डित दशरथ नृपनो, लूटे देश अज्ञान।
बालचन्द्र चढि उसको पकड़ी, मेल्यो नृप पे आन ॥ कि० ॥१४॥
दीनपणो देखी, ला करुणा, छोड दियो तिणवारी।
बाप राज्य हित प्रबल चाहना, कुँवर उपक्रम ज्हारी ॥ कि० ॥१५॥
मुनिचंद्र की संगति पाकर, श्रावक बणियो सागे।
राज्य वाञ्छा मे प्राण जु छूटा, जनक भूप घर पागे ॥ कि० ॥१६॥
सा सरसा भव भव में भमती, भई प्रोहित री कन्या।
सुन्दर रूप कला मे कोविद, लोक कहे धन धन्या ॥ कि० ॥१७॥
मान अणूतो बढ्यो नगर मे, वेगवती नो तेथ।
'मिश्री मुनि' कहे आल जु दीनो, जैन मुनि पै एथ ॥ कि० ॥१८॥

सोरठा

पाप अठारा पेख, अभ्याख्यान जु तेरमो।
मोटो जूप्टी देख, इणसूँ अलगो रेवणो ॥१॥
असत आल दो झूठ, देवे नहि उत्तम पुरुष।
जाय प्रतीत जु ऊठ, सज्जन साची जाण जो ॥२॥

ढाल ६४ मी ॥ तर्ज—इण सरवरिया री पाल हींडो मैं० ॥

भरतक्षेत्र मे एक गाम मृणाल है, मोरा लाल गाम०।
श्रीभूति प्रोहित नार सरसा रसाल है, मोरा लाल सरसा० ॥
वेगवती तस बाल चपल-मति चंचला, मोरा लाल चपल०।
बातो में वाचाल कार्य मे बंचला, मोरा०, कार्य मे० ॥१॥
आया विचरत सन्त गुणी व्रत आगला, मोरा० गुणी०।
सुण हर्ष्या नर नार गिणे शुभ भागला, मोरा०, गिणे० ॥
धर्म-देशना श्रवण करत गुण ग्राम जो, मोरा०, करत०।
वेगवती के ईर्षा उठी हद्धाम जो, मोरा०, उठी० ॥२॥
होणहार के विवश चेतना चल वसी, मोरा०, चेतना०।
देकर ताल, विहाल वेन यो कह हसी, मोरा०, वेन० ॥
लोक बोक अज्ञान समझ नहि ऊकरती, मोरा०, समझ०।
देखो इण पर आल अठो साधू जती, मोरा०, झूठो ॥३॥
रह्यो लोकां ने ताम साधु व्यभिचारियो, मोरा०, साधु०।
रमणी रमणी साथ करे अविचारियो, मोरा० करे० ॥

ढाल—पूर्व

पहुंच्यो सुर ले खदिरा अटवी, विचारे निज कषाय सटवी,
बाल की हत्या है मटवी, वसेगा नया वेर इनमे,
नर्क-गति पावेगे जिनमे ॥ राम० ॥६६॥

ढाल ९६ मी ॥ तर्ज—रेखता ॥

प्रवल हो आयू जिस नर का, जोर नहि चलता सुरवर का ॥टेर॥
देव उत वन मे चल आया, शिला-पट उसको धरवाया।
मरेगा अपने आप याही, देव चलदीना रख त्वाही ॥१॥
रथनुपुर रूपाचल ऊपर, चंद्रगति राणी-युत नरवर।
खेलन को आय गया चलकर, घूमतो देख लिया सत्वर ॥२॥
उठाई लक्षण अविलोकी, राणी पै पहुँच्या वन शोखी।
पुष्पवती पूछै प्रियवर मे, कुवर यह किसका सुरवर मे ॥३॥
कुँवर के तिलक किया भूप, राज्य का मालिक अनूप।
लेकर रथनूपुर आया कि, महोत्सव गहरा मँडवाया ॥४॥
प्रभू की महर भई भारी, प्रमुदित भइ परजा सारी।
सूर्य-सी शोभा लखताई, भामण्डल नाम दियो भाई ॥५॥
बढे है सुख मे वह लाला, धा-माता प्रेम-सहित पाला।
सुणो अब मथुरा महलो मे, राणीजी सूता सहलो मे ॥६॥
जागतो पुत्र नही पायो, राणी को हृदय कुम्हलायो।
करे आक्रन्दन शिर-धुनती, आँखो तो जल-वर्षा ढलती ॥७॥

ढाल ९७ मी ॥तर्ज—म्हारा छेल भँवर रो कांगसियो० ॥

म्हारा नयन-दुलारा नन्दन ने कुण वैरी ले गया रे।
ले गयो, ले गयो, ले गयो रे, मोद मनडा रो वे गयो रे ॥टेर॥
म्हारो अमोलख हीरो वीरो, क्यो कर नही सुहायो रे।
झगमग करतो दिवलो घर रो, आकर केम बुझायो रे॥
जावतडो कुछ नही के गयो रे ॥ म्हारा० ॥१॥
काठ करूं मैं जाऊँ कठीने, शिर-फोडी मर जाऊँ रे।
किसो अचानक दुखडो आयो, इणने केम पचाऊँ रे॥
कोइ मन्त्र मन मे रँगयो रे ॥ म्हारा० ॥२॥

मरग्यो मिजाज रति रंभा को अपछर साथ—
हाय गिर देवे बैठी लागो खटको ॥२॥
रोहिणी न मोहिणी जो आनकर जोड जुडे—
विद्याधरी के लागो जोर झटको ॥३॥
वाणी सबने सुहावे, दिल-दरियाव पावे—
सारी दुनिया सरावे ओ तो सुधा-घट को ॥४॥
आई उपवय' बाई, देवे किसे परणाई,
राजा सोचे मन माही, छायो पुन्य छटको ॥५॥
सोचे सचिव संघाते, मंत्री कोई बतलाते,
'मुनि मिश्री' यो जताते, प्रभा वृक्ष वट को ॥६॥

दोहा

देश उजाडे जनक को, अन्तरंग मदमस्त ।
प्रजा लहे पीडा प्रबल, लूटे देस समस्त ॥१॥

ढाल ६६ मी ॥ तर्ज—खबर नहि है जग मे पलकी ॥

दूत इक भेज्यो है नृपती, दूत इक भेज्यो है नृपती,
नगर अयोध्या दशरथ पासे की एती विनती ॥टेर॥
डाकू देश विणासे मेरा, अन्याई अपती ।
मै नही पहुच सकूँ उन सेती, निर्लज नीचमती ॥दूत०॥१॥
दूत आय दाखी दशरथ ने, भोडाणो भूपती ।
छीक रुक्यो सूर्य ने पेखो, बणी अणी विपती ॥दूत०॥२॥
श्रवण करत दशरथ झट ऊठ्यो, साजी सैन्य अती ।
रव सुणियो रण-तूर तणो तब, आयो राम रती ॥दूत०॥३॥
किण ऊपर पितुराज पधारो, करी कौन क्षती ।
पिता प्रकाशी बात बणी सो, अन्तरंग अगती ॥दूत०॥४॥
हुक्म दिरावो मैं उत जावो, देर नही स्फूर्ति ।
दशरथ तो देखत ही रेग्यो, वा मोहन-मूर्ति ॥दूत०॥५॥
मुजे जाणो है अवश्य लाला !, मौज करो सपती ।
हो सुतमात, हाल वय छोटी, डाकू है लपती ॥दूत०॥६॥
यह नही होने की है तातजी !, बात विना फबती ।
जंग जीत के विजनस आसो, 'मिश्री' टाल कथी ॥दूत०॥७॥

१ यौवनवय मे

ढाल १०६ ॥ तर्ज—खड़ी लावणी० ॥

ओढन शित-पट भाले निलवट, दृग-अंजन मंजन कीना।
कानो कुण्डल शीश-फूल पुनि कर्ण-फूल है रंगभीना॥
बाजूबन्द बोरखा कंकन हाथ-फूल की छवि न्यारी।
मुक्तामणि-माला मनहरणी रयण-हार गलबिच डारी॥
कटि-मेखल नूपुर नवरंगा बीटी छल्ला है छननन॥१॥
इन्द्राणी-सी आई जानकी पायल बाजै है रननन॥टेर॥
लचकत अंग केल-सा कोमल रंग मण्डप मे आन खडी।
रथ के इर्द-गिर्द है सहियो, आगे भाटणि चाल पडी॥
अमरी समरी कुमरी उतरी भमरी-सी श्री राज रही।
वासग-वेणी मृग-नेणी-सा केणी रेणी एक सही॥
कोकिल-कण्ठी गावै गौरडी बाजा बाजे है झननन॥इन्द्रा०॥२॥
राजा राणा वडा मराना विद्याधर दाना स्याना।
भे दिग्मूढ जानकी निरखत, भूल गये ताना वाना॥
जिसका पुण्य प्रबल है उसके पाने पडसी यह कन्या।
महल रोशन हो जासी उसका राजदुलारी है धन्या॥
रत्नजटित वेदी पर बाला बरमाला श्रीफल सननन॥इन्द्रा०॥३॥
जनक कहे जनपतियो जलदी चाप चढादो हिम्मत धर।
यदि चाहत हो कन्या-रत्न तो आय गया आला अवसर॥
कटि पट बाँध उठे छोगाला मूंछाला भुज-दन्ड सजी।
अहि अगनि ढिग दृग पडते ही रढियालो की बारे बजी॥
हो शर्मिन्दा अधोमुखानन करत करेजे से फननन॥इन्द्रा०॥४॥
विद्याधर भामण्डल सागे आया धनुप पै रीस भरी।
वदन वसन कर जलन लगे तब मूर्च्छा खा-कर गये पडी॥
लाया उठाकर मद्य पचार ही होन लगे अविलम्ब जहाँ।
चितायुक्त चिपटे खुर्शी पर विगर भाग्य तो मिले कहाँ॥
'मिश्री मुनि' कहे धर्म अराधो जीवन बनता है धननन॥इन्द्रा०॥५॥

ढाल—पूर्व

सन्नाटो सभा बीच सारे, छा गयो ऊंचा नहि भारे,
नारायन उठी ललकारे, जग नही विचार लाते हो,
क्षत्रिपन माफ लजाते हो॥राम०॥१०२॥

ढाल १०८ ॥ तर्ज—सरदारो ! थारो पचरग लहर्यो भीजे
म्हां का राज० ॥

गड कियो नहीं मूधरे रे यो अडियोडो काम हो,—
सरदारो ! थे तो थोडी ममता राखो म्हारा राज ॥
दो आदेश मोने सही रे, चाढू चाप अभिराम हो,—
मन धीरज धारो शुभ अगीरो देरावो म्हारा राज ॥१॥
भारी मतो भूचर भणे रे, हे रंग राजकुमार हो,—
क्षत्रियो रो मूडो उज्ज्वल आप करावो म्हारा राज ।
रामचन्द्र कमरो कसी रे, हंसे विद्याधर साथ हो,—
अेतो अब विजनस धनुष चाढने आसी म्हारा राज ॥२॥
धाया धनुष्य ने आसना रे, पेखे क्षत्रि-समाज हो,—
यह कैसे चाढै, किसी वीरता राखे म्हारा राज ।
वज्रावर्तज चापको रे, कर स्पर्श श्रीराम हो,—
अहि अगनी मिटकर कमल जेम कर आयो म्हारा राज ॥३॥
वेत्र तणी परे वालियो रे, खेंच कियो टंकार हो,—
गगनागण माही सुरवर जय-जय बोले म्हारा राज ।
पुष्प वृष्टि हुई जबे रे, हर्पी सब नर नार हो,—
वरमाला (रामगल) डाली सीताजी तत्काल म्हारा राज ॥४॥
धन्य-धन्य भूचर वदे रे, अपनी राखी आन हो,—
ए सूरजवंशी रास सूर्य प्रकटायो म्हारा राज ।
अर्णावृत्त चढावियो रे, लक्ष्मण लीला-माय हो,—
विद्याधर चिलखाया धनुष गमाया म्हारा राज ॥
भाग गया वैताढ्य पै रे, भाग्य बिना किम पाय हो,—
'मिश्री मुनि' दाखे रामयश के माही म्हारा राज ॥५॥

ढाल—पूर्व की

बुलाया दशरथ नृप ताई, भूचर नृप जनकादिक आई,
रहे सब जबरी पुन्याई, कुंवरसा फते किया सारा,—
विद्याधर भागे पग्वारा ॥राम०॥१०८॥
अयोध्यानाथ कहे वाणी, आप सबकी है महरबानी,
विराजो रनरंग के जानी, सवारी मथुरा मे आई,—
प्रेम से सीता बधाई ॥राम०॥१०९॥

गग-भागो राजाजी भाख्यो, गोते लीधी जी ।
यो का करो राणीजी थाने, कुण तम्ती दीधी जी ॥म्हा०॥२॥
औरो ने तो मंत्रित पाणी, आप दिरायो जी ।
मै मन मे हू मोटी कैगे, नाम भुलायो जी ॥म्हा०॥३॥
राजा कहे खोजा के साथे, भेज्यो पहले जी ।
क्यो नहि आयो कारण कांई, थारे उहले जी ॥म्हा०॥४॥
इतेक खोजो आयो महल मे, नृप फटकार्यो जी ।
क्यो देरी मे आयो जुल्म जबरो, करडार्यो जी ॥म्हा०॥५॥
सो कहे थो बूढापो मालिक, म्हारे छायो जी ।
पग घसीटतो चालू धीमे, मोडो आयो जी ॥म्हा०॥६॥
कर, पग, शिर धूजे नहि सूजे, कमरो काठी जी ।
सुणो नही कुण पूछणवालो, धी भइ माठी जी ॥म्हा०॥७॥
राजाजी ले घडो हाथ सूँ, राणी ताई जी ।
हाथो सूँ न्हवराई मन मे, वा हरपाई जी ॥म्हा०॥८॥
राजा सोचे यो बूढापो, म्हाने आसी जी ।
या गति हो जासी जरा री, लागो फांसी जी ॥म्हा०॥९॥
राज देय वड-पुत्र भणी लूं, दीक्षा धारी जी ।
सभा आय सरदारो से झट, सल्ला विचारी जी ॥म्हा०॥१०॥
मंत्रीगण सरदार सभी ने, नृप से अर्जी कीध ।
रामचद्र महाराज 'मिश्रि' सम, राज्य-योग्य प्रसिद्ध ॥११॥

ढाल १११मी ॥ तर्ज—आवो आवो हो नेम नगीना० ॥

आये आये है सत्यभूति मुनि, शहर अयोध्या-बाग ।
शहर अयोध्या बाग, जिनका चढता तप वैराग ॥टेर॥
चार ज्ञान पूर्व-धर पक्का, क्रियापात्र कमनीय ।
बहु शिष्यो से विचरत आये, संयम-धर रमणीय ॥आ०॥१॥
मिली सूचना, राजा दशरथ, पुत्रो सह परिवार ।
वंदन वो व्याख्यान सुनन को, आये गुरु दरबार ॥आ०॥२॥
विधियुत वदन करके भूधव, सन्मुख बैठे जाय ।
सुन्दर मुनिवर देवे देशना, विविध भाँति सहुमाय ॥आ०॥३॥
चन्द्रगती भामण्डल खेचर, रथावर्त्त गिरि जाय ।
जातो, मुनिवर नजरे निरख्या, उतर गये मनलाय ॥आ०॥४॥

गल-फासो राजाजी काढ्यो, खोले लीधी जी ।
यो का करो राणीजी थाने, कुण तस्ती दीधी जी ।।म्हा०।।२।।
औरो ने तो मंत्रित पाणी, आप दिरायो जी ।
मैं सब में हूँ मोटी कैसे, नाम भुलायो जी ।।म्हा०।।३।।
राजा कहे खोजा के साथे, भेज्यो पहले जी ।
क्यो नहि आयो कारण काई, थारे डहले जी ।।म्हा०।।४।।
इतेक खोजो आयो महल मे, नृप फटकार्‌यो जी ।
क्यो देरी से आयो जुलम जबरो, करडार्‌यो जी ।।म्हा०।।५।।
सो कहे ओ बूढापो मालिक, म्हारे छायो जी ।
पग घसीटतो चालू धीमे, मोडो आयो जी ।।म्हा०।।६।।
कर, पग, शिर धूजे नहि सूजे, कमरो काठी जी ।
सुणो नही कुण पूछणवालो, धी भइ माठी जी ।।म्हा०।।७।।
राजाजी ले घडो हाथ सूँ, राणी ताई जी ।
हाथो सूँ न्हवराई मन में, वा हरषाई जी ।।म्हा०।।८।।
राजा सोचे यो बूढापो, म्हाने आसी जी ।
या गति हो जासी जरा री, लागो फाँसी जी ।।म्हा०।।९।।
राज देय वड-पुत्र भणी लूँ, दीक्षा धारी जी ।
सभा आय सरदारो से झट, सल्ला विचारी जी ।।म्हा०।।१०।।
मंत्रीगण सरदार सभी ने, नृप से अर्जी कीध ।
रामचद्र महाराज 'मिश्रि' सम, राज्य-योग्य प्रसिद्ध ।।११।।

ढाल १११मी ।। तर्ज—आवो आवो हो नेम नगीना० ।।

आये आये है सत्यभूति मुनि, शहर अयोध्या-बाग ।
शहर अयोध्या बाग, जिनका चढता तप वैराग ।।टेर।।
चार ज्ञान पूर्व-धर पक्का, क्रियापात्र कमनीय ।
बहु शिष्यो से विचरत आये, संयम-धर रमणीय ।।आ०।।१।।
मिली सूचना, राजा दशरथ, पुत्रो सह परिवार ।
वंदन वो व्याख्यान सुनन को, आये गुरु दरबार ।।आ०।।२।।
विधियुत वदन करके भूधव, सन्मुख बैठे जाय ।
सुन्दर मुनिवर देवे देशना, विविध भाँति सहुमाय ।।आ०।।३।।
चन्द्रगती भामण्डल खगचर, रथावर्त्त शैलाय ।
जाता, मुनिवर नजरे निरख्या, उतर गये मनलाय ।।आ०।।४।।

स्फर्श-चरण वन्दन-कर सारे, बैठे सभा मँजार।
विनजाणे अनरथ हो जाता, आख्यो है अणगार ॥आ०॥५॥
भामण्डल अरु सीताजी का, पूर्व-भव अधिकार।
सुना दिया है स्पष्ट गुरू ने, दी भ्रान्ती सब टार ॥आ०॥६॥
युगल पणे भामण्डल सीता, मथुरा जनक निवास।
विदेहा-राणी उदरे उत्पन्न, हुए उभय सुखरास ॥आ०॥७॥
पिंगल-देव पूर्व-भव वैरी, हरण कियो तत्काल।
चद्रगती घर वढ्यो प्रेम से, वर्त्या मंगलमाल ॥आ०॥८॥
नारद-योग परणन की इच्छा, भई पूर्व संस्कार।
अज्ञात-पणे यह हुआ गोटाला, सोचो हृदय मँजार ॥आ०॥९॥
जातिस्मर्ण लियो भामण्डल, मुनि वाणी सतमेव।
खेद पायो कृत-कारज सेती, मूर्च्छित व्है ततखेव ॥आ०॥१०॥
रामचन्द्र ऊठाई लीधो, स्वस्थ बनायो ताम।
सीता रे ऊठी पग लाग्यो, पाया सुख अभिराम ॥आ०॥११॥
अविनय कीधो माफ करीजो, सीता दे आशीस।
चिरंजीवी भ्राता तुम रहिजो, सफली होय जगीस ॥आ०॥१२॥
रामचन्द्र शाला से मिलिया, बाँह पसारी तेथ।
ओ सगपण 'मिश्री' सूं मीठो, परतख दीठो एथ ॥आ०॥१३॥

—ढाल-पूर्व—

जनक अरु विदेहादे राणी, बुलाया दशरथ दिलठानी,
आया सुत मिलिया हर्षानी, मुनिश्री कीधो आनंद—,
विकसित भे ज्यो कौमुदि-चन्द ॥राम०॥१०६॥
चंद्रगति जनक खमायो है, राज्य भामण्डल पायो है,
खगपति संजम ठायो है, मिलीजुलि निज-निज घर जावे,
मुनी-ढिग दशरथजी आवे ॥राम०॥१०७॥

ढाल ११२ मी ॥ तर्ज—प्रस्तान से उत्तरी परी० ॥

मुनिवर से नृप अरज करी, नाथ! सुनादो पूर्व चरी ॥टेर॥
सत्यभूति मुनिवर सतवाणी, महाराजा मन-मंदिर मानी,
ज्ञानवन्त की बात खरी ॥मु०॥१॥
शेनापुर मे भावनशाह, पत्नि दीपिका थी गुण-गाह,
उपास्तिका बेटी सखरी ॥मु०॥२॥

मुनिवर की वा निन्दा करी, भवारण्य मे गहरी फिरी,
नीच-गती में जाय परी ।।मु०।।३।।
जीव तुम्हारो हिय लो धार, अब सुनिये आगे अधिकार,
मालुम पडसी कौन करी ।।मु०।।४।।
चंद्रनगर धनगिरि वर-नार, वरुण नाम सुत शुभ व्यवहार,
मुनिजन जाणे जीव जरी ।।मु०।।५।।
सुख दु ख दोनो के अनुसार, मति उपजे जीवन में सार,
धातकि-खण्ड उत्तर कुरु वरी ।।मु०।।६।।
युगल पणे जा उपज्यो है सोय, तीन पल्यनो आयुप जोय,
त्याथी चव सुर-गती सरी ।।मु०।।७।।
पुखलावती राजा नन्दघोप, पृथ्वी राणी सुखनो पोप,
नन्दीवर्धन सुत जय-वरी ।।मु०।।८।।
नंदीवर्धन को देकर राज, यशोवर नामी मुनिराज,
तिणमुख दीक्षा वह उचरी ।।मु०।।९।।
नंदीवर्धन श्रावक व्रत पाली, पंचम-कल्प लियो जाय सँभाली,
वर्त्तै स्वेच्छाचार घडी ।।मु०।।१०।।
पूर्व विदेह वैताढ्य ऊपरे, उत्तर श्रेणी शशिपुर शुभ रे,
रत्नमाली नृप वीर-वरी ।।मु०।।११।।
विद्युतलता तास पटरानी, सूरजजय सुत था गुणखानी,
सेनावल भुजवल जवरी ।।मु०।।१२।।
रत्नमाली चढियो दल लेकर, वज्रनयन सिहपुरी के ऊपर,
रीस वधारी वो करडी ।।मु०।।१३।।
सिहपुरी को बालन लागो, जनता उर दुस्सह दुख जागो,
पशु पक्षी भी रहे जरी ।।मु०।।१४।।
प्रोहित जीव पूर्व-भव केरो, सहस्रार सुरवर आ नेरो,
फटकार्यो है उसी घरी ।।मु०।।१५।।
पानिक ऐसो सूज्यो कैसे, पूर्व-भव भूरीसुन्दर जैसे,
'मिश्री मुनि' कहे पूर्व-चरी ।।मु०।।१६।।

दोहा

आमिष खाणो छोड्यो, विप्र मचाड्यो आप ।
वोही प्रोहित एकदा, स्कंध हण्यो गज थार ।।१।।

भूरीनन्दन भूपती, गज आयो घर तास।
सो हाथी रण मे मरा, भूरीनन्दन वास ॥२॥

—ढाल-पूर्व—

गंधारी राणी उर उपना, नाथ अरि सुन्दर ही थपना,
ऊपना जातिस्मर्ण अपना, संयम ने अष्टम कल्प माही-
देवपन पाया सुखदाई ॥राम०॥१०८॥

भूरी सुनन्दन भे अजगर, नर्क गो दूजी दुष्कृत कर,
मनुष्य भये रत्नमालि सुन्दर, इसीलिए समजावण आया-
मास तज खादा दुख पाया ॥राम०॥१०९॥

ढाल ११३ मो ॥ तर्ज—मान न कीजे रे मानवी० ॥

आतुर हुयने आज भी, इसडा करो अपराध।
श्रवणकरी यो समझगो, पायो चित समाध ॥१॥
वैर विसारो प्राणियो, जिणसूं सुधरे जमवार।
वैर वढायो वढत है, तजियो उपजे नहिं तार ॥टेर॥
सूर्यजस ले साथ मे, देके कुलनंदन राज।
संजम पाली ने ऊपना, सप्तम स्वर्ग सुसाज ॥वै०॥२॥
सूर्यजस चवकर स्वर्ग से, हुवो दशरथ राजान।
रत्नमालि भो जनकजी, कनक उपम सु मान ॥वै०॥३॥
नदीघोप ग्रैवयिक थी, सत्यभूति हम होय।
साथे तीनो ही भव किया, दाख्यो ज्ञान सूं जोय ॥वै०॥४॥
राजा राच्यो वैराग मे, आया सभा मे चाल।
मंत्री, सरदारो, पुत्र ने, राण्या आदि भोपाल ॥वै०॥५॥
संयम लेसू मैं सादरो, सारूं आतम काम।
थोडा सुस्तावो तातजी! भाख्यो श्रीमुखसूं राम ॥वै०॥६॥
दशरथ दाखे ससार री, स्थिति परिवर्तन रूप।
समय व्यर्थ नही खोवणो, चिन्तु आत्म-चिद्रूप ॥वै०॥७॥
भर्त कर-जाडी भाखियो, मैं भी आपरे संग।
व्हाला व्रतो ने पालसूं, खेलूं कर्मो सूं जग ॥वै०॥८॥
दूजो विरह जो आपरो, म्हासूं नही खमाय।
वृद्धावस्था मे चाकरी, करणी म्हाने है न्याय ॥वै०॥९॥

भोगो सूं वृद्धी भव भणी, भाखी आगम माय ।
नर्क निगोदो जावणो, दमडी नही आवे दाय ।।वै०।।१०।।
याते आज्ञा दे दीजिये, विस्मित बाल गोपाल ।
'मिश्री मुनि' कहे सांभलो, एक शत तेरमी ढाल ।।वै०।।११।।

—शिखरिणी-छन्द—

हटे ना हाथी मे हरिणपति जैसे हट गये,
महा योधा खोधा अनड़-नर गोधा पच मरे ।
मुरारी शक्रादी प्रबल बलवाले पिघलगे,
स्थिती जो कर्मो की हटत नहि भोगे बिन कभी ।।१।।

ढाल ११४ मी ।। तर्ज—जो आनंद मंगल च्हावो रे० ।।

केकइ राणी सोचे रे अब क्या करना मुज काम ।।टेर।।
पति, सुत दोनो जाते, वो रोके से न रुकाते ।
मेरे दिवस दुखी बन आते रे, रहता नहि सुक्ख छदाम ।।के०।।१।।
मैं एकलडी बनजासूं, विरह से फाट मरजासूं ।
सब जीवन होगा फासू रे, यह शून्य लगेगा धाम ।।के०।।२।।
पतिराज न रुकने वाला, वैराग्य चढा हे आला ।
मैं रोकूं अपना लाला रे, मागू वर अभिराम ।।के०।।३।।
होय रहि है तिलक की त्यारी, श्रीराम भणी इणवारी ।
व्यवधान इसी में डारी रे, मम पूरण होसी हाम ।।के०।।४।।
विधि खेल अनोखा खेला, राणी ने करा झमेला ।
अवरुद्ध किया है गेला रे, कर्मो का काम तमाम ।।के०।।५।।
राणी नृप पासे आई, रोवतडी शीश झुकाई ।
प्रभु जाते आप छिटकाई रे, वर मेरा भया निकाम ।।के०।।६।।
अब मेरा वर बगसावो, फिर संयम आप लिरावो ।
नृप कहे हां फरमावो रे, ऋण उतर जाय इस धाम ।।के०।।७।।
इक चरण-निषेधन टाली, लो अन्य वस्तु तुम आली ।
'मिश्री' नहि सोची भाली रे, क्या मागेगी मम वाम ।।के०।।८।।

ढाल ११५ मी ।। तर्ज—मांड ।।

सुणो आप दयाला, मम महिपाला अवधपुरी का राज ।
बंध भरत भोपाला, सोगनवाला, उस सिर व्हावूं ताज ।।टेर।।

दशरथ सुणतो शंकियो रे, कैसी अडाई वात।
त्यारी तिलकरी रामचन्द्र ने, कर रह्यो सारो माथ हो ॥सु०॥१॥
सब गुण सपन्न, प्रथम कुलोत्पन, राज्य संभालन योग।
उसको टारी द्यु दूजा ने, व्यर्थ बढानो रोग हो ॥सु०॥२॥
शोकानन नृप राज्यसभा में, तखत विराज्या आय।
चिन्तित पेखी परिपद वारा, आरोची मन-माय हो ॥सु०॥३॥
इतने राम पधारिया रे, मुजरो करवा तेथ।
चिन्ता-ग्रसित पितु पेख पयंपै, क्या कारण है एथ हो ॥सु०॥४॥
स्वामिन् आज उदासी कैसी, ऐसी न देखी पेल।
कौन उथापी आज्ञा आपरी, या कोइ वणियो खेल हो ॥सु०॥५॥
राजाजी कुछ बोल्या नाँही, इपित हँसित कही वात।
सयम मे अंतराय पडत है, यह हमको न सुहात हो ॥सु०॥६॥
वात छिपानी योग्य नही है, मेरे से अहो तात!।
इसो कुपातर मोने समजो, 'मिश्री' यो दरशात हो ॥सु०॥७॥

—ढाल-पूर्व—

समज मत इसडी तू लाला, सुपातर गुण-भूपित व्हाला,
तूं है मुज कुल का उजियाला, भूल एक मैंने करडारी-
उसीकी चिन्ता है भारी ॥राम०॥११०॥
भूल को तूल नही दीजे, हुई सो मुज को कहदीजे,
तात की आज्ञा मे वहिजे, मेरा कर्त्तव्य हि पालूंगा,-
कथन तो कवहि न टालूंगा ॥राम०॥१११॥

ढाल ११६ मी ॥ तर्ज—ख्याल की० ॥

सुण लाल! हमारा, किसविध दाखूं रे वात अजोग है ॥टेर॥
स्वयम्वर जीत्यो जव थारी, चूल मात केकइ ने।
रथ हाक्यो थो म्हायरो रे, चक्रगती सूं वहने रे ॥सु०॥१॥
वर दीनो उसको उणविरियो, वा भण्डार रखायो।
अव माग्यो है साफ अणूतो, स्वारथ ही दरशायो रे ॥सु०॥२॥
राम कहे माँगे सो देदो, कर्जो मती रखावो।
श्रीजी री आज्ञा मे सारा, काई विचार उरलावो जी ॥सु०॥३॥
दशरथ कहे सब राजविलायत, भरत भणी वा च्हावे।
किसी तरह मै दे नहि सकता, परम्परा ढहजावे रे ॥सु०॥॥४

पूज्य पिताजी धन्यवाद है, आछो फिकर करायो।
खोद्यो पहाड निकलियो चूहो, पिछतावो विसरावो जी ॥मु०॥५॥
नही राज्य लेवसूं, भरत हमारो प्यारो वीर है ॥टेर॥
वडी खुशी सूं तिलक करावो, भरत सोही है राम।
चारो वेटा आपरे सरे, ज्यो दृग दाई वाम जी ॥न०॥६॥
तात तणे शिर देणो राखी, हे लानत लूं राज।
जल्दी बुलावो भरत ने सरे, तखत बिठाडू आज जी ॥न०॥७॥
सारी सभा देखती रहगी, सचिव और सरदार।
धन्य धन्य क्या ममता मारी, भक्त तात सुखकार जी ॥न०॥८॥
आगल भर धरती रे कारण, दुनियो राड मचावे।
इसड़ो मोटो राज छोडणो, कहो किणरे मनभावे जी ॥न०॥९॥
वुला लिया है भरत को सरे, कहे राम धर नेह।
चिन्तातुर पितु की चिन्ता को, मेटो द्रुत गुणगेह जी ॥न०॥१०॥
राज्य अयोध्या को संभालो, पिता हुक्म परमाण।
करलीजे सुण वँधव मेरा, तू हे चतुर सुजाण जी ॥न०॥११॥
भरत कहे मै तात साथ मे, लेसू संजम-भार।
पदवी-धारक दादा भाई, आप राज्य-आधार जी ॥न०॥१२॥
कहन सुनन पर ध्यान न देणो, करणो काम विचार।
करतो नही व्हे हाँसी जग मे, कहे 'मिश्रि' अणगारजी। न०॥१३॥

—चन्द्रयणा-छन्द—

दाखे दशरथ भूप भरत तूं क्या करे,
मोर प्रतिज्ञा भंग करानी है शिरे।
करत जंग धर रग वचन तुज मात ने,
मै दीधो थो तत्र विचारो वातने ॥१॥

ढाल ११७ मी ॥ तज—नवीन रसिया० ॥

भैया! क्यो करते अन्याय, राज्य मैं हरगिज नही करसूं।
राज्य मैं हरगिज नहि करसूं, जिनेश्वर दीक्षा मे वरसूं ॥टेर॥
अवगा जान अरुण व्है ओछी, पोची वात निकारे।
घर-भञ्जन नारी को चोटे, नीती-शास्त्र पुकारे ॥भै०॥१॥
पालन वृद्धी, आवे धंधी, ऊंची जिर परतन।
चरण-धरी श्री रामचंद्र के, भरत एम पभणंत ॥भै०॥२॥

हरगिज राज लेवूं नहिं मैं तो, चवडे भाखुं भ्रात ।
सारा ही सरदार सुणे है, छानी नहि तिलमात ॥भैं०॥३॥
तात कहे आज्ञा नहिं पाले, मम ऋण नहिं उतरंत ।
चाह नही है थारे राजरी, ए चवडे दीखंत ॥भैं०॥४॥
विनय बाप को करवो बेटा, भ्रात वचन हियधार ।
माय मनोरथ पूरण करवा, पुत्र तणो आचार ॥भैं०॥५॥
नहीं समजू मैं राज काज में, परम्परा की धार ।
नाहक बोझो शिर पर रालो, क्या निकमेगा सार ॥भैं०॥६॥

—छप्पय-छन्द—

देवो दान कितोक, व्रत पालो कितनाई ।
मौन रखो अणमाप, भक्ति प्रभु की चितलाई ॥
संत समागम करो, भरो भलपन सुघडाई ।
करो तपस्या खूब, फेर रखलो नरमाई ॥
जाप जपो, इन्द्रिय दमो, पेडो छोडो पापरो ।
निष्फल सारा समझलो, केण न माने बापरो ॥१॥

दोहा

बाप मान ईश्वर सरिस, जो आज्ञा पालन करे ।
सत्य कहूँ संसार मे, वे मानव वेगा तिरे ॥१॥

ढाल ११८ मी ॥ तर्ज—सूरो ने लागे वचन रो ताजणो०॥

भरत नयनाश्रुत होकर तिणसमे, राम चरण-ग्रही बोल्यो ताम ।
आप छतो मैं राज्य न लेवसूं, एक कहो या एक ही ठाम ॥१॥
सुणलीजो सारा, दिल मे विचारी वचन निकाल जो ॥टेर॥
राम सुणतो ही नृप-पद लागियो, साचो भरतनो कहनो एह ।
म्हारे बैठा नही राज सँभालसी, इणमे जरा न सन्देह ॥सु०॥२॥
ओलो अयोध्या छोडूँ मैं सही, जावूं वनवासे निश्चित आज ।
महर करावो म्हारे ऊपरे, आज्ञा फुरमावो श्री महाराज ॥सु०॥३॥
वचन तो लागो मानो तीरसो, मूर्च्छा खाइने गुडियो भूप ।
रामचन्द्र तो चाल्यो छोड ने, भरत रोवे है बण्यो विद्रूप ॥सु०॥४॥
चरण-कमलो मे नमियो रामजी, जाकर माता रा महल मजार ।
हूँ तो जावूछ वनवासे सही, मो-सम जाणीजो भरत उदार ॥सु०॥५॥

वचन पितारो पूरण पालणो, राज्य भरतजी ने द्यो सँभलाय ।
म्हारे रहतो नही भाई हाँ भरे, इणमुद्दे इत रहणो अब न सुहाय ॥सु०॥६॥
माता, वेराजी मतना होवजो, कायरता केरो नही है काम ।
भोग वियोग कर्मानुसार है, सारो सहलेणो है सखवाम ॥सु०॥७॥

दोहा

यह सुणतो अपराजिता, धसक धरणि ढलजात ।
सावचेत कीनी त्वरित, फिर-फिर सा मूर्छात ॥१॥

ढाल ११६ मी ॥ तर्ज—बोलो न चाहे बोलो, दिलजान से फिदा हूँ० ॥

मुजको न छोड जाना, दिल-जान से दुखी हूँ ॥टेर॥
अयि नयन का सितारा, प्राणो से मुझको प्यारा ।
कैसा वचन निकारा, दिल-जान से दुखी हूँ ॥१॥
पतिराज जाने वाले, फिर तूँ भी वन को चाले ।
उर शूल-सा यह साले ॥दिल०॥२॥
मरने मे कौन बाकी, ऐसी विपद् की झाँकी ।
हा ! हा ! प्रभू ने न्हाँखी ॥दिल०॥३॥
कहे राम मातु मेरी, कायर बने क्यो एरी ।
हो शेरनी के जेरी ॥दिल०॥४॥
एकाकी शेर फिरता, गिरि गव्हरो मे निरता ।
माता न सोच जिरता ॥दिल०॥५॥
शिर बाप का जो देणा, रखकरके घर मे रेना ।
उत्तम को योग्य हे ना ॥दिल०॥६॥
समझा के राम चलता, माता के नीर ढलता ।
वो वीर रस मे झिलता ॥दिल०॥७॥

—ढाल-पूर्व—

रामजी वनवासे जावे, खबर यह सीता सुन पावे,
श्वसुर को आकर सिर-न्हावे, महलजा सासू-पगलागी-
जावूं संग आज्ञा ही माँगी ॥राम०॥११२॥

ढाल १२० मी ॥ तर्ज—राग पीलू, ताल० ॥

आज्ञा दिराबो अम्मा, पति संग जाऊँगी, पति विन रह न पाऊँगी ॥टेर॥
पति हमारा वन वन फिरसी, मैं उत मौज उडाऊँगी ।
कौन कहेगे पतिव्रता मुजको, शैय्यो हंसी उडावूगी ॥१॥

पति अरोगेगा वहाँ वनफल, मैं भल भोजन खाऊँगी ।
लानत लानत है मुज लानत, कैसे शोभ वढाऊँगी ॥२॥
पति पौढेंगे कंकर धरणी, मैं शय्या सुख पाऊँगी ।
ऐसी कुपातर वनकर माता, जननी दूध लजाऊँगी ॥३॥
पति-सेवा सवसे है मोटी, सारा दुख सहजाऊँगी ।
पती-विरह से तड़फ-तडफ कर, एकलड़ी मर जाऊँगी ॥४॥
पति चलेंगे मेरे अगाडी, पद-रज शीश चढाऊँगी ।
स्वर्गीय सुखो से वढकर 'मिश्री', मीठे वचन सुनाऊँगी ॥५॥

—चन्द्रायणा—

खोले लीधी खैंच सासू वालक जिसी ।
न्हवराई दृग नीर वाणी दाखी इसी ॥
तूं कित जावे छौर लाल को जाणदे ।
म्हालो नही है विदेश ज्यादा मत ताणदे ॥१॥

ढाल १२१ मी ॥ तर्ज—पनजी मूंडे वोल० ॥

मतजा वनवासे, लाखीणी लाडी तूँ दुखपासी ए ॥टेर॥
वाहन विविध ऊपरे वैठी, तूँ है चाणलहारी ए ।
अलवाणे पगल्यो सूं चलणो, दुक्करकारी ए ॥मत०॥१॥
शीत, तावड़ो, वर्षादिक तो, सारो सहणो पडसी ए ।
कठे नास्ता भोजन पाणी, भूखो मरसी ए ॥मत०॥२॥
कोमल काया, धरणी सोणो, नयनो नीद न आसी ए ।
मान कह्यो मतजा रहजा तूँ, फिर पिछतासी ए ॥मत०॥३॥
प्रिय पगवन्धन परदेशो मे, निपट कहीजे नारी ए ।
नारी तो चौवारी भीतर, है रहनारी रे ॥मत०॥४॥
सुन्दर फल देखा ने पंछी, टूट पडे ततकाला ए ।
नारी निरखत कामी नर उर, ऊठे ज्वाला ए ॥मत०॥५॥
मान मान, म्हारी प्यारी वहुयर, छोडो जिद जावारी ए ।
सासूरी सेवा सूं सेवा, कौन दूजारी ए ॥मत०॥६॥
आई ऐसी मत फरमावो, मैं नही रहवनवारी ए ।
पती साथ दुख भी सुख जैसा, है महतारी ए ॥मत०॥७॥
पद-प्रणमी चाली सतवन्ती, हर्ष हिये न समावे ए ।
जिसो उमंग व्याह की विरिया, सो दर्शावे ए ॥मत०॥८॥

—ढाल-पूर्व—

नगर के बाहिर तब राम, ठहरकर बोले गुण-धाम,
पधारो पाछा निज धाम, कृपा सब राखी जो आप-
माऽतपण हो तो अमाप ॥राम०॥११५॥

दिलासा परजा को दीधी, सभी मे आशीसो लीधी,
शिक्षा दी इमरत-सी सीधी, लोटाया लोको को तास-
पधार्‌या राम जी वनवास ॥राम०॥११६॥

ढाल १२४ मी ॥ तर्ज—ख्याल फागण की० ॥

सूनी कर गया अवधपुरी राम, सूनी करगया० ॥टेर॥
मूरत-मोहनी, सूर्त-सोहनी पाछा कद आसी धाम ॥सू०॥१॥
वाणी मीठी अमिय-समानी, दीनो का सार्‌या काम ॥सू०॥२॥
छवी नयन मे लेसी ओझल का, होल ऊठेगा हृदय-धाम ॥सू०॥३॥
मातृ-पितृ की भल भक्ती, जबर निभाइ अभिराम ॥सू०॥४॥
कैसो भ्रातृ-प्रेम निभायो, लक्ष्मण जी तो ललाम ॥सू०॥५॥
सत्यवती पतिवरता सीता, साथ चली तज आराम ॥सू०॥६॥
ओलू आसी पल-पल याकी, सुख पासो दर्शन पाम ॥सू०॥७॥
भूल न जाजो, मत विलमाजो, झट आजो मोरा स्याम ॥सू०॥८॥
झरत नयन जन पाछा मुडिया, अवध प्रजा पद-नाम ॥सू०॥९॥

ढाल ११५ मी ॥ तर्ज—लावणी० ॥

तीनो जन तिनवेर बढे है अगाडी, बढे है अगाडी।
नहि चिन्ता मुख-चन्द जावे बलिहारी॥
गाम गाम के मालिक, परजा सारी, पर०।
विनती करे कर जोर मेवा दो प्यारी॥
यही विराजो आप कृपा कर भारी॥१॥
धन्य धन्य श्री राम लगन सिया नारी॥टेर॥
कही न ठहरे जाय रहा वन कानी, रहा०।
नही मिले वगन पर भोजन अरु वर पानी॥
हिम्मत धर चाले म्हाले मृगवन जानी, मृग०।
डगर डगर, तरु नग पहाड पुन-प्राणी॥
नही गिणे विपद को वीर धीर गुणधारी॥ध०॥२॥

भरत न लेवे राज, मात-दुतकारे, मात० ।
क्या किया घोर अन्याय भ्रात गया वारे ॥
राम-लखन का विरह सहन नही होता, स० ।
पल-पल मे भरतादीय सभी जन रोता ॥
पडी अंतराय दीक्षा की नृप के भारी ॥ध०॥३॥
सामन्त और मंत्रीश भेजिया लारे, भेजिया० ।
लावो राम मनाय भरत नही धारे ॥
राम न माने वात लौट नही जावे, लौट० ।
आगे जाता अटवी भयानक आवे ॥
भाखे अयोध्या-ईश जावो आगारी ॥ध०॥४॥
साथ चलन नहि ढंग कष्ट है आगे, कष्ट० ।
कुशल-खेम कहदीजो पिता ने सागे ॥
मो-सम मानो भरत भलो है भाई, भलो० ।
तात कथन ले मान यही सुघडाई ॥
पाट-पती है वो ही आज्ञा अधिकारी ॥ध०॥५॥
रुदन करत सव गये जीवन धिक्कारी, जी० ।
हा ! विधि कैसी करी विछोहा - डारी ॥
तीनो सरिता तिरे वडी वह ऊँडी, वडी० ।
नीठ लही है तीर भयंकर भूँडी ॥
ऊभा देखे सजन लगे क्या कारी ॥ध०॥६॥
आँखो ओजल होत पाछा वे थिरिया, पाछा० ।
अवधपुरी को आय भूप से मिलिया ॥
नहि आवे महाराज महनत कर लीनी, मह० ।
भरत सँभालो राज भूप कहदीनी ॥
सो वातो की एक वात न इच्छा म्हारी ॥ध०॥७॥
लावू राम ने जाय साथ महतारी, साथ० ।
सचिव और सामन्त चले है लारी ॥
नही चले राम विन राज काम रा कर्ता, का० ।
लावूं उसे मनाय, दीख लो भर्ता ॥
अघ हा ! कियो अथाग, अवश फैलारी ॥ध०॥८॥
ली वदनामी शीश काम नहि सरियो, काम० ।
तीनो त्रिया सुनि रोज, हृदय मम जरियो ॥

राम लक्ष्मण अरु वहु पाछा आजासी, वहु० ।
ले सेना अपने साथ केकइ चाली ॥ध०॥६॥

दोहा

खोज करत छट्ठे दिवस, दूर थकी देखन्त ।
रेणू उडती जानकी, प्रभु से यों पभणन्त ॥१॥

ढाल १३६ मी ॥ तर्ज—करलो गुरुवर के गुणगान० ॥

सावधान हो जावो स्वामिन् !, आ रही फोज महान ।
कौन पता यह कौन आत है, शत्रू मित्र पिछान ॥टेर॥
पद्म चाप कर धार लिया है, लक्ष्मण से संकेत किया है ।
लक्ष्मण कहे नहिं बात डरन की, क्या टिकते इत आन ॥आ०॥१॥
देख पताका राम सुनाई, अवध-भूप की फोज दिखाई ।
इतने मे तो भरत अगाही, उतरा है तिण थान ॥आ०॥२॥
राणी केकइ वच्छ-वच्छ करती, सन्मुख आई अंसुवन झरती ।
राम पधारे पद-शिर-धर के, पूछत क्षेम कल्यान ॥आ०॥३॥
लूंबी शिर छाती सूं लगायो अधिको उनमे प्रेम जगायो ।
रामानुज अरु सत्यवती भी, चरण नमे ज्यु लतान ॥आ०॥४॥
भरत लग्यो चरणो लिपटाई, रामचंद्र लियो गले लगाई ।
बांह-भीड मिलिगे दूहुं भाई, रोम-रोम तब गे हुलसाई ।
सजल आंख चल पडी प्रेम की है सच्ची पहिचान ॥आ०॥५॥
कुशल-क्षेमनी पूछी बातो, भरत कहे अभ्यागत भातो ।
छोड पधारे केम हमारे रामचन्द्र भगवान ॥आ०॥६॥
रती कपट मे मै नहिं समझू, आप बडे है गा लो समजू ।
सरल भाव मे कही थी मैंने, तूल उसको दिया आपने ।
चारो हत्या को पाप लगे जो मृषा बोलूं इण थान ॥आ०॥७॥

ढाल १२७ ॥ तर्ज—नदीन रसिया० ॥

बेटा ! मनकर इतनी रीस, लगा अपराध मुझे भारी ।
लगा अपराध मुझे भारी, नीच मतिवाली मै नारी ॥टेर॥
ओछी, बुद्ध मैंने परजाली, सबके हृदय मे आग प्रजारी ।
सभी बिगारी बात हाथ मे अपयश करनारी ॥१॥

सहज-स्वभावे नारी जाती, क्लेश करण मे रहवे ताती ।
परघर-भंजण जाण अठे निज घर की दुखकारी ॥१॥
जो कुछ भी अज्ञानपणा से, तुम को दुख दीधा ।
सभी खमो बडपुत्र राय के, विनती लो धारी ॥३॥
राजराजेश्वर, रामचंद्रजी, लखन सचिव अति भद्रजी ।
छत्रधारी है शत्रूघन अरु मैं पोल पहरेदारी ॥४॥
भरत इसीविध करी प्रार्थना, मेरे तो है रती स्वार्थ ना ।
मानो पधारो महाविचक्षण, विनय सुनो म्हारी ॥५॥
भैय्या ! यह नही होनेवारी, सारी सभा मे मैं कहडारी ।
दोनो है मौजूद मृपा किम करदूं इणवारी ॥६॥
सबजन बैठों मात युक्त ही, मेटू शर्म वो इसी वक्त ही ।
मेरी आज्ञा नहि लोपे भरतजी, भक्त परम ज्हारी ॥७॥

—ढाल-पूर्व—

सीता ने जल-घट मँगवाया, लखण-युत भरत शीश छाया,
तिलक उसके शिर करवाया, रामाज्ञा मान राज्य करना-
प्रत्युत्तर दे न सकै वरना ॥राम०॥११७॥
सभी की शाख भरत राजा, अयोध्या-गादी का ताजा,
बनाया राम लखन आजा, प्रजा को पुत्र सरिस पालो-
राज्य को सुन्दर रखवालो ॥राम०॥११८॥

दोहा

दी शिक्षा भल भरत को, खुशी भयो परिवार ।
पद-प्रणमी सब लौटगा, अवधपुरी तत्काल ॥१॥

ढाल १२८ मी ॥ तर्ज—ऋद्धि वृद्धि के दाता० ॥

जो ममता को जीते मानो वो ही पुरुप प्रधान ॥टेर॥
धन्य राम लक्ष्मण को प्यारे, अवधपुरी-सा राज्य विसारे ।
पितु आग्या शिर धारे वोही पुत्र सुजान ॥१॥
आये अयोध्या सब हर्षाये, राज्य-व्यवस्था ही करवाये ।
राम-पादुका रखी वहाए, भरत महा पुनवान ॥२॥
सूर्य-वंश का गौरव छाया, सब के भरत भूप मनभाया ।
एकछत्र करवाया न्यायी करते न्याय पिछान ॥३॥

देव गुरू शुध धर्म दृढाया, दया-धर्म को ऊँचा लाया।
दशरथ संयम को अपनाया, करके सब पचखान ॥४॥
सत्यभूति गुरु धारन कीना, कर्मो ने दावानल दीना।
स्वात्म-सुधा-रस पीना, 'मिश्री' करत बखान ॥५॥

—चन्द्रायणा—

तीनो प्राणी अग्र चले चित चाव से।
मेलंता केड ग्राम देखता भाव से॥
चित्रकूट कड ग्रीस विराज्या रामजी।
सेवा करे अनेक सुधारे काम जी॥१॥

ढाल १२६ मी ॥ तर्ज—अनोखा भँवरजी हो० ॥

चित्रकूट सूँ चालिया हो रामजी, अयवंती वर देश।
पथ-श्रम टालेवा भणी हो रामजी, तरुतल जाय नरेश॥१॥
रसिक जन रंग के हो, पाठको', सुणो कथा सुखमाल॥टेर॥
सीताजी अति थाकिया हो, भ०, लक्ष्मण पायो नीर।
तिहुँ बैठा वातो करे हो, भ०, राम कहे धर धीर॥र०॥२॥
सल्प समय से जाणिये हो, भ०, ऊजड जनपद एह।
पूछी ने निर्णय करो हो क, भ०, कोइयक ने घर-नेह॥र०॥३॥
इतेक पंथियो आवियो हो क, भ०, वातो मे हुँशियार
पूछे प्रभुजी उण-भणी हो, भ०, रंजित व्है तिणवार॥र०॥४॥
सो कहे स्वामी साँभलो हो, प्रभुजी, सत्य प्रकास् वात।
ध्यान देई ने दाखसूँ हो, प्रभुजी, 'मिश्री मुनि' दर्शात॥र०॥५॥

ढाल १२३ मी ॥ तर्ज—राधेश्याम ॥

उज्जैणी का भूप सिंहोदर प्रवल वली कहलाता है।
दशागपुर का वज्रकर्णी सामन्त एक मनभाता है॥
महा शिकारी वन-वन भटके पशु संहार कराता है।
असहाय पशु-पक्षी ऊपर, भारी गदर मचाता है॥१॥
प्रीतीवर्धन नामक मुनिवर, खडा काउसग कर वन मे।
वज्रकर्ण भाषे तुम कुन हो, क्या करते हो इस रन मे॥
अपना काम करें हम यहा पर, कौन काम? नहि दिखाता।
करे खूब उपवास तपस्या, जिससे कर्म विलय जाता॥२॥

क्यो करते हो जोर-जुल्म तुम, अचल जीवो को हन करके।
बदला वे परभव में लेगे, निश्चित मानो सुन-करके ॥
रक्षा करना धर्म क्षत्रि का, मारन का नहि है प्यारे।
दया-धर्म है सबमे आला, शास्त्रकार यो ललकारे ॥३॥
हिंसा मे जो दोष अनेको, राजा सुन थरराया है।
श्रावक सच्चा बना गुरु पै, नियम हृदय मे ठाया है ॥
देव, गुरू अरु धर्म टाल के, नही करूँगा नर-वन्दन।
क्रूर स्वभाव त्याग कर बनगा, शात-स्वभावी ज्यो चंदन ॥४॥
विधिवत वंदन कर गुरुवर को, योग सुखद लख घर आया।
सोचा नियम लिया मैं दुक्कर, सिंहरथ गिरे महाराया ॥
नहि नमने पर क्रोधित होगा, कौन उपाय बनाना है।
राजा भी नाराज बनेगा, सुख से नियम निभाना है ॥५॥
मणीरत्न की बना मुद्रिका, अर्हत् नाम लिखाडाला।
शिर पै चाढ करे वो वन्दन, भाव प्रभू का उर आला ॥
ऐसे बीते काल बहुत-सा, चुगलखोर चुगलीखाई।
राजा रूठ गया उस ऊपर, मार गिराऊँगा जाई ॥६॥
उपकारी नर भगा रात को, वज्रकर्ण से बात कही।
नृप कहे कैसे पता लगा तुझ, वो कहे मैंने श्रवण-ग्रही ॥
कुन्दनपुरि श्रीचद शाह-सुत, यमुना अंगज विद्युत अंग।
यौवनवय करप्राप्त, चला है, द्रव्य कमावन धर कर रंग ॥७॥
खूब कमाया लेकिन वैश्या, कामलता के वश पडकर।
सारे धन की धूल उडादी, विषय वासना है दुखकर ॥
धुतकारी मुज बाहिर काढा, झट ला दे कुण्डल राणी।
चोरी करण मैं घुसा महल मे, बाते नृप कहते ताणी ॥८॥
दशागपुर पै करूँ चढाई, रात्री वैरण होय रही।
प्रात होत जा नास करूँगा, मुजसे अकडता मरत वही ॥
यह सुन मैंने जान स्वधर्मी, चोरी तज कर आया हूँ।
सावचेत हो जावो जलदी, सच्चा हाल सुनाया हूँ ॥९॥
सुनकर राजा नगर सजाया, संग्रह कीना अन-तृण का।
इतने दल-बादल ले करके, आया सँदेशा मरणे का ॥
दशागपुर को घेर रखा है, ज्यो चन्दन-तरु अहि लिपटा।
सारा देश भयाकुल बनगा, अहो! कैसा यह दिन पलटा ॥१०॥

दूत उज्जैणी नृप ने भेजा, मुद्री रख आ नमन करो।
नहीतर त्यार होजा मरने को, अथवा यहाँ से भाग टरो॥
अभिमानी यो वचन सुनाया, वज्रकर्ण उत्तर दीना।
मुनि 'मिश्री' कहे रहे धर्म पर, धन्य धन्य उसका जीना॥११॥

दोहा

वज्रकर्ण कहला दिया नहि तोसे अभिमान।
नर-पद नमने का किया, गुरु पास पचखान॥१॥
अवर हुक्म जो आपरो, मोने वो मंजूर।
व्यर्थ राड कीजो मती, सुनियो साफ हजूर॥२॥

ढाल १३१ मी॥ तर्ज—जब तुम्हीं चले परदेश०॥

नही मानी एक भी वात, कुपित नरनाथ, मान-मस्ताना,
परजा को करत हैराना॥टेर॥
लूट खसोट मचाते है, कइयो के वतन जलाते है।
नही लाते दिल मे दया, क्रूर वन जाना॥प०॥१॥
रक्षक विन कौन वचाते है, हम भी इत उत भटकाते है।
लाके लकडी-खर झोपडी, एक वनाना॥प०॥२॥
घर नारी कलह की ज्वाला है, दुख पूरित हूं नहि व्हाला है।
भूंडे मे भड भली दर्श तुम पाना॥प०॥३॥
सुन दीनवन्धु करुणा करके, दिया स्वर्ण कँदोरा वह हरके।
कल्पवृक्ष सम दीनन दुक्ख मिटाना॥प०॥४॥
सौमित्र को पुर मे भेजा है, जा वज्रकर्ण को सहेजा है।
उत्तम नर अवलोक के मान दिराना॥प०॥५॥
रामानुज नृप से कहदारा, सव काम वनेगा अव थारा।
वाहिर सीताराम काम वनवाना॥प०॥६॥
लक्ष्मण के साथे नृप आया, श्री राघव को घर पर लाया।
भोजन भक्ति करे प्रेम रंग छाना॥प०॥७॥
जव राघव लक्ष्मण को वाही, भेजा है सिंहोदर पै जाई।
वन भरत का दूत वचन सुनवाना॥प०॥८॥
कहे सिंहोदर भेजा किसने, वह वोला तुज मालिक जिसने।
भरत अजोध्यानाथ महावलवाना॥प०॥९॥

वह राड तुम्हारी सुन पाई, यह भलपन तेरी है नाही ।
क्यो देते नृप को कष्ट के धर्म निभाना ॥प०॥१०॥
जो अपना नियम निभाता है, उसमें क्या तुमरा जाता है ।
करलो उससे अब मेल, भरत फरमाना ॥प०॥११॥

—ढाल-पूर्व—

सिहोदर सुणत चढ्यो रंग, दूत को नहि बोलन ढंग,
भृत्य है मेरा वज्र ग, मरजि जिम उससे कर डारूँ-
उन्हे तो सर्ज्यो मुज सारू ॥राम०॥११९॥
कौन है भरत तणा लोटा, मेरे से बनता है मोटा,
उडा नहि क्या शिर पर सोटा, चलाजा बकझक मत करना-
पहले तो सीख जरा लडना ॥राम०॥१२०॥

ढाल १३२ मी ॥ तर्ज—काई रे गुमान करे अपणो० ॥

काइ रे मिजाज करे मन मेला, मानवता रा नहि है गेला ॥टेर॥
भरत भूपनी आण उथापे, क्यो रे सुखो रा सुरद्रुम कापे ॥
था सरिखा उत कै रडवडता, तो धाक सुणी दानव लडखडता ॥का०॥१॥
जोम हुवे तो आव मैदाने, इसो किसो है व्है मालम थाने ॥का०॥
दूत भरत को जीत सकै ना तो, उण राजा का बोलो स्या केना ॥का०॥२॥
सिहरथ दल बादल चढ धायो, सौमैत्री आलान उठायो ॥का०॥
त्राण लही जोधा खलभलिया, भागण री ताकी वे गलियाँ ॥का०॥३॥
सिहरथ पकडी रामजी पासे, लाय धरयो लक्ष्मणजी उलासे ॥का०॥
राम पयपे खायो काई लपको, धर्म मे संकट दियो, खायो ठपको ॥का०॥४॥
सीताजी बन्धन खुलवाया, तो, सिंहरथ चरणो में शिर न्हाया ॥का०॥
माफ करो ओलखिया नाही, तो, आप आज्ञा स्वीकार सदाई ॥का०॥५॥
राम कथन से दोनो नृप राजी, संकट टार्यो स्थिती बनी ताजी ॥कॉ०॥
दोय पाती सब राज री कीनी, प्रीति बढाय शोभा अति लीनी ॥का०॥६॥
भक्ति करे नृप दोनो ही भारी, तीनसौ कन्या मालव पतिवारी ॥का०॥
अष्टादश है वज्रकरण रा, लक्ष्मण से विनती की परण री ॥का०॥७॥
सौमैत्री कहे अधुना ना परणू, वनथी आया फिर व्याह ज करणू ।का०॥
राते रामजी आगे पधारे, तो, 'मिश्री मुनि' यह ढाल उचारे ॥का०॥८॥

दोहा

कुंडल राणी ने लिया, विद्युत अंग ने दीध ।
पुर में मुखिया करदिया, वणिया पंच प्रसिद्ध ॥१॥

ढाल १३३ मी ॥ तर्ज—सलूणा० ॥

मलयाचल में जावतो, आयो निर्जल देश, सलूणा ।
तिरखातुर सीता भई, तरु-तल ठहरे नरेश, स० ॥१॥
राम कथा रलियामणी, मीठी शाकर जेम, सलूणा ॥टेर॥
सलिल लेण लछमन तदा, गयो सरोवर तीर, स० ॥
जल-क्रीडा करवा उठे, आयो भूप हमीर, स० ॥रा०॥२॥
कुबेरपुर नो राजियो, नामे कल्याण-सुमाल, स० ॥
लक्ष्मण ने अविलोकतो, रंजित हृदय मराल, स० ॥रा०॥३॥
नमन करत सौमित्र जी, परखी यह स्त्री जात, स० ॥
भोजन आप अरोगिये, वड़ प्राहुणा विख्यात, स० ॥रा०॥४॥
लक्ष्मण कहे जीमूं नही, वन में छै श्री राम, स० ॥
मंत्री नृप सामन्त सहु, झट पहोच्या तिण ठाम, स० ॥रा०॥५॥
कर विनती निज नगर में, लाया अति उत्साह, स० ॥
भोजन करके रामजी, पूछे प्रेम अथाह, स० ॥रा०॥६॥
वेष पुरुषनो किण-मुदे, सा कहे सुणिये स्वाम, स० ॥
वालखिल्य यहाँ भूपती, पकड असुर निज धाम, स० ॥रा०॥७॥
लेयगया छोडे नही, सगर्भा राणीय, स० ॥
अर्थ गर्थ वहु धामिया, मूके नहिं मानीय, स० ॥रा०॥८॥
राणी प्रसवी पुत्रिका, सचिव सुनायो नंद, स० ॥
पुत्र विना नहिं रह सके, घरनो सहु संबन्ध, स० ॥रा०॥९॥
जबलग भूप न बाहुडे, तबलग एहिज वेष, स० ॥
राणी, सचिव बिन कोइ यह, पायो नहि सन्देश, स० ॥रा०॥१०॥
राम कल्याण-सुमालिये, जाणे बाल गोपाल, स० ॥
मंत्रीश्वर मति-आगलो, राज्य तणो रखवाल, स० ॥रा०॥११॥
असुर न छोडे तात ने, ए दुख मोटो जान, स० ॥
वचन [illegible] बचावियो, आप दयालु प्रधान, स० ॥रा०॥१२॥
नि[illegible] कर मया, आप छुडावो बाप, स० ॥
व[illegible] नट-भणी, म्हारो टले संताप, स० ॥रा०॥१३॥

1

अधुना लखन न हाँभरे, जब आसो घर ताय, स० ॥
वात कबूल छै थाहरी, आगे हठ न कराय, स० ॥रा०॥१४॥
राजा घर आयां पछै, दीजो वेप मिटाय, स० ॥
इत्ति कही आगे चल्या, वाला रहो सुखमाय, स० ॥रा०॥१५॥
नदी नर्मदा भुज तरी, विन्ध्या अटवी ओर, स० ॥
वर्जे पिण वे चालिया, भय आणे सो भोर, स० ॥रा०॥१६॥

—कवित्त—

भय नही दिल माय, रत्ती-भर आणे वीर,-
मौरत शकुन आदि, गिणे नही तार है ।
शेर-पण ज्या मे घणो, पैर पीछै परै नाय,-
निडर निशंक-पन, जाके अनपार है ॥
तीनो ही चपल-गति, जाते है असुर ओर,-
इते भारी चमू देखी, बने होशियार है ।
आई फोज पास चाली, सिया को निहाली ख्याली,
'मिसरी' चुभी है चित्त, रूप को निहार है ॥१॥

ढाल १३४ मी ॥ तर्ज—पांच मोहर रोकड़ लेलो० ॥

इस इन्द्रपरी को उचकालो, असुरपती कहे क्या भालो ॥टेर॥
सती तर्फ भट दौरन लागो, कहे लक्ष्मण स्वामिन् ! चालो ॥१॥
आप रुखालो भाभीजी को, मै असुरो ने संभालो ॥२॥
आवनवाला को पद पकड़ी, घुमा गगन में ऊछालो ॥३॥
पॉच पॉच को पकड पछाडे, दश-दश शिर फोडन वालो ॥४॥
हाथी मारे, अश्व पछाडे, काल रूप-सो उणियालो ॥५॥
कियो खेंच टंकार चाप को, भागो दल दानववालो ॥६॥
असुरपती को शीश-ग्रहन कर, राम-चरण मे जा डालो ॥७॥
पल्लीपति वृत्तान्त आपको, कहडाल छू तत्कालो ॥८॥

—कवित्त—

नगरी कौशाम्बी जहॉ, विश्वानर विप्र वसे,-
सावित्री की कूख सेती, रुद्र सुत जायो है ।
क्रूर महा अत्याचारी, झूठो रु लबार मूढ,-
चोरी के करत ग्रह्यो, मृत्यु-मुख ढायो है ॥

श्रावकजी दया कर, उन्हीसे छुडायो मोय,-
व्रत जो करायो वह, कृष्णा ने छुरायो है।
नास गयो विपिन में, पल्लीपति वनी गयो,-
धाको चहुँओर मेरो सभी में जमायो है ॥१॥

—चन्द्रायणा—

बाँधू बड-बड भूप आँटीला आकरा।
जोधा रत्न जिसान बनाया काकरा ॥
आज आप परसाद क जीवन जाणियो।
कृपा करी करुणेश के निज-पद आणियो ॥१॥

दोहा

जो आज्ञा आपो मुझे, सदाकाल स्वीकार।
राम कहे वालखिल्यको, जा पहुँचा तस द्वार ॥१॥

ढाल १३५ मी ॥ तर्ज—पनिहारी रे लो० ॥

और होय जो जेल मे, सब छोडो रे लो।
देवो सदन पौचाय, मनड़ो मोडो रे लो ॥
सारो ने कर मुक्त ही, घर पौचाया रे लो।
पाया सब आनन्द, मिटियो खोडो रे लो ॥१॥
कल्याणमाला हर्षगी, पितु पाया रे लो।
आय नम्या चरणार, गुण मुख गाया रे लो ॥
राम आगे पहुधारिया, तिणवारी रे लो।
विन्ध्या अटवी छोर, तरणी तिरिया रे लो ॥२॥
अरुण ग्राम इक आवियो, शठ सारा रे लो।
महा अज्ञानी लोग, अधम आचारा रे लो ॥
कपिल क्रोधी ब्राह्मण रहे, अग्निहोत्री रे लो।
अभिमानी है आकरो, गंगोत्री रे लो ॥३॥
सुशर्मा नारी भली, गुणवन्ती रे लो।
मीठा बोली नार, सेवा सन्ती रे लो ॥
तिरषा लागी जोर री, सत्यवन्ती रे लो ॥
पाणी पीवा आविया, घर तेहने रे लो।
मा दीधो सन्मान, आया जेहने रे लो ॥४॥

रामादिक उत ठहरिया, आसण ठाया रे लो।
भक्ति करे धर चूंप, मन विकसाया रे लो ॥
शीतल पाणी पाइयो, सुख पाया रे लो।
पूरब पुण्य पसाय, प्रभू इत आया रे लो ॥५॥

—ढाल-पूर्व—

इतने मे ब्राह्मण ही आया, प्रेत-सा रीस प्रवल लाया,
कौन यह क्यो इत ठहराया, भ्रष्ट मुझ घर को करडारा-
निकलजा इन घर से वारा ॥राम०॥१२१॥

तिया को ताडन ले यष्टी, ऊठकर आयो है दुष्टी,
लुकी वा सीता के पृष्टी, तथापी रुकियो नहिं वो तो,-
अमृत नही वो लीलोथोथो ॥राम०॥१२२॥

सिया कहे ठेर्‌या इत वेजा, विपिन मे आनंद ही रेजा,
लखण कहे अवै नही जेजा, उसी को पग साही फेर्‌यो,-
फेकियो आकासे रेड्यो ॥राम०॥१२३॥

ढाल १३६ मो ॥ तर्ज—हार देवो म्हारा लाडला ओ भेरू० ॥

हाय हाय द्विज करवा लागो, रोवे वागो पाडी।
रोवे वागो पाडी, मिलिया आकर लोक अपारी ॥१॥
रामजी पधार्‌या भाई ब्राह्मण के आगारी ॥टेर॥
भापे नगर निवासी सारा, ब्राह्मण ने क्यू मारो।
ब्राह्मण ने क्यू मारो थारो, काई कियो विगाडो ॥राम०॥२॥
लक्ष्मण भापे भली ब्राह्मणी, जिणने मारण लागो।
जिणने मारण लागो ओतो, वर्ज्यो रहै न नागो ॥राम०॥३॥
घर पर आया, पाणी पीधो, थोड़ी ली विश्रान्ती।
थोडी ली विश्रान्ती वोले, गाल्यो धर कर भ्रान्ती ॥राम०॥४॥
करुणा लाय कहे सीताजी, अव मत वने अनाडी।
अव मत वने अनाड़ी राखो शान्ती हिये मंजारी ॥राम०॥५॥
लोक कहे वोदा लखणा रो, आप दयालू मोटा।
आप दयालू मोटा इणमें औगुण पडिया खोटा ॥राम०॥६॥
द्विज वोल्यो अव नहिं मारूंलो, सौगन्द मोने देदो।
सौगन्द मोने देदो, भूलू इतनो नही है वेदो ॥राम०॥७॥

वहाँ से त्रिमूर्ती अटवी में, चाल्या हिम्मत-धारी ।
चाल्या हिम्मत-धारी वा तो कज्जल-सी हे कारी ॥राम०॥८॥

जलधर वर्षण लागो जवरो, लागगयो चौमासो ।
लागगयो चौमासो वडतल ले लीनो हे वासो ॥राम०॥९॥

वृक्षाधिष्टित सुर अति त्रास्यो, तेज खम्यो नहिं जावे ।
तेज खम्यो नहिं जावे अपने मालिक पै भग जावे ॥रा०॥१०॥

इभ्यकर्ण यक्षाधिप भाखे, रे निर्भागी नीचा ।
रे निर्भागी नीचा क्यो ना सुरतरु को तू सीचा ॥रा०॥११॥

दोहा

अवधपुरी सादृश रची, रामपुरी अभिराम ।
इभ्यकर्ण निर्मित करी, सब विधि सुन्दर ठाम ॥१॥

ढाल १३९ मी ॥ तर्ज—आवो आवो सव मिल आवो० ॥

देखो देखो सव जन देखो, रामपुरी की यह छवि देखो ॥टेर॥
कोट कागुरा गढ मढ म्होटा, त्रिक चच्चर बाजार बना ।
जन धन अन पूरित मुदकारी, क्रय विक्रय व्योपार घना ।
जहाँ का रामचद्र राया, धुरे मैदाना सवाया पेखी मनवा लुभाया,
लाखो कोडो को नही लेखो ॥दे०॥१॥

वीणा लेकर इभ्यकर्ण कहे, मैने वास वसाया है ।
सेवा मे हाजिर हूँ निस दिन, आप प्राहुणा आया है ।
लाये सन्त भी सुजान, देवे देशना उद्यान, सुणे रोजाना राजान,
दान पुण्य खुले कर चेको ॥दे०॥२॥

जो आवे सो साता पावे, अचरज मन मे लाता है ।
जंगल मे मगल कर डारा, कैसा पुन प्रकटाता है ।
नहिं कमी कोई भत, वातावर्ण लो शात, सभी रहे निर्भ्रान्त,
धर्म ध्यान करते नही धेको ॥दे०॥३॥

कपिल ब्राह्मण ईंधन को आया, नारी उसके साथे है ।
नगरी देख हुये चित चकित, पहरेदार बुलवाते है ।
जावो महाराजा के पास, तोरी पूरी होगी आस, मिले दान पुण्य खास,
अपना सब दारिद्र उलेखो ॥दे०॥४॥

जन्म-दरिद्री मैं छूं प्यारे, सच्चा रस्ता बतलाना।
चारो द्वार यक्ष है रक्षक, नवपद उनको सुनवाना।
सुणी द्विज ऐसी बात, झट मुनि पासे जात, सीखा मंत्र महाख्यात,
श्रावक बन्यो शाता तुम पेखो ॥५॥

ढाल १३८ मी ॥ तर्ज—जिनन्द माय दीठा लो० ॥

श्रावक बनवा चालियो जी, आयो मुनिवर पास।
लक्ष्मणजी ने देखतो जी, पाछो जावे नास ॥१॥
डरियोडो डरपै है हरबार ॥टेर॥
लक्ष्मण कहे डरपो मती जी, तब ते दी आशीस।
वाछित आपी दक्षिणा जी, पूरी हृदय जगीस ॥ड०॥२॥
घर जाकर वित व्यय करी जी, पढिया मुनि ढिग ज्ञान।
संवेगे राच्यो सही जी, बणगो सन्त सुजान ॥ड०॥३॥
इसा उपकार किया घणा जी, दीधो अढलक दान।
जहाँ राम रहते वही जी, अवधपुरी लो मान ॥ड०॥४॥
अब चौमासो उतरियो जी, जावण राम तैयार।
स्वयंप्रभ-सुर हार-वर, भेट कियो तिणवार ॥ड०॥५॥
कुण्डल लक्ष्मणजी भणी जी, चूडामणि सीताय।
अर्प्या अधिका प्रेम सूं जी, नमन कियो सुखदाय ॥ड०॥६॥
तीनो रो मन-मोदवा जी, वीणा आपी सार।
सगला पहुँचावण-गया जी, सादर म्हारी लार ॥ड०॥७॥
पोंचाइ पाछा घिर्‌या जी, प्रभुजी आगे जाय।
लारे नगरी विलायगी जी, देव प्रेम सरसाय ॥ड०॥८॥
सुख से वन में विचरता जी, विजयपुरी गये साज।
ठहर्‌या है उद्यान मे जी, वड नीचे रघुराज ॥ड०॥९॥
महिधर नृप नी गेहनी जी, इन्द्राणी सुविनीत।
वनमाला तस अंगजा जी, पुण्यवती शुभ नीत ॥ड०॥१०॥
परतग्या लक्ष्मण वरूं जी, दूजा सूं नहि काम।
वनवासो तीनू तणो जी, सुण्यो महीधर ताम ॥ड०॥११॥
कद आसी पाछा घरे जी, बाया मोटी थाय।
प्रौढी घर मे ना खटे जी, चितवियो यो राय ॥ड०॥१२॥

इन्द्रनगर नो भूपती जी, वृषभ नाम कहाय ।
सम्बन्ध सुरेन्द्र सूँ कियो जी, वनमाला नहि च्हाय ॥उ०॥१३॥
मैं हर्गिज परणू नही जी, रातो निकसी व्हार ।
आई उण उद्यान में जी, वनदेवी के द्वार ॥उ०॥१४॥
पूजा कर विनती करी जी, चढगी वट पै जाम ।
राम सिया सूता तले जी, कहे 'मिश्रि' भज स्याम ॥उ०॥१५॥

—ढाल-पूर्व—

पहरे पर सौमित्री सोहे, लियो गलपासो वा जोये,
देखली लक्ष्मणजी को है, वोली वनमाला अयि देवी,-
तुजे मैं घणा काल सेवी ॥राम०॥१२३॥

ढाल १३९ मी ॥ तर्ज—काँटो लागो रे देवरिया० ॥

दीजे दीजे है वनदेवी म्होने, दशरथ राजकुमार ।
दशरथ राजकुमार भलो मुज श्री लक्ष्मण-भरतार ॥टेर॥
वालपणे से मैं नित च्हाती, नाम हृदय के वीच रमाती ।
किन्तु गये वनवास मिलन कहा विचमें पडगये पहाड ॥दी०॥१॥
मावित और जगह मुज व्यावे, सत्य कहूँ मुझको न सुहावे ।
वे करते तकरार दुसह दुख ओ मेरे अनपार ॥दी०॥२॥
अन्तराय आई है भारी, पर परभव में दो महितारी ।
व्है शक्ती तो पूरो आशा भक्ता निजी निहार ॥दी०॥३॥
यो कहकर गल मे ले पासा, लक्ष्मण लखकर एह तमासा ।
चढ वट पर फादा को तोडा, क्या करती हो वाल ॥दी०॥४॥
इतनी हिम्मत मत कर काची, मैं हूँ लक्ष्मण मानो साची ।
वाँह ग्रही ततखेव ऊनारी, वड हेठे धर प्यार ॥दी०॥५॥
लक्ष्मण ने वृत्तान्त सुनाया, सीता राम साथ सुखपाया ।
लज्जायुत पति पास ठहरगी, मन मे हर्ष अपार ॥दी०॥६॥
प्रात राम सीता पद लागी, भाग्य-दशा अचानक जागी ।
कही सकल ही वात जानकी धीरज दी हित-मार ॥दी०॥७॥
राज्यमहल मे हलचल होगी, वाई वनमाला कित खोगी ।
छूटे नफर चौफेर हेर कर दुखित भये सिरदार ॥दी०॥८॥
आया चल उद्यान अगाडी, चारो वैठे वट-तल-जहारी ।
कही भूप ने जाय कुपित हो सैना दो ललकार ॥दी०॥९॥

मारो पकडो यह भगजासी, लक्ष्मणजी ऊठ्या कर हाँसी ।
आवो रे रणधीरो थारो देखो जरा करार ॥दी०॥१०॥
धनुष तणो टंकार करायो, सारो ही दल जब घबरायो ।
राजा कहे कर-जोड आपको परिचय दो इणवार ॥दी०॥११॥
मैं हूँ रामचन्द्र का दास, मेरा नगर अयोध्या खास ।
सुणकर खुशी हुवा नृप ताम, जामाता लीना नयन निहार ॥दी०॥१२॥

—ढाल-पूर्व—

व्याह हित कीनी नृप अर्जी, लखण कहे अभी नही मर्जी,
प्रभू सेवा को छूं गर्जी, रामजी विजयपुरी राजे,-
महीधर नृप सेवा साजे ॥राम०॥१२४॥
एकदिन दूत सभा आयो, भूप अतिवीर्य पठवायो,
नन्दावर्त नगरी से धायो, युद्ध तो भरत साथ छेड्या,-
इसीलिये आपको तेड्या ॥राम०॥१२५॥

ढाल १४० मी ॥ तर्ज—नवीन रसिया० ॥

पूछे लक्ष्मण कैसे हुवा भरत से आपस मे झगडा ।
आपस मे झगडा कौन कारण मे यह रगडा ॥टेर॥
है बलवान हमारा मालिक, भरत भूप ताई ।
सेवा मे बुलवाया उसको, वह आता नाही ॥पू०॥१॥
उल्टा अवधपती कहलाया, तुम सेवा साजो ।
अगर होय लडने की हिम्मत, तो वेगा आजो ॥पू०॥२॥
अतिवीरज उतावल करके, युद्ध करन चलिया ।
किन्तु भरत का पक्ष प्रबल है, भूप घणा मिलिया ॥पू०॥३॥
पक्ष थकी जीते दुनिया मे, तुम तेडन आयो ।
सगा संबंधी मित्र समय पर, सहाय सभी च्हायो ॥पू०॥४॥
महिधर भाखे व्यर्थ राड की, काइ मजा आयो ।
काइ हाल है युद्ध तणो अब, नाही दर्शायो ॥पू०॥५॥
जय विजय दोनो मे वर्ते, कोइ नही हार्‌यो ।
महिधर मन सोचे क्यो मूरख, मुजको वकार्‌यो ॥पू०॥६॥
प्रभू हुकम मुजको बगसावो, सैन्य लही जावूं ।
नहि जाणे वैसी कर भरत की, आणा वर्त्तावूं ॥पू०॥७॥

राम वदे सब झूठी वातो, नंदावर्त्त जावूं।
तुम सुत मेरे साथे देदो, सबको समजावूं ॥पू०॥८॥
जो आज्ञा सुत साथ चलेगे, राम कहे आछी।
नन्दावर्तन चाली आया, सुरी स्थान साची ॥पू०॥९॥
देवी आय सेवा भल सारी, एक अर्ज कीनी।
तिरिया रूप बना सबही का, कौतुक रस-भीनी ॥पू०॥१०॥
तियारूप से श्यान विगाडूं, यह मनशा म्हारी।
राम कहे जो थारी इच्छा, नहि है इनकारी ॥पू०॥११॥
वनिता रूप विविध आयुध कर-श्रीमूर्त्ती आगे।
'मिश्री' कहे काम परवारा, वने पुन्य सागे ॥पू०॥१२॥

दोहा

लाल फोज लटका सहित, चाले मध्य बजार।
नागरीक निरखे निपट, ये भी हे झुझार ॥१॥

ढाल १४१ मी ॥ तर्ज—भूले मन भमरा कांइ भम्यो० ॥

पलटन पौची जायने, ड्योडी ऊपर ठेट।
खबर हुई नरराज ने, चट जा कीनी भेट ॥१॥
फोज भेजी ताजी घणी, मित्र थारा महाराज।
इज्जत हतक इणमे सही, लोको मे गइ लाज ॥टेर॥
राज बतायो नारि नो, अठे मर्द नहिं एक।
अपणायत आ देखलो, सारी गमाई टेक ॥फो०॥२॥
नन्दावर्त नो नरपती, प्रजल्यो मन रे माय।
आघी काढो कूटने, नहिं म्हावूं मैं सहाय ॥फो०॥३॥
भरत भणी मैं जीतसूं, उणरी नहि दरकार।
शत्रुपणो वो साजियो, है उणने धिक्कार ॥फो०॥४॥
भट आया भभक्या घणा, जावो मूंडो टार।
आटो विगाडण आयगी, नाणी शर्म लिगार ॥फो०॥५॥
तिय भणी कहे रामजी, बोलण सीखो गिंवार।
बोनाविया जद आविया, गर्ज न हमें लिगार ॥फो०॥६॥
तुम नृप नारी सारखो, जिणसूं भेजी तिय फोज।
बेअदबी म्हारी करो, मारो दहसी चोज ॥फो०॥७॥

सुभट दिखाया शस्त्र ते, लडवा लागी सब नार ।
कोइयन सन्मुख ठहरिया, आयो नृप तिणवार ।।फो०।।८।।
लक्ष्मण नारी वेष मे, ग्रह्यो गज आलान ।
घूमायो चमु भाजगी, देखे खलक जहान ।।फो०।।९।।

—ढाल-पूर्व—

मुकुट नृप डारी कच ग्राही, घसीटी लायो रीसाई,
रामजी ऐसी फुरमाई, भरत सूं चाल्या हो आडा,-
गमाया सुयश निजी गाडा ।।राम०।।१२६।।
सियाजी दया-भाव लाया, राम के चरणो शिर न्हाया,
मान कर तैंने दुख पाया, भरत जी राजो गिर राणो,-
आग्या मे यही मोज माणो ।।राम०।।१२७।।

—चन्द्रायणा—

माता माया मेट प्रकट सब कर दिया,
ओलखलीना सर्व चकित चित ह्वै गया ।
मुरझाणो महिनाथ वात कर ने गई,
सो वानी वा वात हाथ आवे नही ।।१।।

ढाल १४२ मो ।। तर्ज—तावडा धीमो-सो पड़जा० ।।

अतिवीर्य अकुलाई आखे, काम कियो विणठो, सज्जनो काम० ।।
कोइ नहि समजायो पहले, गिलगचियो चिणठो, सज्जनो गि० ।।१।।
मान विन जीवन है फीको रे मान विन जीवन है फीको ।
गौरव ने जो गाडो राखे, भाखे जग नीको ।।टेर।।
जल से मत्स्य होय जो अलगो, पाछो नहि जावे, सज्जनो पा० ।।
कोल्हू तूटेवाऊ चून को, फलका नही थावे ।।मा०।।२।।
इमी तरह से राज्य करन की, मनमा नहि म्हारी, प्रभूजी म० ।।
संयम लेकर करूं साधना, ये ही सुखकारी ।।मा०।।३।।
भरत और तू दोनो बराबर, करो राज्य भाई, अरे हां करो० ।।
अतीवीर्य ने विजयरथ को, गादी दी वाही ।।मा०।।४।।
रतिमाला लक्ष्मण को दीधी, विजयसुदर बाई, सज्जनो वि० ।।
भरत राजा को जा परणाई, प्रेम वध्यो आई ।।मा०।।५।।

सीह गुरू पासे ले संयम, समता रस पीनो, सज्जनो स० ॥
मान अखण्डित राखे जिणरो, धन्य धन्य जीणो ॥मा०॥६॥
राम विजयपुर वनमाला से, मिलिया मनलाई, सज्जनो मि० ॥
'मिश्री' काम दूर से सारे, वे साचा भाई ॥मा०॥७॥

ढाल १४३ मी ॥ तर्ज—वीरा लुंवो झुंवो होय आइजो० ॥

महिधर हम आगे जावे, वन रन मे शाता पावे जी ॥टेर॥
वनमाला लहु से भाखे, मोय क्यो ना साथ मे राखे जी ॥म०॥
हो प्राण-दान दातारा, मत छोडो अब निराधारा जी ॥म०॥१॥
कर पाणीग्रहण सँग लेलो, मत पीहरिये मुज म्हेलो जी ॥म०॥
सेवा सब की करसूं, मैं देख देख ने हरपू जी ॥म०॥२॥
सौमित्री कहे सुण बाला, अधुना नही अवसर आला जी ॥म०॥
झूठो हठ नाही साजो, थे पतिव्रता जग वाजो जी ॥म०॥३॥
जब वन से आसूं पाछो, है नियम हमारो साचो जी ॥म०॥
गौ ब्राह्मण बालक नारी, चारो हत्या लगे मुज कारी जी ॥म०॥४॥
मै निश्चय व्याह करूँगो, थारो सारो सोच हरूँगो जी ॥म०॥
कहे बाला मैं नही मानू, लो सूंस तो साची जाणू जी ॥म०॥५॥
अघ रयणी-भोजन-वारो, नही व्याहूं तो लागे सारो जी ॥म०॥
स्वीकृत लक्ष्मण कर लीनी, इण भाँति समजायस कीनी जी ॥म०॥६॥
ब्राह्मी मुहुरत मे चाले, लिये लाघ पर्वत अरु नाले जी ॥म०॥
क्षेमाजली नगरी पाई, है सुन्दर दृग-सुखदाई जी ॥म०॥७॥
प्रभु बाग बीच मे ठेर्या, लक्ष्मणजी वन मे हेर्या जी ॥म०॥
वन-फल जा-कर के लाया, सस्कार सीता करवाया जी ॥म०॥८॥
आरोगी पुर में जावे, इंडी लक्ष्मण सुण पावे जी ॥म०॥
पंचशक्ति माथ मे साहे, वो नृप नी कन्या व्याहे जी ॥म०॥६॥

—ढाल-पूर्व—

निर्णय इक नर मे करतारा, सो कहे रिपुमर्दन-वारा,
कन्यका राणी का प्यारा, वसु पुत्र जितपद्मा परखो,-
रूप तो पद्मा को निरखो ॥राम०॥१२८॥
लिया है नियम शक्ति पंच, माथ मे झेले अति टंच,
आये बहु सँचियो नहि रंच, सुणी यो सभा बीच आयो,-
भूपती उसको बतलायो ॥राम०॥१२६॥

दोहा

आये कित मे, कौन तुम, कौन नाम अरु गाम ।
जल्दी से जाहिर करो, यो पूछा जन-स्वाम ॥१॥

ढाल १४५ मी ॥ तर्ज—पछी बावरिया० ॥

मैं हूँ भरत को दूत, सुनो तुम नरवर जी ।
जाना दूजे गाम, आया इत चलकर जी ॥टेर॥
कन्या कँवारी परणनवाला, आया नहि नर को मूंछाला ।
है ताज्जुब की बात, चुभी दिल अंदर जी ॥मैं०॥१॥
और सभी घर ठाठ हमारे, हाथो कर भोजन भये कारे ।
जिससे जचगी व्याह करूँ अब सुखकर जी ॥मैं०॥२॥
मेरे काम मे हो रही देरी, झट परणादो कन्या तेरी ।
हँसे घणे सरदार, कसी क्या कम्मर जी ॥मैं०॥३॥
शक्ती सहन करोगे भारी, एक नही पाचो ही सारी ।
चला शीघ्र राजान खोप नही तिलभर जी ॥मैं०॥४॥
क्रोधानल राजा तत्काला, पाच वीर इकसाथे आला ।
खेंच मारे हैं बाण वडे वे वलधर जी ॥मैं०॥५॥
दोय हाथ दो काख मजारी, पंचम झेली दशन रसारी ।
पाया अचम्भा सर्व गर्व गया गलकर जी ॥मैं०॥६॥
जितपद्मा गल माला डारी, भूप कहे परणो सुखकारी ।
लक्ष्मण कहे श्रीराम विराजे वाहर जी ॥मैं०॥७॥
पडत पिछाण दौड़ नृप जावे, सिया सहित निज महलो लावे ।
भक्ती करते खूब हर्ष हिये भरकर जी ॥मैं०॥८॥
व्याह करावो हे रघुराया, राघव ने पीछा फरमाया ।
जो लो वन को माय, न तो लो अवसर जी ॥मैं०॥९॥
घर आने पर व्याह रचासा, चीज हमारी हम लेजासा ।
यो कहि चाले अग्र, छोड पुर रघुवर जी ॥मैं०॥१०॥
वंशस्थल पर्वत के ऊपर, नगर वंशस्थल है जो सुखकर ।
ऊपर नदियो तीन मीन ज्यो जलपर जी ॥मैं०॥११॥

दोहा

भय-विह्वल सब लोक है, कारण पूछा राम ।
उत्तर मे वो यो कह्यो, पुर भय वर्ते दाम ॥१॥

ध्वनि ऊठे निशि मे प्रवल, जनते सुनी न जाय ।
रात रहै दूजी जगह, प्रात आत घर माय ॥२॥

ढाल १४६ मी ॥ तर्ज—उमादे भटियाणी री० ॥

राम लहू ने भेजे हो, आ केजे सारी वारता,
काइ लक्ष्मण पोंच्यो जाय ।
वाग वीच सुखकारी हो, अणगारी काउसग्ग मे,
दोनो ही देखाय ॥१॥
उपकारी जसधारी हो, वलिहारी राम दयाल की,
महिमा जन-जन मॉय ॥टेर॥
वन्दन-विधि आराधी हो, समावी पूछी प्रेम सूं,
काइ लुल-लुल लागा पाय ।
वीणा राम वजावे हो, जो पाई थी यक्ष थी,
तान मान सू लाय ॥उ०॥२॥
लक्ष्मण सीता साथे हो, संगीत रसे अति राचिया,
राखी मे धर रंग ।
साधू सेवा सारे हो, उपद्रव टालण कारणे,
निज मन रे उछरंग ॥उ०॥३॥
क्रूर-मती सुर आयो हो, वो अनलप्रभ अभागियो,
काई वणियो अति विकराल ।
साधू ने सन्तापे हो, काइ काल सरीसो हो रह्यो,
काई वॉधे कर्म अपाल ॥उ०॥४॥
सीता ऋपिजी पासे हो, काइ राम लखन दो भाइडा,
सामी गया तिण वेर ।
देव भागगो देखी हो, काइ जोर चल्यो नही रंचही,
मुनि पाया केवल ल्हेर ॥उ०॥५॥
केवल महिमा मोटी हो, करवाने सुरवर आविया,
काई वन्दे वे-कर जोड ।
रामचन्द्र मुनि आगे हो, वे पूछै कारण तेहनो-
उपद्रव तणो निचोड ॥उ०॥६॥
कुल-भूपण मुनिराया हो संभलावे पूरव नी चरी-
काई सुणे त्रिमूर्त्ती तेथ ।

कर्म विटंवण जग मे हो, जोरावर साणा जाणजो-
काई ते भाखूं मैं एथ ।।उ०।।७।।
पदमपुरी नो राजा हो, श्री विजयपर्वत नाम थी-
तस इमरतस्वर इक दूत ।
उपयोगा तस नारी हो, सुत उदित मुदित दो जाणिये-
सुन्दर महा सपूत ।।उ०।।८।।
अमृतस्वर नो मैत्री हो, द्विज वसुभूती कपटी घणो-
काई उपयोगा सूं नेह ।
स्वैरीणी उण सागे हो, अनुचित ही अनुराग है-
काई दूत लखी है तेह ।।उ०।।९।।
नृप आदेशे जावे हो, दूतज कार्य प्रसंग सू,
काई ब्राह्मण चाल्यो साथ ।
दुष्ट बुद्धि उरधारी हो, कोई मारी न्हाख्यो दूत ।
घर आवी ने भाखी हो, काई राखी वालो सामने
खलु उपयोगा करतूत ।।उ०।।१०।।
दोनो पुत्र मरादो हो, फिर निष्कण्टक हो जावसा-
सुखमाणो मनचाय ।
रहस्य पुत्र ते जाण्यो हो, मन आण्यो अमरस आकरो-
काई मार्‌यो वभन ताय ।।उ०।।११।।
विपम गती सूं मरियो हो, वह जा पल्ली में ऊपनो-
काई बडो भयंकर भील ।
दुर्मति दुष्कृत करतो हो, नही डरतो पडतो पाप मे-
काई महा भयंकर डील ।।उ०।।१२।।
विजय पर्वत साथे हो, वे उदित मुदित संयम लियो-
काई विचरे मन उछरंग ।
भील मिल्यो मग माही हो, वो मारन लागो मुनि भणी-
काई वार्‌यो पल्ली पतंग ।।उ०।।१३।।
पल्लीपति भो पंखी हो, तव पारधि सूं छोडावियो-
काई ते थयो पल्लि अधीश ।
उपकार नही भूलाजे हो, सुनलीजे वाणी वीरनी-
फल नाथे विस्वावीस ।।उ०।।१४।।

उदित मुदित दो साधू हो, आराधी संयम सातरो-
काई महाशुक्र सुर थाय।
माणे सुख सुर केरा हो, भव फेरा हारे मूल थी-
काई 'मिश्री' ढाल कहाय ॥उ०॥१५॥

दोहा

दूत हणा ते विप्र तो, भमियो भव-भव भूरि।
माणस भइ तापस भयो, कष्ट अज्ञान अहूरि ॥१॥
धूम्रकेतु ज्योतिपि-मही, लीना ते अवतार।
मिथ्यापन मे मगन थो, अभिमानी अनपार ॥२॥

ढाल १४७ मी ॥ तर्ज—गीतिका० ॥

उदित मुदित दो वीर देवगति छोरि के,
अरिष्टपुर त्रियचंद भूप शिरमोरि के।
पौमावइ अंगजात पुत्र रलियामणा,
रत्न सुरथ अरु अपर चित्ररथ भावना ॥१॥
धूमकेतु नो जीव उसी घर ऊपनो,
अपर राणी अँगजात अनुरुध्ध नीपनो।
महा उदंड प्रचण्ड भ्रात वड ना गिणे,
पूरव वैर प्रसंग नमन वीरस मिणे ॥२॥
रत्नसुरथ ने राज अपर युवराज है,
कर अनसन पट घोस[1] भूप सुर-पद लहै।
अन्य भूप निज धुवा परणाई भूप ने,
दिवी नही युवराज मानि धर चूंप ने ॥३॥
रीसायो अनुरुद्ध लूटे नृप-गाम ते,
त्रसित भयो तव देश दूपित कियो नाम ते।
चढ्यो रत्नरथ चमू लेय तिण ऊपरे,
बांधी लायो शहर गाढतर दुख करे ॥४॥
छोड्यो करुणा लाय तापस व्रत वो लिया,
भम्यो भवान्तर माय मिला नर-योनिया।

---

१ छह दिन का।

तापस वन अज्ञान कष्ट ते आदर्‌यो,
अनलप्रभ भयो देव मान ईर्ष्या भर्‌यो ॥५॥
रत्नरथ चित्ररथ्थ संयम ले वार मे,
स्वर्ग गया सुविनीत धर्म-आधार मे ।
त्रिमला उर उत्पन्न महाबल अति भली,
भया पुत्र पुनवान हुई घर रंग रली ॥६॥
कुलभूपण अरु लघू देशभूपण अहा !,
हम दोनो ही भ्रात पाठ पढवा गया ।
उपाध्याय वरघोप पास मे मुद-भरी,
इक दिन बैठी गोख घुया नृप-सुन्दरी ॥७॥
वढियो उनसे राग जाण ज्यो मायरो,
देण परीक्षा नृपति पास मे ठाहरो ॥८॥
कला हमारी देख भूप राजी हुवो,
मुज माता के पास सुता को भेजुवो ।
पूछ्या पडी पिछाण वहिन थी हम तणी,
गुरुकुल वसतो जन्म नही खवरो भणी ॥९॥

—ढाल-पूर्व—

ग्लानी तो मनमाहे आई, भोग की वान्छा छिटकाई,
वहिन संग होगइ अन्यायी, अबे नही राज्य मे रहेसो,-
जिनेश्वर दीक्षा ही लेसो ॥राम०॥१३०॥
दीख ले दुष्कर तप ठायो, विचरतो वशस्थल पायो,
ध्यान कर शुक्ल ध्यान ध्यायो, पिता हम दुख मे मथारो,-
करी भयो महालोचन सारो ॥राम०॥१३१॥

दोहा

अनन्तवीर्य भये केवली, करण महोत्सव नार ।
हम उपसर्ग वृतान उत, भाख्यो सभा मँझार ॥१॥

ढाल १४८ मो ॥ तर्ज—करेजा कुमो नहीं काई० ॥

अनलप्रभ यह सुनकर आयो, उपसर्ग करन उमायो ।
चार दिवस यो बीत गया था, पाप अधिक तस आयो ॥१॥

जीवड़ा शात भाव धरले, जीवड़ा शात भाव धरले ।
कर कर्मो रो नाश अरे भव-सिंधु मे तरले ।।टेर।।

तुम्हे देख सो भाग गयो फिर, हम को केवलज्ञान ।
प्राप्त हुवा उपशम भावो से, राग-द्वेप की हान ।।जी०।।२।।

महालोचन सुर आयो राम पै, पूरण प्रेम दृढायो ।
जो आज्ञा हो सो ही समर्पूं, राम भण्डार रखायो ।।जी०।।३।।

जब हम याद करे तब आना, जो भी कार्य बनाना ।
सुर गो धाम, राम सेवा मे, नृप का हुआ मुन आना ।।जी०।।४।।

महा उपद्रव आप मिटायो, यह मोटा उपकार ।
राज्य भुवन ला भोजन-भक्ती, करे सभी नर-नार ।।जी०।।५।।

राम कथन से ज्ञान-मन्दिर का, यहाँ किया निर्माण ।
रामगिरि-स्थल नाम दियो जस, कर उत्सव धर ध्यान ।।जी०।।६।।

पंथ पूछ प्रभु अग्र पधारे, लोक पाँचावी आया ।
राम दंडकारण्य भयंकर, तिणमें आसण ठाया ।।जी०।।७।।

गिरी-गुफा घर सम वे भाली, वसगया मनरे दावे ।
मीठा फल वन मे हरि लावे, सीता त्यार करावे ।।जी०।।८।।

भोजन समय एकदा आया, मास-खमण मुनिराय ।
त्रिगुप्त रु सुगुप्त नाम थी, प्रासुक अशन व्हैराय ।।जी०।।९।।

—चन्द्रायणा—

द्विमासी उपवास पारणो पाइयो,
त्रिमूर्त्ती भल भाव वन्दन करवावियो ।
पंचदिव्य प्रकटाय सुगन्धज ऊछली,
अरु कीधा गुणग्राम साध रीती फली ।।१।।

ढाल १४९ मी ।। तर्ज—साधुजी ने वन्दना नित नित कीजे० ।।

जय-जयकार करे नभ माही, मिलकर देव अनेक रे, प्राणी ।
रत्नजटी और अन्य दोय सुर, रथ आण्यो है एक रे, प्राणी ।।१।।
साधु दर्शन सदा सुखदाई, पावे पुण्य प्रसाद रे, प्राणी ।
पग-पग पावे परम पदारथ, आतम लहै आल्हाद रे० ।।टेर।।

गन्धाम्बुनी[1] वृष्टि सेती, फैली परिमल[2] पूर रे, प्राणी ।
दशोदिशी मे महक रही है, सुरभी श्रवण सनूर रे, प्राणी ॥सा०॥२॥
गंधाभिध एक पेखी रोगी, तरु तल आयो ताम रे, प्राणी ।
सुगंधी थी आगे वडियो, दीठा मुनि अभिराम रे प्राणी ॥सा०॥३॥
जातिस्मरण पछी पायो, मूर्च्छाणो तत्काल रे, प्राणी ।
सीताजी सचेतन कीधो, साधु पद ने दयाल रे प्राणी ॥सा०॥४॥
चरण-स्पर्शतो अरुज[3] भयो ते, लब्धीवन्त मुनीश रे प्राणी ।
अल्प समय मे कारज वणियो, पूरी तास जगीस रे प्राणी ॥सा०॥५॥
पाँख स्वर्णमय चंचू विद्रुम,[4] जटा भरेली धूर रे प्राणी ।
सर्वांगीण भयो है सुन्दर, नाना मणिमय पूर रे प्राणी ॥सा०॥६॥
नाम जटायू थापन कीनो, सीता ने सँभलाय रे प्राणी ।
स्वधर्मी री सेवा कीजो, एम कहे मुनिराय रे प्राणी ॥सा०॥७॥
पद्म-नारायन मुनि पग लागी, विनती कीध दयाल रे प्राणी ।
कोन कर्म थी पक्षी रोगी, स्वामि सुनावो हाल रे प्राणी ॥सा०॥८॥
सन्त पयंपै सुणो रामजी, हँसतो कर्म बंधाय रे प्राणी ।
विन भोगविया छूटे न 'मिश्री', आगम मे दर्शाय रे प्राणी ॥सा०॥९॥

—छप्पय-छन्द—

दृढ प्रतिहार्य जु चोर चिलातिपुत्र सुधर गये है ।
बिम्बसार मगधेश प्रदेशी पार हुये है ॥
अधम अनेको नीच उन्हे भी सफल किये है ।
मन-इच्छित ली सटक कटक अघ जीतलिये हैं ॥
मुनि दर्शन सगन सुखद पा-कर पावन ह्वै घने ।
संयम-रत श्रमण उपासना, नित करिये 'मिश्री' मने ॥१॥

ढाल १५० मी ॥ तर्ज—गंगस्याम की महिमा अपार है० ॥

सावत्थी जितशत्रू राजा, धारणी-सुत स्कन्धक है ताजा ।
पुरन्दरयशा तस घान ॥१॥
होवे बेडा पार, क्षमा धर्म ने धार ॥टेर॥

---

१ सुगन्धित जल की वृष्टि । ३ रोग-मुक्त ।
२ सुगन्ध । ४ लाल मणि जैसी ।

दण्डक-देशे कुम्भकार कट, दण्डक नृप परणाई परगट ।
पालक सचिव लो धार ।।हो०।।२।।

नास्तिक नीच-मती नो धारी, श्रावस्ती आयो इक दहारी ।
चर्चा चाली है सभा मजार ।।हो०।।३।।

जीत सका नही कोई उनको, स्कन्धक जीतलिया है जिनको ।
हुवो खिसाणो अपार ।।हो०।।४।।

श्री मुनिसुव्रत स्वामि पधार्‌या, सुणी देशना संजम धार्‌या ।
स्कन्धक कुँवर तिवार ।।हो०।।५।।

और पाँचसै साथे लीना, छता भोग ऊभा तज दीना ।
पढलिये अंग इग्यार ।।हो०।।६।।

दण्डक देशनो करण सुधार, मागी आज्ञा प्रभु से सार ।
मौन करी जिनवार ।।हो०।।७।।

कारण क्या जिनवर फरमायो, है उपसर्ग मृत्यु सो व्हाँ यो ।
पुनि पूछै अणगार ।।हो०।।८।।

मरणा को डर नहि है नाथ !, आराधक विराधक साथ ।
तो विन सव को धार ।।हो०।।९।।

कही समजा कुछ समजा नाही, विहार कियो वे हरिपुर ताही ।
करकै उग्रविहार ।।हो०।।१०।।

खवर लगी नृप वन्दन आयो, जनता ने मुनि धर्म सुनायो ।
प्रचुर हुवो परचार ।।हो०।।११।।

ठाम-ठाम जनता जस गावे, पालक पापी सुण दु ख पावे ।
वदलो वैर चितार ।।हो०।।१२।।

राजा ने ऊँधी समजाई, शालो आयो मारण ताई ।
डाट्या शस्त्र अपार, उपवन-भूमि मंझार ।।हो०।।१३।।

दोहा

दिखा दिया नरराज को, ते पापी तिणवेर ।
शस्त्रों से शंकित हृदय, जवर छा गयो ज्हेर ।।१।।

ढाल १५१ मी ।। तर्ज—बँगलो चुणायदूँ दोय लूँगा रो० ।।

ओ तो ढोंगी है पूरो साधू नही सूरो,
तो मंत्री नाही कथियो कूरो ।

एतो त्राता है साची, मैं तो दिलड़ासू जाची,
सला समर्पी तू तो आछी मूं आछी ॥ए०॥१॥
थारे जचे सो देदे दण्ड डणाने।
तो मैं ओलूभो नहीं देवूंला थाने ॥ए०॥
पालक मनमाये घणी खुशियां मनाई।
तो मुनिवर पै आकर इसड़ी वातों सुणाई ॥ए०॥२॥
धर्म छोडो तो थाने जीवतडा छोडू,
नहीतर घाणीमाये पीली ने मोडू ॥ए०॥
स्कन्धक जी पाछो उत्तर जो वाले,
छोडो नही सरधा भावे घाणी मे घाले ॥ए०॥३॥
घाणो पत्थर रो मोटो त्यार करायो,
तो पीलो सारो ने शक्त हुकम सुनायो ॥ए०॥
आचार्य सारा अनशन जो ठायो,
आतम उज्ज्वल करवा ध्यान रमायो ॥ए०॥४॥
श्रेणी क्षपक चढिया केवल वे पाया,
तो पापी एक-एक ने लेने घाणी मे घाया ॥ए०॥
इसडो जुल्म मचायो हाहाकार करायो,
तो पापी कर्मों रो बन्ध ऐडो बंधायो ॥ए०॥५॥
पील्या चारसो ऊपर निन्नाणू,
तो छोटा चेला पै प्रेम अधिकेरो जाणू ॥ए०॥
भाखे स्कंधकजी पंले मुज को ले पीनी,
तो छोटा चेला री मृत्यु नजरो नहो हीनी ॥ए०॥६॥
पालक तो पभणे वैर थारासू लेणो,
इणनू नही मानू मैंतो थारोड़ो केणो ॥ए०॥
बालक पीलंतो देखी स्कंधक रोसायो,
तो करियो निहाणो सारो मान गमायो ॥ए०॥७॥
राजा दंडक ने पालक दुष्ट मारारो,
होजो क्षयकारी यो ही नियम हमारो ॥ए०॥
होग्या विराधक यो तो वन्हीकुमारो,
फल तपस्या रो नहीं विरुन विचारो ॥ए०॥८॥

—ढाल-पूर्व—

जुल्म यह पुरवासी सुणियो, सभी तो हा! हा! रव थुणियो,
भूप ने जाकर के भणियो, अबे दिन खोटा रे आया,-
हत्यारा !, मुनिवर मरवाया ।।राम०।।१३२।।

राणीसा रजोहरण भाल्यो, रक्तते रंजित निहाल्यो,
मुनी दुख उर माहे साल्यो, मुनि सुप्रभ स्वामी पासे,-
मेली सुर वहाँ पै उन्मासे ।।राम०।।१३३।।

देवता सभी देश जार्यो, पालक ने बुरी तरह मार्यो,
जोर वो किसको नही झाल्यो, पाया फल जेकरिया जेवा-
क्रोध से कर्म बंधे एवा ।।राम०।।१३४।।

दोहा

दण्डक नृप भमियो घणो, पायो कष्ट करूर ।
हो गन्धाभिध पखियो, रोगी यह भरपूर ।।१।।
गुरु-पद-पंकज-भृङ्ग बनि—पायो परमानन्द ।
सेवा कीजो, कह चल्या, गुरुवर गगन-गतीन्द ।।२।।

ढाल १५२ मी ।। तर्ज—मान न कीजे रे मानवी० ।।

लंक पयाला राजवी, खर नामे भोपाल रे ।
सूर्पनखानो जाइयो, शम्बुक सुन्द कुमार रे ।।१।।
भावी टारी रे ना टरे ।।टेर।।

माय बापरे वर्जतो, दण्डकारण्ये जाय रे ।
सूर्यहास असि साधवा, जचगी शम्बुक मन-माय रे ।।भा०।।२।।
हणमूं मोने जो वर्जसी, निकल्यो वचन अशुद्ध रे ।
मान-भर्यो माने नही, भूल गयो शुध-बुद्ध रे ।।भा०।।३।।
कोंचरवा सरिता तटे, वंसजाल विकराल रे ।
तिहाँ रही साधन करे, एकाग्रे निहु काल रे ।।भा०।।४।।
वट-शाखा अधोमुख टिके, ब्रह्मचर्य भूमीशयन रे ।
एगं भत्तं च भोयणं, समरे साचे मन चयन रे ।।भा०।।५।।
वर्ष बारह दिन सातलो, साधन-काल विचार रे ।
द्वादश वर्ष दिन चार तो, बीत गया तिणवार रे ।।भा०।।६।।

मात पिता नारी रु पुनि, खुदने हर्ष अपार रे।
तीन दिनो ने अन्तरे, होसी मगलाचार रे ॥भा०॥७॥
सारी सामग्री सावधे, खड्ग उतरियो आय रे।
तेज पसरियो वंश मे, कुँवर हर्ष्यो मनडारे माय रे ॥भा०॥८॥
लक्ष्मण लीलाए संचर्यो, दीठो खड्ग उदार रे।
शस्त्र क्षत्री रो प्राण है, पेख्या उपजे प्यार रे ॥भा०॥९॥
कर ऊँचो कर संग्रह्यो, करण परीक्षा ताम रे।
फेक्यो बलपूर्वक तेहने, काट्या वंश तमाम रे ॥भा०॥१०॥
शिर शम्बुक रो उडगयो, रक्त रंजित कर आम रे।
सौमैत्री[1] चमक्यो चित्त में, यह हुवो काम बदनाम रे ॥भा०॥११॥

दोहा

पिछतावो आण्यो निपट, हुवो किमो अन्याय।
विन अपराधे मारियो, लागो पाप अथाय ॥१॥

ढाल १५३ मी ॥ तर्ज—कव्वाली० ॥

आये हम किसलिये यहां पै, विराना शस्त्र ले लीना।
व्यर्थ में फेकना उसको, सरासर नामुनासिब[2] था ॥१॥
गये वहाँ लटकते धड़ को, देखते छाती भर आई।
ऐसी नादानी कर लेना, सरासर नामुनासिब था ॥२॥
गया उद्योग सब उसका, तरंगे हृदय की बुझगी।
ऐसे रणधीर का मरना, सरासर नामुनासिब था ॥३॥
रुलाया उसके परिकर[3] को, काम दुश्मन का कर डारा।
दिखाना सूर-पन ऐसा, सरासर नामुनासिब था ॥४॥
दीपता हुस्न था उसका, निरखते ही जो बन आता।
विलाया पुष्प यह खिलता, सरासर नामुनासिब हा ! ॥५॥
बिलखते राम पै आये, खड्ग चरणो मे यह रखना।
किया अन्याय प्रभु ! मोटा, सरासर नामुनासिब हा ! ॥६॥
करी ना आजलों ऐसी, भूल अयि भ्रातवर ! मैंने।
'मिश्रि' यह धर्म-धोरी-वध, सरासर नामुनासिब हा! ॥७॥

---

१ लक्ष्मण। २ अनुचित। ३ परिवार।

—चन्द्रायणा—

कर्‌ जानकी जवै बीज कटु बो-दिया,
नाहक उसके साथ जुलम वेहद किया ।
लगसी कटु फल वना! सचेतन रेवजो,
आम्हारी शुभ सीख हृदय-धर-लेवजो ॥१॥

ढाल १५४ मी ॥ तर्ज—श्यामसुन्दर चित चोर-लियो रे० ॥

कैसी करी, कैसी करी, कैसी करी रे,
अरे भ्रात ! भूल तैंने कैसी करी रे ॥टेर॥
जिसका खड्‌ग वह छोटा मत मानो,
उसी का परिवार वाला जोरावर जानो ।
आवेगे जरूर देखो इसी घड़ी रे ॥कै०॥१॥
उधर सूर्पनखा विद्या सिद्ध जाणी,
पूजा की सामग्री ले के मोद मन आणी ।
वैठके विमान वा तो तव चली रे ॥कै०॥२॥
शम्बुक की राणी जाणी पति आयजासी,
किया है शृंगार सोला वणी शची खासी ।
अमित उमग उर वीच भरी रे ॥कै०॥३॥
ताडका पौंची है उत मन लहरो लेती,
धड़ शिर पृथक सा देखी स्थिति एती ।
हा! हा! रव करती ताम नीची गिरी रे ॥कै०॥४॥
सावचेत होय करे दुख अणतोले,
अरे व्हाला गयो कठै आँखियाँ रे ओले ।
चीर-गयो कालजा ने आते जरी रे ॥कै०॥५॥
वर्ज्यो घणो थो पिण मान्यो नही लाला,
फूटग्या हमारा भाग दिन आया काला ।
वीजली अचानक मोपै आय गिरि रे ॥कै०॥६॥
हाय हाय जावूं कठै थने शोध लावूं,
घर पर जाय मुंडो कैसे वतलाऊं ।
म्हारी लाग्वीणी लाडी री कैसी दशा फिरी रे ॥कै०॥७॥

थारा विना सारो परिवार दुखी होग्यो,
मनडारो मोद म्हारो वहते व्हाले खोग्यो।
एतो दुख सहू छाती नही कड़ी रे ॥कै०॥७॥

धारके हिम्मत वैरी खोज कर टारु,
वैर लेऊँ पुत्र केरो दुष्ट भणी मारू।
लक्ष्मण के पाद-पंक्ती अनुसरी रे ॥कै०॥६॥

आय पौंची गह्वर पै पग खोज भाली,
राम सीता लखण ने नैन मे निहाली।
पुत्र शोक भूल 'वा तो' काम कूप परी रे ॥क०॥१०॥

वनायो स्वरूप सागे सुर कन्या-वारो,
षोडशवर्षी बाला चाला करती नजारो।
'मिश्री' राम पास आय विनती करी रे ॥क०॥११॥

—ढाल-पूर्व—

रामजी पूछै कित रेना, आये क्यों बोलो क्या केना,
लटक गे ललना कहे वेना, कन्या छूं महाराजा केरी,-
सोती को अपहरि ग्वग वैरी ॥राम०॥१२५॥
कामान्धी लेकर के चाल्यो, अपर इक विद्याधर आन्यो,
झपटगो मुज लेवण आत्यो, आपसमे मरगये लडकर वे-
विपन मे भटकू दुख भर के ॥राम०॥१२६॥

ढाल १५५ मी ॥ तर्ज—घूमर री० ॥

थारे शरणे अवला आई, सफल करो मनचाही हे लो।
मैं दुखियारन शरणे लीजो, थे तो आस निरास न कीजो हे लो ॥१॥
धन्य दिवस है दर्शन पायो, म्हारो भाग्य उदय मे आयो हे लोय।
जोड मिली है सुन्दर टांणो, मोपै दया भाव उर आणो है लो ॥२॥
व्याह करीजे, विरह हरीजे, गिग नागीणी जावे है लो।
जावे सो दिन पाछा नावे, झट श्रीमुख से फुरमावो हे लो ॥३॥
राम पयंपे आगे एक है, सो भी निगरणी दोगी है लो।
कोरी वातां काम न आवे, दुविधा में दिन जावे हे लो ॥४॥
यो बैठो है छडो छैगसो, इणसे अरजी करसो है लो।
हिम्मत वालो घणो उद्योगी, नारण इणी की सेगी है लो ॥५॥

सुण कर निरख्यो, मनडो हरख्यो, परख्यो पुरुष प्रवीनो है लो।
हाव-भाव विभ्रम दर्शाती, वा तो काम-बाण वर्षाती है लो ॥६॥
लक्ष्मण से ललना करे लटका, खोटा मन रा खटका है लो।
चटका मटका चञ्चल-नयनी, स्याही रंग है घटका है लो ॥७॥
लक्ष्मण भाखे सुन हे भाभी, चूक गई है हेली है लो।
बडी भोजाई कैसे व्याहे, भोलप करदी है पेली है लो ॥८॥
रीस करीने पाछी फिरगी, सीता टहुको दीनो है लो।
अरी अभागिन पति करवाने, गमनागमन ज कीनो है लो ॥९॥

दोहा

भिडक गई नभ-भामिनी, काठी कडवा बोल।
रे वनवासी भीलडो[1], क्या देखी हो पोल ॥१॥
राजकुँवर को मारके, लीनो खड्ग रतन्न।
अब बचणो तो है कठिन, करलो क्रोड जतन्न ॥२॥

ढाल १५६ मी ॥ तर्ज—पनजी मूँढे बोल० ॥

सब सुख हरग्यो हो, पतिराज[1] बेटो शम्बुक मरग्यो हो ॥टेर॥
पाताल लंका पोंची ताडका, छाती माथा कूटे हो।
करुण-स्वरे कुरलावत धरणी ऊपर लूटे हो ॥स०॥१॥
सब परिवार आयने पूछै, काइ विपदा शिर आई हो।
काई बतावूं भाग्य फूटगयो, पुत्र विलाई हो ॥स०॥२॥
बडी भयंकर बात सुनत ही, हाहाकार मचायो हो।
कहे खर को मार्यो या मरगो, क्या ढंग थायो हो ॥स०॥३॥
कहे ताडका दोय भीलडा, खड्ग लेगा सुत मारी हो।
गई ओलंभो देण पापीडा, स्यान बिगाडी हो ॥स०॥४॥
नीठ-नीठ मैं राखी इज्जत, खर दूषण रीसायो हो।
चवदा सहस खरा संग खेचर, दल सजवायो हो ॥स०॥५॥
सोच करो मत, जाता हूँ मैं, लेसूं बदलो वाली हो।
दोनो बाता म्हारा हिया मैं, शर ज्यों शाली हो ॥स०॥६॥
आयगयो यों वातां करतो, दण्डकी विपिन रिसायो हो।
डेरा डाग मंत्रि कथनाते, दूत पठायो हो ॥स०॥७॥
पग पकडो माफी आ मागो, खड्ग हमारो सौंपो हो।
दो वानो जो बने न हमसे, झगडो रोपो हो ॥स०॥८॥

—चन्द्रायणा—

नही मारा तुज पुत्र जाणकर के हमे,
अकस्मात् वध हुआ सत्य कहते तुम्हे ।
नही माफी का काम खड्ग नहि तायरो,
नही युद्ध मे सार कथन है माहरो ॥१॥

ढाल १५७ मी ॥ तर्ज—ख्याल की० ॥

दूत भूत सो जाय सुनाई, भिड़ज्यो खर-भूपाल ।
दूजो दूत पठावियो सरे, वचन कह्या वेयाल रे ॥१॥
वनवासी भीलड़ो[1], थारो दिन खूट्यो मार्‌यो लाल ने ॥टेर॥
वो नो बदलो लेवसूं सरे, दूजो राणी साथ ।
अत्याचार कारण ऊमाया, होगया अरे कुपात रे ॥वन०॥२॥
लखण कह्यो ललकारने सरे, आवूंछ विन जेज ।
बदलारी बातां समजासूं, ज्ञानूं थारो तेज जी ॥वन०॥३॥
आज्ञा मागी रामसू तब, पद्म इमी फुरमाई ।
जावो जीतो रिपु भणी सरे, है जगदम्बा न्हाई रे ॥वन०॥४॥
अगर जरूरत मेरी समजो, सिंहनाद करदीजो ।
उसी वक्त हूं तोरे पास मे, वीर सुधा रस पीजो रे ॥वन०॥५॥
धनुष लेय कर वंदन चाल्यो, सौमित्री धर धीर ।
जाय वकार्‌या आवो सामा, जिके वचन में वीर जी ॥वन०॥६॥
तेज पुंज रवि सारिसो-स वो नर-सिंह हो निर्भीक ।
मिश्री मुनि कहे पुण्य ह्वै सामे-कामवने है ठीक जी ॥वन०॥७॥

—सवैया—

बाण बदूक त्रिशूल भयानक तोमर नाग गदा कर से,
वार दुधार बहे तरवार सटासट सेग फला कर ने ।
जोश चढ्यो सग को अयको रण बीच घुमात सदा फरने,
दूषण शीसर अग्नि वटै दिगन्तावत जंग जमे जर ने ॥१॥

ढाल १५८ मी ॥ तर्ज—मेरे मौला बुलालो मदीने मुजे० ॥

मेरे सुभटो ! दिखादो जोश अभी ।
इस भीड़ मे नहीं घबराना कभी ॥टेर॥

मदमस्त यह छलगीर है, पुनि चोर लम्पट है बुरा ।
भाग जावेगा कही ?, विश्वास तूटा है छुरा ॥
दया योग्य बनाना नाही कभी ॥मेरे०॥१॥

घनघोर ही घमसान माचा, युद्ध ज्वाला दहकगी ।
गगन से लखि ताडका तव, हृदय से वा वहकगी ॥
इसके हाथ चले यमराज सभी ॥मेरे०॥२॥

जाय लंका दशानन से, अरज ऐसे ऊचरी ।
भाणेज-हन्ता खड्ग तस्कर, भीलड़ा है महावली ॥
उससे लडण गये पतिराज अभी ॥मेरे०॥३॥

रावण कहे मरना जनमना, खेल दुनिया का सही ।
टाल सकता कौन जग में, वीर ऐसा है नही ॥
ठाली झोड मचाना नाही कभी ॥मेरे०॥४॥

सुस्त हो गइ ताडका, फिर चाल ऐसी वा चली ।
इकवात तेरे लाभ की, कहने को आइ इत अली ॥
'मिश्री' ऐसे की संगत छोर सभी ॥मेरे०॥५॥

—ढाल-पूर्व—

भील की राणी इन्द्राणी, मिले ना जगत लेवो छाणी,
विरंची निज कर घडवानी, महल तुज रोशन हो जासी-
लावो तुम अप्सर-सी खासी ॥राम०॥१३७॥

खण्ड त्रय वस्तू जे आछी, मालकी थारी है साची,
सोचनी क्या आघी रु पाछी, गमाना नहीं रत्न ऐसा-
फेर यह सामर्थ-पन कैसा ? ॥राम०॥१३८॥

ढाल १५६ मी ॥ तर्ज—चुरा के ले गया कोई० ॥

कराना करना करवाना, खेल तकदीर के सारे ।
ऐसा कुण वीर नर वाका, रेख पै मेख को मारे ॥टेर॥
पुष्पक यान मे वैठी, चला वो गगन के अन्दर ।
आन कुल ज्हान की मेटी, केसर को धूल में डारे ॥क०॥१॥

—सवैया—

जिमि सायर को तिरवो भुज मे भिरवो मृग शेरन से रन मे,
गिरवो मुख गेज त्रिछाकर के 'मिसरी' अगनी मय आगन मे ।

पुनि मारुत ने भरिवो वटवो, गिरिराज चढे पग पाण्डुन[1] से,
तिमि दुक्कर है मनको वस मे करि पालन शील सु-भागन मे ॥१॥

—छप्पय-छन्द—

फील[2] विना जिम फोज, मौज विन धनके कैसी ? ।
ढील विना सामरथ, कील विन ताला जैसी ॥
मील विना को माप, भील विन तीरन्दाजी ।
ढोल विगाडे काम, नीलगिरि विन वनराजी ॥
शील विना शोभा नही, नयन विना जिम देहडी ।
सत्य विना 'मिश्री' धम्म, वात कहो विन तेहडी ॥१॥

शीले सुख सौभाग, आग पानी बन जाता ।
होत हलाहल सुधा, उदधि गो-पद बन आता ॥
शैल शिला सम होत, बने अरि मित्र सुहाता ।
विषम भाव सम बने, बने मूरख गुणनाथा ॥
सर्प पुष्प-माला बने, संकट मिट संपत रले ।
शीलवान जगपूज्य है, 'मिश्रि' कहे विरले मिले ॥२॥

बाजे अपयश तूर, नूर फीका पडजावे ।
रहे संयम को नाम, गुणो के आग लगावे ॥
सर्वापद को गेह, ख्यात-कुल-धर्म लजावे ।
नर्कों हंदो द्वार, निगोदां योनि भ्रमावे ॥
पर-त्रिय हित पग जेता भरे, शिशुहत्या तिण तेतली ।
मुनि-मिश्रि कहे कुशीलिया, आपद होवे एतली ॥३॥

राजा देवे दण्ड, भाट भाण्डी कहलावे ।
नाना व्यापे रोग, सिडे काया कुम्हलावे ॥
कामि-श्वान कहे लोग, आंखियां जावे ऊंडी ।
गधा जिसा नामर्द, चाटने सूठी कूंडी ॥
रहे चन्द्र नित भाखसो, हलफल्लक हियडो करे ।
'मिश्रि' कहे पामर तिके, बिना मौत बापडे मरे ॥४॥

दोहा

[illegible] जन जीवता, तो नेको नर [illegible] ।
[illegible] नर्क लिन गहे, [illegible] ॥१॥

1. [illegible] पांवों से ।
2. हाथी ।

ढाल १६० मी ॥ तर्ज—चुरा के ले गया कोई, मेरी जंजीर सोने की० ॥

दंडकारण्य मे आया, पेखन्ती पद्म-सीता को ।
अहा ! क्या रूप है इसका, देख इन्द्राणि झखमारे ॥क०॥१॥
किन्तु इस पती के बैठे, उडाना तो असम्भव है ।
लगा है सोच यह भारी, मणी अहि-फण पै ले धारे ॥क०॥२॥
अमोघा वादिनी विद्या, स्मरन्ता शीघ्र व्ही हाजर ।
कहो किसभाति लूं सीता, उपक्रम वो बता मारे ॥क०॥३॥
निर्जरी कहत अयि रावण !, काम यह उचित है नाही ।
सती पति और ना इच्छे, व्यर्थ क्यों पाप अवधारे ॥क०॥४॥
लेना अरु देना क्या इसमे, व्यर्थ की वात को छोडो ।
सद्युपचार से कोई, वने यह काज जो सारे ॥क०॥५॥
सुरी सिंहनाद का संकेत, दोनो भायो ने जो कीना ।
वताया स्वर वही कर तूं, जिसी से काम वनजा रे ॥क०॥६॥
युद्ध की दिशा मे जाकर, किया सिंहनाद रावण ने ।
सिया कहे जल्द तुम जावो, स्पष्ट ही शब्द उच्चारे ॥क०॥७॥
राम कहे सुणो अयि कान्ते !, एक चिंता तुम्हारी है ।
अकेली छोडके जाना, यह विपिन करडा रे ॥क०॥८॥
पधारो खवर कर आवो, देर अच्छी नही स्वामिन् ! ।
हुवा सिंहनाद वहुतेरा, जीव ना धैर्य को धारे ॥क०॥९॥
सीता की प्रेरणा पा-कर, और संकेत के सहारे ।
चला धनु वाण को लेकर, 'मिश्रि' कुण भावी को टारे ॥क०॥१०॥

दोहा

शकुन पलाऊ है प्रगट, स्वर वर्ज्यो न रहाय ।
रोष भर्यो है रामजी, अति-आतुर व्है जाय ॥१॥

ढाल १६१ मी ॥ तर्ज—श्री मुनिसुव्रत साहिवा० ॥

पाछे थी रावण आवियो, पावियो अवसर विद्या वल टार के ।
खेंच ली पुष्पक यान मे, सीता तो रोवण लगी अनपार के ॥१॥
देखिये कर्म कैसी करी, हरी वाटी भरी दी रे सूकाय के ।
आश्विन मास आरति करे, तदपि नही इसके दया दिल आय के ॥टेर॥

ताम जटायू रीसे भर्‌यो, रावण यान के आडो जी आय के।
वदन विलूर्‌यो रायनो, नखांकुर वो अति अकुलाय के ॥दे०॥२॥
वरजियो, तेह माने नहीं, कोपियो भूप ने कापिया पांख के।
धरतीये जाय नीचो पड्‌यो मूर्च्छियो ताम मीचाणी आंख के ॥दे०॥३॥
रावण निशंक चालो रह्यो, डर नहीं कोइनो तेह दिल माय के।
ज्यो रे विमान आगे वढे, त्यो त्यो जानकी भइ असहाय के ॥दे०॥४॥
आवो सुसरा दशरथ जी, जनक-जनक, भामण्डल वीर के।
आवो रे लछमण लाडला, भावज मे पडी आ पीर गंभीर के ॥दे०॥५॥
वाज ज्यूं चिडकली पकडले, वापस ज्ञेन ले आमिष खण्ड के।
ताविध मोय पकडी है पापियो, घट माहे जाहि के घणो घमण्ड के ॥दे०॥६॥
आविये शीघ्र छुडावियो, नहीं रे आधार, वनगइ निराधार के।
कोई तो दया उर लाइये, घणी दुखित भई करो अब सार के ॥दे०॥६॥
प्राणवल्लभ नहीं जावना, हट कर भेजिया मैं मति-हीन के।
तेह तणा फल पाइया, रूठो उहापो तो मैं नहीं दीन के ॥दे०॥७॥
पग तणो नेउर त्यागियो, एण सहलाणिये आ जो दोर के।
करे विललाट वीहामणा, आंसू ओ केरी तो झडी लगी जोर के ॥दे०॥८॥
अर्कजटी नो रे जाइयो, रत्नजटी तो विद्याधर एक के।
भामण्डलनो रे सेवक भलो, रोज गुणताई कियो विवेक के ॥दे०॥१०॥
स्वर लगी सीता ने जाण कर, आडो फिरियो रावण रे तत्काल के।
तदपि विमान न रोकियो, टोकियो जिणतणो नहीं कियो ख्याल के ॥दे०॥११॥
रोषी रावण ललकारियो, कठे रे लिजावे तू तो राम नी नार के।
रावण कहे रे धुग रंक तू, काई पंचायती करे रे गिवार के ॥दे०॥१२॥
गगण विद्या तस अपहरी, पंखविहूणो पंखियो नो पेख के।
तारिधि ने नीचो गिर्‌यो, कंबुकल्लोल मे ज्यूं खडे देख के ॥दे०॥१३॥
दुख अति हृदय मे आणियो, म्हारी अब कोनी इन मोन संभाल के।
मोटा सु सामनो नहीं टिके, 'मिश्री मुनि' कहे दैवलो ढाल के ॥दे०॥१३॥

ढाल १६२ मी ॥ तर्ज — मा डेडो गाली दूंगी दे० ॥

जो रोवे पंकज-नयणी रे, वो रावण भागे जाय ॥टेर॥
भूचर देवन मद राता, रे [illegible] ज्ञान समाना।

मालिक तीन-खण्ड का माना रे, क्या मेरे सामने राम ॥क्यो०॥१॥
मेरे महस अठारा राणी, तू मुज मन-मंदिर मानी।
थापू पटराणी स्याणी रे, तुम चलसी हुकम तमाम ॥क्यो०॥२॥
करतार करी थी कूडी, जोडी मिलाई भूंडी।
मैं उसे बनाता रूडी रे, अब झेली हाथ लगाम ॥क्यो०॥३॥
मणि-माला वायस पाई, वा मुजको नही सुहाई।
इसलिये लाया तुजताई रे, यह सुन्दर कीना काम ॥क्यो०॥४॥
मुज मान्या सब ही माने, वे देव सरीखी जाने।
अब नाहक ही हठ ताने रे, लो मनचायो आराम ॥क्यो०॥५॥
सती नयन भरी ना पेखे, उसे माने रोडी लेखे।
दो अक्षर ध्यान विशेखे रे, है सधर शील परिणाम ॥क्यो०॥६॥
कामातुर रावण रागे, वो सत्यवती पग-लागे।
निज नियम न मनको त्यागे रे, यह करी दुर्दशा काम ॥क्यो०॥७॥
लम्पट ललचावे वाणी, अण इच्छंती जाणी।
हूँ पहले पचखाणी रे, जिणसू नहि पूगे हाम ॥क्यो०॥८॥
सीता पग खेंची लीधो, शिर स्पर्श जरा नहि कीधो।
परपुरुषो रो परसीधो रे, चित सूँ नही चहत छदाम ॥क्यो०॥९॥
मुहफेरी क्रोधावेशे, कहे कटुक वचन तरेसे।
क्यो ना तू दूरो वेसे रे, क्या बिगडी दशा दमाम ॥क्यो०॥१०॥
मुजको लाने से थारी, सब उजड जायगी वारी।
इज्जत की होगी ख्वारी रे, कहे 'मिश्री मुनी' ललाम ॥क्यो०॥११॥

—ढाल-पूर्व—

सीता को लंका ले आयो सामंतसूँ मंत्री वधवायो,
दशानन नयी लाडी लायो, लंका मे पूरब दिशि वारे,-
देवरत बाग हि गुलजारे ॥राम०॥१३९॥

रक्ताशोक तरु तले जाई, बिठाडी सीता को व्हाँही,
धर्यो है ध्यान सिया बाई, जहाँलो खबरो नहि पावूं,-
आहार अरु पाणी छिटकावूं ॥राम०॥१४०॥

त्रिजटा करती रखवाली, और कइ रक्षक बलशाली,
ध्यान मे मगन जनक-लाली, सरोवर शील तणे झूले,-
राम को सिवरण नहि भूले ॥राम०॥१४१॥

—छप्पय-छन्द—

मूल गाथा पनपन ढाल गुण सित्तर है पूरी ।
दोहा है सैंतीस सोरठा छहो सनूरी ॥
दोय सवैया कवित्त दोय सप्त छप्पय मानो ।
कहा शिखरणी एक ग्यारा चंद्रायण जानो ॥
गाथा छसो ठारह है समावेश सारो भया ।
ऐसे द्वितिय खण्ड मे 'मिश्री मुनि' निर्मित कीया ॥१॥

दोहा

नव-रस-पूरित अति ललित, द्वितिय खण्ड सुखकन्द ।
'मिश्री मुनि' निर्मित कियो, पूरण परमानन्द ॥१॥

॥ इति रामयशो-रसायणे द्वितीयोल्लास परिपूर्णम् ॥

॥ तृतीयोल्लास प्रारभ्यते ॥

दोहा

ॐ ह्री श्री श्रीभगवती, सरस्वती मम माय ।
तृतिय-खण्ड प्रारंभ मे, सुन्दर करो सहाय ॥१॥

ढाल १६३ मी ॥ तर्ज—मुनि तणो मंगल तीसरो जी० ॥

लक्ष्मण पास श्री रामजी रे, आया है जव-गति चाल ।
जग में जोरसूं झिल रह्या जी, दीठा है ते ततकाल ॥१॥

भाईजी भूल भारी करी जी, एकाकी भावज छोर ।
आप अठे क्यो पधारिया जी, अटवी है एह अघोर ॥भाई०॥२॥

राम कहे तुम तेडिया जी, शब्द संकेत रो सार ।
ते कहे मै नही तेडिया जी, कोइ छलगीरता धार ॥भा०॥३॥

भाईसा ! शीघ्र पधारिये जी, नही है देरीनो काम ।
रखे विपदा वन मे आ पडेजी, मै आवूं जीत संग्राम ॥भा०॥४॥

दौडता रामजी फिर चल्या जी, आया मूलगे ठाम ।
पदमण नही है दृष्टी पडी जी, मूर्च्छित हो गये राम ॥भा०॥५॥

हाय कहाँ है मुज सुन्दरी जी, कौन कियो अपहार ।
ढूंढत रन वन रे विषे जी, कठेइ पाई नहि नार ॥भा०॥६॥

पंख विहूणो जे पखियो जी, अधमूओ नजर मे आय ।
रामजी सोचियो मनविषेजी, नारी बचावता दुर्दशा थाय ॥भा०॥७॥

श्रावक जाण करी सहायता जी, श्रीमुख दियो नवकार ।
मंत्र प्रभाव सूं स्वर्ग चतुर्थ जी, लियो सुर अवतार ॥भा०॥८॥

संगत थी पशु उधारियो जी, संगति है सुखदाय ।
नारि वियोग मे रामजी, 'मिश्री' वे नगन सो थाय ॥भा०॥९॥

ढाल १६४ मी ॥ तर्ज—रुणझुणियो ले० ॥

राम वियोगी वन विषे वनिता सोधे,
दशा भई विपरीत, बोले भर क्रोधे।
कुण लेगयो मुज जानकी, महा अन्यायी,
क्यो रे बिगाडी नीत, तोडे पुन पोवे ॥१॥

रे वृक्षो ! तुम बोल दो, कहा छिपगी है,
थारे भरोसे छोड गयो लहि विपती है।
वनवासी ये जीवड़ा-किरपा करदो,
प्यारी रो पतो बताय-मुज चिन्ता हरदो।
पता-पता कंकर भणी-ने पूछे है,
कोइ मुख बोले नाय, थोरो मन सरदो ॥३॥

खिण रुवे खिण मे हँसे, करी धनु चाढे,
कदी पडे मूर्छाय-कदली वे काटे।
करे विलाप विह्वमणा-पक्षी कुरले,
नहीं चाले टुक जोर, आयुटा काटे ॥४॥

विश्वास नहीं है कोइनो, इन विरियो मे,
नग्न-विचरत भये राम, छुटी घिरियो मे।
लोक लाज आवे घणी इन पुरुषो मे,
नारी न राखी राम, राज्य किम करसो मे ॥५॥

दोहा

धन्य कैकई मात ! तुम, भलो कियो उपकार।
मैं किम राज्य रमावतो, निभावतो ना नार ॥१॥
इम लक्ष्मण के पास मे, चंद्रोदर सुत सार।
दल-बल लेय विराधरो, नमन कियो धर प्यार ॥२॥

—सन्नावणा—

बोले वीर विराध [illegible] मोहि दीजिये।
मैं होलूं जो संग काम मम लीजिये ॥
[illegible] नाथ, [illegible] ।
[illegible] ॥१॥

ढाल १६५ मी ।। तर्ज—सहलाणी० ।।

आफणतो खर दूपण बोल्यो, रे भील ! भयानक काम कर्‌यो ।
अब तो नहि बचबावालो है, मरणा रो मोखो आन पर्‌यो ।।१।।
सौमित्री भणे खर भूख मती, भखभूर करीने छोडूला ।
जिण फोज तणो अरमान करे, उणरो मैं मान मरोडूला ।।२।।
तूं किसा बागरी मूली है, टणकाई थारी देख लीवी ।
सीधी कहतो उलटी मानी, नादानी री तू बात किवी ।।३।।
अब दिखा सूरता साचेली, तीरा रो तरकस खोल परो ।
विद्या सारी कर याद अठै, निज बोल रो बोझो तोल खरो ।।४।।
दोनो आपस में गया भिडी, महाघोर युद्ध घमसान भयो ।
खर दूखण त्रीशर एकसाथ, लक्ष्मण रे घेरो डालदियो ।।५।।
नटवा ज्यो लक्ष्मण नाच रह्यो, झाटक काटक अड़ियो डाकी ।
शिर फोड रह्यो काचा घट-सो, रे खर ! लेना निज फल चाखी ।।६।।
लासो पर ल्हासो पाट दिवी, खाला तो खलक्या खून तणा ।
हाको तो होग्यो हदवारो, नही झेलसक्या है झपटाणा ।।७।।
चकचूर कर्‌यो है घेराने, मिलियो नहि पाणी देवालो ।
सारो ने मार गिराया है, विद्याधर केरो बावेलो ।।८।।
खूटगयो खर दूपण तो, त्रिशर ने जातोडो मार्‌यो ।
हाथो जो काम बिगाड्यो थो, वो अपणे हाथो सुधार्‌यो ।।९।।
सामान सँभालो रे विराध !, हाथी घोडा रथ अस्त्रादी ।
धन माल थाल थारे जमगी, बेकार जाय नही शस्त्रादी ।।१०।।
उमग्यो विराध सामान लेय, अरु लक्ष्मण रे साथे चाल्यो ।
दूरो थी दृष्टी पडी तबै, श्रीराम भणी दुखित भाल्यो ।।११।।
आ-तो मैं पहले जाणी थी, बणगी है देखो बात वही ।
पर जाय सँभालूं भाई ने, उमको नित आय ठिकाणे सही ।।१२।।

ढाल १६६ मी ।। तर्ज—थें मन मोह्यो महावीर जी ।।

लक्ष्मण आय ऊभो रह्यो, राम झानयो है नाय जी ।
राम जोवे नभ में सही, चित व्याकुल देराय जी ।।१।।
राम झुरे रे नार ने, देवे ओलूभो एम जी ।
वनदेवी थारे आसरे, मूकी नारी तिण टेम जी ।।टेर।।

ओलखलीना ताम गेणा सीया तणा जी,-
चिन्ह बतावण तेह न्हाखिया आपणा जी ॥३॥
आया लंक पयाल के दूत पठावियो जी,-
खर सुत सुन्द नरेश के साम्ही धावियो जी ॥
वीर विराध निवार लड्यो तिणमू खरो जी,-
वैर निकालन हेत वण्यो अति आकरो जी ॥४॥
राम रु लक्ष्मण देख ताडका डरगई जी,-
लेय कुंवर को साथ लंका सीधी लही जी ॥
शनी-दशा के तुल्य पापण रावण-तणे जी,-
लागी पनोती आय 'मुनी मिश्री' भणे जी ॥५॥
वीर विराध स्व राज दिरायो रामजी जी,-
महापुरुषो ने योग सर्यो तस कामही जी ॥
मोटोनी बुध वडी वोल निज पालियो जी,-
शरणागत रो दुक्ख पलक मे टालियो जी ॥६॥
करण सीता की खोज घणा भट मोकल्या जी,
फिर-फिर हुवा हैरान खोज नहि भालियाजी ॥
आया अधोमुख सर्व लज्जा आई घणी जी,-
राम कहे स्यो दोष कर्म-गतसूं बणी जी ॥७॥
खर महलो दो वीर विराज्या है तहाँ जी,-
भक्ती करे रे विराध खोज चालू जहाँ जी ॥
चहुँदिस फेली वात विराध निवाजियो जी,-
पर-उपकार वसाय सुजस बहु गाजियो जी ॥८॥

ढाल १६८ मी ॥ तर्ज—आसावरी० ॥

आशा का अजब तमाशा, गुणिजनको लखि आवत हासा ॥टेर॥
शाह मगति तारा अभिलाषी, सहस द्वादश लो खासा ।
बितादिया विद्या-साधन मे, कर हेमालय वासा ॥गु०॥१॥
अति आतुर बनकर के आया, किष्कन्धा सु-विलासा ।
रूप रचा सुग्रीव सरीसा, अपर सूर्य आकासा ॥गु०॥२॥
क्रीडा करण विपिन मे कपिपति, पहुँचा उमंग अभासा ।
कृत्रिम आयो राज्य सभा मे, सब सरदार हुलासा ॥गु०॥३॥

सास सुग्रीव आयो निज घर को, रोक लिया दरवाजा ।
धगक पडी उर कसक करेजे, फरकत नयन निशाना ॥सु०॥४॥
दो सुग्रीव बना सब जाना, बाली सुत बलवाना ।
काकी महल ताला जड दीना, इज्जत तणा इजाना ॥सु०॥५॥
कृत्रिम जावण को हठ कीनो, चंद्ररस्मी जो जवाना ।
हाथ पकड के बाहिर खींचा, होने दो यह खुलासा ॥सु०॥६॥
नहीं होगा निर्णय यह जोलों, करो बगीचे वासा ।
चीं-चपड जो किया इसीसे, यहाँ से मार भगाना ॥सु०॥७॥
हाथ-सर्व दोनो को बांध्यो, नौकर चाकर खासा ।
हाजर खडे हाजरी माही, देखण एह तमाशा ॥सु०॥८॥
अन्तो को आरत है अधिकी, शान्ति न श्वासोच्छ्वासा ।
'मिश्री मुनि' कहे रोग बना है, सब कर्मों का रासा ॥सु०॥९॥

—कवित्त—

तारा प्रेम की पिटारी, नारी जाती मे निराली-
सारी अप्सरा सी प्यारी, मोहनी विख्यात है ।
पाले नियम करारी, पतिव्रता है आचारी-
दृढ शील-व्रत-धारी, भरे साख सुरनाथ है ॥
याही हेत पड्यो यह परपंच महाभारी-
जानारी एक नाहि दृग से दिखात है ।
बालीपुत्र बलवान काकी दिये कूटी द्वार-
ऐसो मतिमान है, पै,मान को निशान है ॥१॥

ढाल १६६ मी ॥ तर्ज—मोटो [illegible] ॥

पार नहीं प्रभुता तणो, ओ [illegible] प्रधान, मोटो महाराजा ।
अक्षौहिणि [illegible] तणो, मालिक [illegible] मान, वाजे निज वाजा ॥१॥
सुनियोगा कुल मेल्यो, यो [illegible] आगे [illegible] ।
एक सरीखे दो हुलिया, निर्णय होता नाय, [illegible] ॥२॥
[illegible] बिना निवारण नहीं होसि, सुनियो [illegible], [illegible] ।
[illegible] ॥३॥
[illegible] ।
[illegible] ॥४॥

मंत्री पंचो मिल कियो, दोनो राडो अक्षोहणी सात,
सारा सुनलीजो।
वाली सुत माने नही, क्यो करो लोको री घात ॥सा०॥५॥
आपस मे दोनो लडे, साचो देव सहाय।
झूठो न्हासी जावसे, आ आई सारो रेद याय ॥सा०॥६॥
लडिया दोनो ढंग के, भिडिया हाथी जेम।
कसर न राखी एकही, वल फोर्‌यो उण टेम ॥सा०॥७॥
दोनो महा वलवन्त है, दोनो ही सम-तोल।
दोनो विद्याधर खरा, दोनो वीर अडोल ॥सा०॥८॥
हाथी सिह सूरज वन्या, वन्या अष्टापद ओर।
सर्पादिक नाना वन्या, हुवो नाही निचोर ॥सा०॥९॥
याद कियो सुग्रीव जी, वजरंगी ने ताम।
वे दानो ने ताडिया, नहि पूगी मन हाम ॥सा०॥१०॥

—कवित्त—

काहू पै पुकारूँ और कौन को बुलावू इत-
कौन मेटे तकरार आपा पण राखले।
वाली पुनवान सो तो मुनी वनी मोक्ष गयो-
चन्द्ररस्मी वलवान निर्णय न भाखले॥
खर हुतो पिन वो भी धूल बीच मिलगयो-
रह्यो है लंकेश वो भी विषै-रस चाखले।
एतादृश संकट मे, स्हाय नही देन वारा-
कर्म के अंधार माज, ज्योति वनी झाकले॥१॥

ढाल १७० मी ॥ तर्ज — भलाई करले रे वंदा० ॥

रुलाया पापी ने कैसा रे रुलाया पापी ने कैसा।
ऐसा मेल वण्या है आके, सुण्या नही जैसा ॥टेर॥
इतेक खवरो मिलगी किनसे, लंक पयाला जाण।
वीर विराध ने राज दिरायो, राम लखन वलवान ॥रु०॥१॥
गुप्तपने मे दूत पठायो, नृप विराध के पास।
सारो ही वृत्तान्त कहलायो, काम वनालो खास ॥रु०॥२॥
वेग पधारो करूँ वीनती, महादयालु देव।
काम तुम्हारो सफल होवसी, करे देवता सेव ॥रु०॥३॥

कपिपती सुण ने शान्ती पाई, जलिया पर पीयूष ।
इसी भांति वचनामृत सुनता, लगी मिलन की हूँस ॥क०॥४॥
छडी सवारी आयो ततखिण, वीर विराध के साथ ।
राम चरण वन्दे मन हुलसित, जोड्या दोनूं हाथ ॥क०॥५॥
करुणा-सागर कष्ट मेटसी, अब की पुल या आई ।
सती महल मे संकट पावे, सहाय करो तुम साई ॥क०॥६॥
वीर विराध परीचय दीनो, यह किष्किन्धा ईश ।
सहस्र भूप इनके चरणों मे, नित्य नमावे शीश ॥क०॥७॥
राम भणे कपिराजा सुणलें, तुम हम दुःख उजाग ।
वदे कपीश मेरो दुःख मेटो, थारो भी किरतार ॥क०॥८॥
पर-दुःख सुण अपणो दुःख आवे, गहवरियो राजान ।
लक्ष्मण कहे पधारो स्वामी!, पर-दुःख हरिये मान ॥क०॥९॥

—ढाल-पूर्व—

कहे सुग्रीव मजा पावूं, त्रिया की शोध जु ले आवू,
नहीं तो सब त्यागे जावूं, गजर मैं लाऊंगा तेरी,-
मानलो प्रतिज्ञा मेरी ॥राम०॥१४८॥
रामजी किष्किंधा आवे, अपर को वाही बुलवावे,
नसाया दुःख भणी नावे, यथावत साथ साथ लीनो,-
उन्होंरो मुल्क रघ दीनो॥राम०॥१४९॥

ढाल १७१ मी ॥ तर्ज – मोहनगारो रे० ॥

कपट तज कारज हमारो रे, [illegible] म्हारो रे ।
कपट किया मैं दोनों भव मे, दुःख भूरा भारो रे ॥टेर॥
पालसिरो राजा महाराजा [illegible] भारो रे ।
महा अधर्मी नीच जाण, [illegible] म्हारो रे ॥क०॥१॥
[illegible] रो सम्राट [illegible] रे ।
[illegible] सब [illegible], [illegible] रे ॥क०॥२॥
[illegible] रामचन्द्रजी, [illegible] रे ।
[illegible] रे ॥क०॥३॥
[illegible] रे ।
[illegible] ॥क०॥४॥

त्रयोदश कन्या कपिराजा ने, राम-हितारो रे ।
ग्रहन करो म्हाराज-व्याह रचिये सुखकारो रे ॥क०॥५॥
राम कहे ये वातो छोरो, वचन सँभारो रे ।
पहले चावूं हाल हृदय से, सीता-त्रारो रे ॥क०॥६॥
राज्य व्यवस्था ठीक करीने, हाजर रहूँ चरणारो रे ।
सीताजी री शोध करण ने, जासू म्हारो रे ॥क०॥७॥
तारा सेती पती मिल्यो जद, लीनो है आहारो रे ।
संकट गयो विलाय शील को म्हातम-भारो रे ॥क०॥८॥

दोहा

खर-मृत्यू की खवर से, रावण के घर माय ।
रोणो वडग्यो जायने, वो निकलेगो नाय ॥१॥
पाँच दिनान्तर पौचगी, सूर्पनखा सुनलेह ।
मिलतो ही परिवार मे, आसू वर्षे मेह ॥२॥

ढाल १७२ मी ॥ तर्ज—चकोरी चद माची हो० ॥

सूर्पनखा सुहासणी, रोवे अनपारी हो ।
रावण रे गल-लाग ने, कहे वात हियारी हो ॥१॥
पनोती रावण लागी है, साढी सातज वर्षरी सवारी कागी हो ॥टेर॥
शम्बुक शीस उडावियो, लियो वंस संहारी हो ।
देवर दोनो मारिया, अरु फौजो सारी हो ॥प०॥१॥
लंक पयाला आविया, काढ्या हमे बारे हो ।
राक-जिसा हमे लेखिया, किणको नही धारे हो ॥प०॥३॥
आप जिसा भाई छता, म्हारी होय फजीती हो ।
रोवूं किण पै जायने, आई ऐसी विपती हो ॥प०॥४॥
वीरविराध वसावियो, जो लंक पयाला हो ।
सोवन-वर्णो एक है, पुनि अपर है काला हो ॥प०॥५॥
भाणेजा वसवा भणी, कोइ ठौर बतावो हो ।
सगो सगे जाने सही, मन छेह दिखावो हो ॥प०॥६॥
सारी सुण रावण कहे, सबही होजासी हो ।
घट्टीना फेरा घणा, घट एक पिमासी हो ॥प०॥७॥
पांखाली जो कीडियों, है मरवा वाली हो ।
छिनमें मार भगावसी, क्यो रहि हो काली हो ॥प०॥८॥

दोहा

पति दुख मे पीडित प्रिया, ऊठ गई उद्यान ।
देवी-सी दिव्यातमा, दीठी पूरित ध्यान ॥१॥

ढाल १७४ मी ॥ तर्ज—हाँरे म्हारो हेलो, हेलो झरोखे ऊभी झेलो० ॥

हाँरे सुणो स्याणी, हाँरे सुणो स्याणी, तू महाराणी-
घणी गुणखाणी, लो दिलमूं वात पिछाणी ॥टेर॥
हूँ मंदोदर देवी, हूँ मंदोदर देवी, घणा सूं केवी
इण घर एवीदू, जी नही जाणो जेवी ॥१॥
रे भद्रे ! क्यो भरमाणी, रे भद्रे क्यो भरमाणी, बन रावण की महाराणी-
वात लो मानी, थारी सुधरेगी जिदगानी ॥२॥
है तू किण घर जाई, हे तूं किण घर जाई, कठै परणाई,-
अठै क्यो आई, थे द्योनी सर्व सुणाई ॥३॥
मै जनकजी रे घर जाई, मै जनकजी रे घर जाई, दशरथ घर व्याही,-
पति तुज लाई रंडापो तुज देवण ताई ॥४॥
सुणकर नहि रीसाई, सुणकर नहि रीसाई, कहे सुण बाई-
धन्य तुज ताई, तू लंकपती मनभाई ॥५॥
थारो पति वन माही, थारो पति वन माही, भील के दाई-
फिरत हा वाही, क्या सुख की बहार दिखाई ॥६॥
तज पति की मन-आसा, तज पति की मन-आसा, पूर्ण निरासा-
वचन यह खासा, मै देती तुझे दिलासा ॥७॥

दोहा

मन्दोदरि के वचन को, सह न सकी सीताय ।
दे ओलूभो आकरो, सुनत गुप्त खलराय ॥१॥

ढाल १५७ मी ॥ तर्ज—तुझको लाखो धिक्कार० ॥

सती कहानेवाली, तुजको लाखो धिक्कार २ ।
रती रमानेवाली, तुजको लाखो धिक्कार २ ॥टेर॥
कहाँ सिंह कहा गीदड गेलो, कहा गरुड कहाँ पन्नग हेली ।
सबको सरखा गिणती, तुजको लाखो धिक्कार ॥स०॥१॥
कहाँ श्याम मम गुणो सागर, कहा लम्पट तुज-पति ज्यो वागड ।
उनको अच्छा मानत, तुजको लाखो धिक्कार ॥स०॥२॥

भूत पिसाच वैताल बनाता, हड-हड हास्य भरे।
डाकिन शाकिन और सिकोतरि, ओलू दोलू अरे ॥वु०॥७॥
महाभयानक शब्द सुणावे, मन को करड भखे।
वडो-वडो का छक्का छूटे, कैसे प्राण रखे ॥वु०॥८॥
परमेष्ठी का ध्यान धवल है, दृढ मन तेह बनी।
दखल करन की हिम्मत नाही, जो है शील धनी ॥वु०॥९॥
रावण नही पचखाण भागता, सती न शील चले।
पक्के को क्या भय दुनियाँ मे, कायर ठेह पडे ॥वु०॥१०॥
धन्य-धन्य है नियम निभावे, 'मिश्री' आस फले।
होत परीक्षण कनक अग्नि मे, सारे विघ्न टले ॥वु०॥११॥

—चन्द्रायणा—

रात्री-भर इणभाति सताई तेहने।
कामातुर महिपाल ध्यान नहिं जेहने ॥
विभीषण सुन प्रात दिलासा देण को।
इमरत के सम तोल सुणावे वेण को ॥१॥

—ढाल-पूर्व—

बाईसा ! कौन ? आप कहिये, कहाँ से आये हो सहिये,
कौन इत लाये, कहाँ रहिये, मेरी कछु शंका मत राखो,-
जाण मुज भ्राता सब भाखो ॥राम०॥१४६॥

अधोमुख वस्त्र खेच बोली, पुरुष को अति उत्तम तोली,
मधुर-वचनो से वाहोली, राम-तिय दशरथ-सुत-राणी,-
पिता लो जनकराय जाणी ॥राम०॥१४७॥

ढाल १७७ मी ॥ तर्ज—अनोखा भँवरजी हो० ॥

लक्ष्मण री भाभी अछू हो, भाईसा, भामण्डल री बेन।
दण्टक वन मे झोपडी हो, भाईसा, वसते तीनो सेण क ॥१॥
सुणिये बंधवा हो हमारी साची-साची बात ॥टेर॥

सूर्यहास असि ने लियो हो, देवरजी, लीलावस हो प्राय।
करण परीक्षा वाहियो हो, भाईजी, शम्बुक शीश उडाय क ॥मु०॥२॥
सन्द निहारी रामजी हो, भाईसा, दियो ओलूभो पूर।
विद्या साधन मारियो हो, भाईसा, जोखम जाण जरूर क ॥मु०॥३॥

हीन-दीन है दोनो भीगडे, फिरते वन-माही।
साधन वाहन नहि है उनपै, आपहि मरजाई ॥भै०॥८॥
मोर जोर कुण आर जगत मे, व्यर्थ मचाता शोर।
आशा छोर वनेगी मेरी, मास दिवस में ठोर ॥भै०॥६॥
इतने पर भी आयगये तो, करके छल-बल छोर।
यहाँ से दूर फेक देने मे, लगे कोनसा जोर ॥भै०॥१०॥

ढाल १७६ मी ॥ तर्ज—राधेश्याम० ॥

पहले से यह सुनरक्खी हे राम-त्रिया से मरणे की,
होगी रावण की जो निश्चित वात नही हे टरने की।
विभीपण यह सोच रहा है, ज्ञानी वचन मे झूठ नही,-
मैने तो उपचार किया था रावण केजु बचाने का,
पै न मरा दशरथ जनक हि जो सहाय मिला था रखानेका ॥१॥
भावी प्रवल नहि हट सकती है कितने ही उपचार करो,-
सीता देदेने से सारी इस आपद से दूर टरो।
विभीपण की वात दशानन सुणता नहि है कान लगा,-
दृष्टी-भर नही देख रहा है, काम वाण से होश भगा ॥२॥
पुष्पकयान मे ले सीता को, क्रीडा करन को चल दीना,-
अद्भुत पर्वत नदी रु नाले उद्यम दिखाने का कीना।
हसो के जोडे सरिता तट केली घर कामी नर के,-
विविध दिखाते हैं जो मन्दिर और वगीचे मन भर के ॥३॥
हे सुभगे! क्यो ना तुम देखो, आराम भवन शय्या सागे,-
आओ मेरी इच्छा पूरो, भाग्य-दशा तुमकी जागे।
क्या हसनी वायस मेती, अपनी प्रीति वढायेगी,-
वैसे ही तज राम रमैया, सीता रावण चाहेगी ॥४॥
हो हैरान दशानन पीछा देव-रमण मे आ मेली,-
मन मे छीजत-खीजत तो भी संधी नही मन की केली।
वीभीपण मंत्री-गण से मिल करी मत्रणा क्या करना,-
वात न माने स्याम हमारा निकट दीखता है मरना ॥५॥
जैसे मिथ्यात्त्व जिनवाणी कभी न सुनना च्हाता है,-
तेसे मेरी विनय भ्रात को मान्य नही दिखलाता है।

देखी भूजे लोग के मदर बजारो२,
ऊमर मे नहि देखो उसो नजारो ॥
पहुंचा सभा में ठेठ देख नरवर रे ॥यह०॥३॥

पड्यो चरण में आय, अरज करडारी२,
माफ करावो राज भूल भइ म्हारी ।
कहे लक्ष्मण झट बोल, तोल दिल माही२,
राच्यो सुख के माय, ध्यान है नाही ॥
प्रभू बाग के बीच चैन क्या उर रे ॥यह०॥४॥

फूटत गूंबड वैद्यराज को भूले२.
किया खेल यह तूही सुखो मे झूले ।
साहसगति सा देख देर ना लगसी२,
पिण पड़े हेत मे रेत बात वे-मग-सी ॥
तुम खास भौमिया इस धरणी ऊपर रे ॥यह०॥५॥

लियो भूप को अग्र लार लिछमन है२,
टोल्यो कैदी जेम देखे सब जन है ।
आ पड्यो पद्म-पद-पद्म विनति कर गहरी२,
मैं जाकर लासू खबर ड्यूटी यह मेरी ॥
देरी का क्या काम करूँ, सत्वर रे ॥यह०॥६॥

इसमे संशय तनिक राज मत मानो२,
मैं सूर राजा के पूत भक्त नहि छानो ।
कुण रोके महाराज सँभालू सारे२,
लंकेश्वर भी खास शंक मुज धारे ॥
वैठ चलायो यान उड्यो सरररर रे ॥यह०॥७॥

और सभी परिवार सेवा में आये२,
राम भक्ति वा देख शातता लाए ।
सब जोवे उसकी वाट आवेगे कबरे२,
मिलने से खबरो मालुम होसी सब रे ॥
केई ओर चढे तिणवेर सुभट सुखपर रे ॥यह०॥८॥

आये वन रन नगर डगर फिर भाई२,
पर ना लाये खबर, लजित सब थाई ।

यान को उडियो झनकार, निरखणे लागा सरदार,
खबर ले आये दरबार, गती या खुशी बिना नाही,-
इतेमे उतर्या है आई ।।राम०।।१४६।।

ढाल १८२ मी ।। तर्ज—ख्याल की० ।।

महाराज वधाई, खबरो ले आवो पुखता आप पै ।।टेर।।

ऊठ रामजी आया सामने, जल्दी मुझे सुनावो ।
रत्नजटी ने आगे करियो, इणने पूछ लिरावोजी ।।म०।।१।।
रत्नजटी कही मॉडने सरे, सीताजी री वात ।
गई रोवती एम वोलती, वचन करुण-रस साथ जी ।।म०।।२।।
कभी राम अरु कभी लखन हा!,हा! भामण्डल भाई ।
रोज सुणी मैं आडो फिरियो, विद्या सर्व हटाई जी ।।म०।।३।।
समाचार सीता का सुणतो, राम महा सुखपायो ।
रत्नजटी ने राग सूं सरे, अपने कण्ठ लगायो जी ।।म०।।४।।
जिम-जिम पूछै वातड़ी सरे तिम-तिम व्है सन्तोप ।
लंकापति के ऊपरे सरे, गाढो आण्यो रोप जी ।।म०।।५।।
राम लखण दोनो भाई का, आया हृदय ठिकाणे ।
अव लाने की करे योजना, विधी विचार वखाणे जी ।।म०।।६।।
भरी सभा में छायो सन्नाटो, सुण रावण को नाम ।
अव मुश्किल है पाछी लाणी, वडो कठिन है काम जी ।।म०।।७।।
राम रु लक्ष्मण कहे कपीश्वर !, लंका कितनी दूर ।
कायर को तो कोस किरोडो, सूरो रे है हजूर जी ।।म०।।८।।
लंका को क्यो पूछो स्वामिन्!, पूछो रावण जोर ।
आज लगे अधिको हे जग मे, सूरज के समतोल जी ।।म०।।९।।

—ढाल-पूर्व—

राम कहे सो तो हम जाने, रावण को श्वान तुल्य माने,
ले गयो सीता को छाने, मर्दवचा जो कहलाता,-
सामने ले के वो जाता ।।राम०।।१५०।।

दोहा

विनय-युक्त विद्याधर, अरज करे तिहिवेर ।
नाम न लेणो लंकनो, अति दुर्जय गिरि मेर ।।१।।

सारो हाल थोडा मे भाखूं, लका आप पाधरो ।
वीभीषण ने साथे लेकर, रावण ने उच्चारो ॥
वात जचादो, राड़ वढे ना, पावे सव आराम ॥५॥

ढाल १८७ मी ॥ तर्ज—वीरा लूँवा झूँवा होय आइजो० ॥

हनुमान कहे रवुवर जी!, है श्री चरणो मे अरजी जी ॥टेर॥
एक सहस्र कपी है राजा, मानो सुग्रीव महाराजा जी ॥ह०॥१॥
मख्या है म्हारी छेली, करूँ काम इता रँगरेली जी ॥ह०॥२॥
लका को सर्व उपाडी, मैं देवूँ समुद्र मे डारी जी ॥ह०॥३॥
रावण के भाई गोती, व्हा में करूँ वात अणहोती जी ॥ह०॥४॥
रावण को पकड़ी लाऊँ, चरणो मे उसे गिराऊँ जी ॥ह०॥५॥
सीता माता को खाँवे, ले आऊँ समुद्र को साँधे जी ॥ह०॥६॥
सुण वीर गिरा सुखकारी, यो वोले राम खरारी जी ॥ह०॥७॥
नही और कुछ करना, समाचार सिया का वरना जी ॥ह०॥८॥
जो देऊँ सो जा देना, वहाँ का सव वीत्तक कहना जी ॥ह०॥९॥
जो आज्ञा आपकी स्वामी, नही करूँ उसी मे खामी जी ॥ह०॥१०॥
वजरंगी लीला सारी, सव देखी ताम मुरारी जी ॥ह०॥११॥

—सवैया—

जिनको जव पौरुप जान लियो मन मोद वढ्यो रघुनाथ तणे ।
उनके शिर दीन दया करिके युग-हाथ धरे मुखसेति भणे ॥
विजयी वन आव सताव तुही भुज पै भुजवन्ध सजाय दिये ।
धन भाग अहो! वजरगिन को रवुनाथ इसीविध कोड किये ॥१॥

दोहा

राम हृदय पुनि कण्ठ मे, मुख में राम निवास ।
स्हायक जिसके राम है, रटे श्वास ही श्वास ॥१॥
राम-भक्त अजनि-तनय, करन लंक को गौन ।
त्यार भयो तद रामजी, समाचार सुख पौन ॥२॥

ढाल १८८ मी ॥ तर्ज म्हारा छैल-भँवर रो कांगसियो० ॥

म्हारा सीताजी ने संदेशो जाकर कहदीजे रे,-
पवनसुत ! जा कहदीजे रे ॥टेर०॥
याद घणेरा आवो मोने, दिलमू नही विसारू रे ।

छोडदिये बन्धन शिर न्हायो, मात दुख दीनो फल पायो,
नानो अरु मामा मनभायो, थारो जस काना सूं सुणता,-
आज म्हा देख्यो मन खिलता ॥राम०॥१५३॥

ढाल १८६ मी ॥ तर्ज—पपैया काय मचावत शोर० ॥

नानासा! रुकू नही इसवार, जानेकी मेरे है तकरार ॥टेर०॥

थोडा मे सब हाल सुनायो, जावूं लक की ओर।
सुण यो विस्मित हुयगे सारे, बोज लियो अणतोल ॥
रावण का काम वडा है कराल ॥ना०॥१॥

फिकर करो मत, फते करू गा, राम तणो शिर जोर।
आप पधारो प्रभु सेवा मे, अवसर सेवा वहोर ॥
पावोगे आदर आप अपार ॥ना०॥२॥

इतनी कहकर आगे वढियो, सूरो रा शिरमोर।
महेन्द्र दल-वल साथे लेकर, गयो किष्किन्धा दोर ॥
हाल सुन हर्पे सव सरदार ॥ना०॥३॥

वजरंगी वहतोडो लीला, करली किसी किशोर।
हनूमान दधिमुख टापू पै, उडतो देख झकोर ॥
दोय मुनो काऊसग पूरित, ऊभा ध्यान हिलोर ॥
पास मे त्रय कन्या सुखकार ॥ना०॥४॥

विद्या साधन करे दृढासन, मन वश कियो कठोर।
दावानल दहक्यो तस पासे, ज्वाला झाल सजोर ॥
कपी ने करुणा लही तिवार ॥ना०॥५॥

शर द्वारा सिन्धू जल खेची, दीनो अनल बुझाय।
साधू वन्दत ते तिहूँ वाला, नमन करी कहे वाय ॥
वलैया लेती वारम्वार ॥ना०॥६॥

आप पसाये विद्या-सिद्धी, होगइ है तत्काल।
विन मोसम म्हाके तरु फलियो, अतिशय को नहि पार ॥
किया है आप वडा उपकार ॥ना०॥७॥

नगर दधीमुख गधर्व राजा, कुसुममाला वर नार।
अमें छहूँ कन्या है म्हारी, रति रम्भा अनुहार ॥
खेचर नृप चहत केई दिलधार ॥ना०॥८॥

सूरवीरो रा काम है सरे, सूर दीपावे वंस।
सूरो री संसार मे सरे, 'मिश्री' हुवे प्रशंस जी ॥अ०॥८॥

दोहा

वज्रमुखा की वल्लही, सुता वेष नर धार।
पवन-पूत से युद्ध हित, तरुणी होगइ त्यार ॥१॥

ढाल १६१ मी ॥ तर्ज—पंछी बावरिया० ॥

क्यो करती है झोड, तेरी नही चलने की।
कल्पवृक्ष की जडे, नही है हिलने की ॥टेर॥
धनुष्य तोड की रूप भूलगे, लड्डू विखरे जैसे धूल के।
या उडता अकतूल ध्वजा के हिलने की ॥क्यो०॥१॥
हो लज्जित अरजी गुजराई, आप वैर लेने की चाही।
कर किरपा महाभाग प्रेम-रस झिलने की ॥क्यो०॥२॥
पाणिग्रहण कर रात रहा है, प्रात विभीषण गेह-गहा है।
मिला बहुत सन्मान, चाह थी मिलने की ॥क्यो०॥३॥
कहे पवनसुत बात बिगाडी, नहि सोची दिल बीच अगाडी।
बदलगये कइ भूप, तयारी आने की ॥क्यो०॥४॥
प्रथम आपके पास भेजा है, करके युद्ध तणा नेजा है।
करिये आप समजास वक्त है जाने की ॥क्यो०॥५॥
पाछौ सोपे काज सुधरसी, नही लंक-गढ यह तो धुडसी।
इसमें नही है फर्क, चले ना राने की ॥क्यो॥६॥
कहे विभीषण समजा चूका, विषयान्धी विषयारस भूखा।
नहि माने इकबात किसी भी स्याणे की ॥क्यो०॥७॥
फिर भी मैं कोशीस करूंगा, कडवे-मीठे वचन कहूँगा।
जो लेवेगा मान, मूंग घृत ढुलने की ॥क्यो०॥८॥
कहो सीताजी कहाँ विराजे, मुजे जाय मिलना है व्हांसे।
देवरमण उद्यान कपी मन भाने की ॥क्यो०॥९॥

—ढाल-पूर्व—

रजा ले पवनपुत्र चाले, सिया को नयनो नीहाले,
न्याय मे राम हृदय साले, वखाणे विश्व बीच जैसी,-
सत्यवन्ति देखी नहि ऐसी ॥राम०॥१५६॥

कहे हनु माता सुणो, मन्दोदरि आनन्त।
पीछे कहसूं वात मैं, जो भाखी भगवन्त ॥२॥

ढाल १९३ मी ॥ तर्ज—जो देवता बोले झूठ ए० ॥

मन्दोदर राणी आय ए, सीता से बोले वाय ए।
क्यो थे समजो नाय ए, थारे कांई गूडी मनमाय ए ॥१॥
त्रयखण्ड-धणी मिलियाय ए, फिर नही पूरो रलिवाय ए।
ओ कांई समज में फेर ए, थोडो लोनी हिया मे हेर ए ॥२॥
नग जडिया हेम शोभाय ए, ये जोडी आवे दाय ए।
मैं और राणियो खास ए, सब बणसी पगो की दास ए ॥३॥
जो लाया सो तो जाण ए, नही तजसी सत्य पिछाण ए।
अण इच्छंती नार ए, जिणरा त्याग लिया है धार ए ॥४॥
सीताजी भणे तत्काल ए, थारा पतिनो समजो काल ए।
आव ही राम दयाल ए, ईस मयाल दयाल ए ॥५॥
ननदोई मारनहार ए, वो ही थारो भरतार ए।
अब देरीनो नही काम ए, 'सब' होजासी काम तमाम ए ॥६॥
जा दुष्टण म्हासू दूर ए, थारा जीवन मे है धूर ए।
सुणतो ही मन्दोदर रूठ ए, सीता पै उपाडी मूठ ए ॥७॥
प्रकट भयो हनुमान ए, वा लाजी घणी दिलम्यान ए।
हनुमान कहे फटकार ए, मानो सासूजी जुहार ए ॥८॥
वाह-वा-ए कंइ सीख्या कामए, थारी अकल गई किण गाम ए।
दोनो ही एक समान ए, थारा फूट्या है आँखों कान ए ॥९॥

दोहा

बजरंगी के वेण सुण, मन्दोदरि दे ज्वाब।
ओगुण निजी छिपाववा, रखणो चहत रवाब ॥१॥

ढाल १९४ मी ॥ तर्ज—म्हांने मूँडो लागे जी० ॥

समजबाहिरा सुणो जमाई!, समुदो सेती तोडी।
नाटोरया सूं करी दोसती, अकल नही इक कोडी ॥१॥
म्हाने गूब लजाया जी, म्हाने खूब लजाया जी।
वनवासी भीलों का दूत बनकर के आया जी ॥टेर॥

सुग्रीव आदि प्रमुख जाणजो, वीर विराधज भक्त अनूप ॥इ०॥४॥
म्हारे जातो ही चढसी सूरमा, रुकनेवाला तो हरगिज नाय।
खून खलोला सब का खा रया, सब मे भरा है जोस सवाय ॥इ०॥५॥
मुद्रिका राखो प्रभु के हाथ की, देवो चूडामणि जासू लोट।
दीवी चूडामणि गाढी बांधली, सेठो कमियो है वो लंगोट ॥इ०॥६॥
भूख लगी है मोने जोर री, देवो आज्ञा तो लू फल खाय।
माता बोली रे भाया भय घणो, तू तो वेगासू वेगो जाय ॥इ०॥७॥
थे तो बीकण हो मोरा मातजी, मैं तो नही डरपू राम सहाय।
खांधे बैसाडी माता आपने, इच्छा होवे तो साथ ले जाय ॥इ०॥८॥
नमन करीने हनुमत चालियो, वाडी भांजी हे बल ने पूर।
कियो हजारो विक्रुव वानरा, उचक पडिया हे कीनी चूर ॥इ०॥९॥
आछो तरुवर तो एक न राखियो, राख्यो नही सुन्दर एक ही फूल।
सीता स्थल छोडी, बाकी बाग ने, सारो विध्वंस्यो बन प्रतिकूल ॥इ०॥१०॥
केई फेक्या है ऊँधा कर दिया देखण जोगो नहि राख्यो तार।
आया रखवाला वन्दर काढवा, घुर-घुर वन्दर नाख्या मार ॥इ०॥११॥
नाक कान तो खाया खांत सू, पोंच्या रोवतडा रावण पास।
वानर बलवन्तो खाया म्हा भणी देवरमणरो कीधो नास ॥इ०॥१२॥
रावण कोपी ने यक्षकुमार ने, भेज्यो पकडी ने लावो पूत।
आयो लडवाने कपी बकारियो, लात मारी ने मार्‌यो धूत ॥इ०॥१३॥
कुँवर मार्‌यो है सेना भागगी, काटक ने वन्दर पडिया लार।
खाया खाया रे हाको ऊठियो, गढ मे भागा है आसू डार ॥इ०॥१४॥

—कवित्त—

बात का सुनावे नाथ!, गात थर-थर धूजे
हाथ बाथ एकसाथ पूंछ फटकारते।
केई मारे, केई रोदे, केई चीर डारे जहां-
बाग को विनास देखी छूटे आसू धारते॥
रथ घोडे हाथियों को भाज चकचूर किये-
पौरुष हिलोरा लेत जाके विन पारते।
भ्रात मृत्यू सुनी कोप्यो, इन्द्रजीत चढी आयो-
हिलमिले चढी लंका, कैसी भट धारते ॥१॥

जामवान नल नील गवाक्षज, चन्द्ररश्मि की अधिकाई।
द्वीध गधमादन विराध अरु, महिंद्रादि गति पाई ॥हाँ०॥२॥
अवर घणेरा गढपति आया, न्याय पक्ष में हुलसाई।
सहस एक अक्षौहणी सारी, चमू चपल-गति पाई ॥हाँ०॥३॥
जोस होश संतोप कोप जो, भरियो है पूर्ण भाई।
श्रद्धा राम लखन पर सब की, लारे चढिया हुलसाई ॥हाँ०॥४॥
शुभ मुहूरत से होत रवाने, 'मुनि मिश्रीमल' दर्शाई।
सारा योग मिला है आच्छा, प्रवल जिणोरी पुन्याई ॥हाँ०॥५॥

—कवित्त—

कारे कारे पर्वत से मतवारे हाथी केते,-
मद झरनारे मानो घटा चढ आई है।
ताजे-ताजे बाजी जहाँ क्रोडो की संख्यामे मिले-
हीसा-रव होत जैसे छटा अनोखाई है॥
रथ रणकार वेसुमार झणकार उठै,-
कायरो के करेजे मे कमकमी छाई है।
पैदल प्रवल दल भूमि थररान हारे,-
ऐसी रघुनाथ-वारी फौज चढी भाई है ॥१॥
विविध नरेश वेप देश के दिखानवारे,-
शेप औ सुरेश से भी पीछे ना हटत है।
वाहन विविध नेजा फनन फर्राट करे,-
वोली भी विविध बाजा विविध बजत है॥
शस्त्र है विविध पुनि अस्त्र भी विविध जहाँ-
विविध अकलवान योजना घड़त है।
दल है विविध भाँति होल हरणाट ऊठ्यो,-
अपने पराये हू की जान ना पडत है ॥१॥

दोहा

सेनापति नल नील है, वीर दुहूं वड वीर।
ताको भुज मद धार है, धीर और गंभीर ॥१॥
कटक विकट चढियो गगन, श्रीगुरुदेव मनाय।
निकट लंक के मटक ही, पोचगये पलमांय ॥२॥

जामवान नल नील गवाक्षज, चन्द्ररश्मि की अधिकाई।
द्वीध गधमादन विराध अरु, महिद्रादि गति पाई ॥हाँ०॥२॥
अवर घणेरा गढपति आया, न्याय पक्ष मे हुलसाई।
सहस एक अक्षौहणी सारी, चमू चपल-गति पाई ॥हाँ०॥३॥
जोस होश संतोप कोप जो, भरियो है पूर्ण भाई।
श्रद्धा राम लखन पर सब की, लारे चढिया हुलसाई ॥हाँ०॥४॥
शुभ मुहूरत से होत रवाने, 'मुनि मिश्रीमल' दर्शाई।
सारा योग मिला है आच्छा, प्रबल जिणोरी पुन्याई ॥हाँ०॥५॥

— कवित्त —

कारे कारे पर्वत से मतवारे हाथी केते,-
मद झरनारे मानो घटा चढ आई है।
ताजे-ताजे बाजी जहाँ क्रोडो की संख्यामे मिले-
हीसा-रव होत जैसे छटा अनोखाई है॥
रथ रणकार वेसुमार झणकार उठै,-
कायरो के करेजे मे कमकमी छाई है।
पैदल प्रबल दल भूमि थरराने हारे,-
ऐसी रघुनाथ-वारी फौज चढी भाई है॥१॥

विविध नरेश वेप देश के दिखानवारे,-
शेप औ सुरेश से भी पीछे ना हटत है।
वाहन विविध नेजा फनन फर्राट करे,-
बोली भी विविध बाजा विविध वजत है॥
शस्त्र है विविध पुनि अस्त्र भी विविध जहाँ-
विविध अकलवान योजना घडत है।
दल है विविध भाँति होल हरणाट ऊठ्यो,-
अपने पराये हू की जान ना पडत है॥१॥

दोहा

सेनापति नल नील है, वीर दुहूं बड वीर।
ताकी भुज मव धार है, धीर और गंभीर॥१॥
कटक विकट चढियो गगन, श्रीगुरुदेव मनाय।
निकट लंक के मटक ही, पौचगये पलमाय॥२॥

लंकेश्वर रणतूर, ओडो ही सजिया परया।
बाजे धुन ज्यो सूर, तूर वर्पता वायरा ॥४॥

दोहा

विभिपण लखि ढग यह, अति आकुलता लाय।
लंकपति से विनययुत, सन्मुख अर्ज कराय ॥१॥

ढाल २०१ मी ॥ तर्ज—पाँच महोर रोकड़ लेलो० ॥

भाईसा! तजदो तकरार, ऊकलता ऊरो न अवार ॥टेर॥
विगर विचारा काम किया है, कियो कलंकित घर अनपार ॥भा०॥१॥
वा नहिं माने तू क्यो ताणे, जाणे हे सारा सरदार ॥भा०॥२॥
लाज न आवे चौडे जावे, जुद्ध करण फिर होग्यो त्यार ॥भा०॥३॥
इणमे नहि मोटापण थारो, थोडो तो निज हिये विचार ॥भा०॥४॥
नही व्है मोडो, पासी फोडो, घोडो विन घोडे असवार ॥भा०॥५॥
अपणी नारी लेवण आयो, सूधो हे ओ जग व्यवहार ॥भा०॥६॥
सौपो पाछी, वातो आछी, कर देसी सब नर अरु नार ॥भा०॥७॥
इतनो डिभ लेई ने आया, वे किम छोडेला निज नार ॥भा०॥८॥
लेसी मारी, स्यान विगारी, काणी कथा बनसी ससार ॥भा०॥९॥
इन्द्र-सरिस है थारी साहबी, मतहारे कहुँ बारम्बार ॥भा०॥१०॥
इन्द्रजीत कहे काका! डरपण!, थाँ ऊपर काँइ पडियो भार ॥भा०॥११॥
इन्दर भी तो जीत सकै ना, काँई भीलडा करणेहार ॥भा०॥१२॥
भलो लजायो वंस काकाजी!, दाग लगायो दूध मजार ॥भा०॥१३॥
झूठी वात कही थे पेला, नाख्या जनक दशरथ ने मार ॥भा०॥१४॥
रिश्वतखोरा घणा ठिगोरा, कपट करण मे हो हुँशियार ॥भा०॥१५॥
मारी डाढ मे आया ज्याँकी, रक्षा करन कीवी किलकार ॥भा०॥१६॥
जसो पाणी होय कूप मे, वैसो ही निकलेला व्हार ॥भा०॥१७॥

—चन्द्रायणा—

प्रत्युत्तर दे ताम विभीपण बोल के,
नही अरी सूं नेह कहो हिय तोल के।
पुत्र नही तूं शत्रु आज मै भालियो,
रे रे वेहदी बात केस मो व्हालियो ॥१॥

वो पिण परभव पोचगो, हाक मची अनपार, स० ॥
महोदर नृप आददे, चढिया नृप तिण व्हार स० ॥४॥
चालिस सहस गज सहित ये, घेरो डाल्यो घोर, स० ॥
बिच में हनुमत ने लियो, माच्यो जंग सजोर, स० ॥५॥
केई भुज केइ काख मे, केई कर केइ पैर, स० ॥
केई गदा प्रहार सूँ, कर रह्यो ढेरमढेर, स० ॥६॥
गदा चले हनुमन्त री, कुलटा नयन जिसान, स० ॥
जल-मच्छी मननी-गती[1], ता सम गदा संधान, स० ॥७॥
वडवानल दधि सोहतो, राक्षस बिच में वीर, स० ॥
सूर्य नसावत ऊगतो, जैसे प्रचुर तिमीर, स० ॥८॥
राक्षस भागे दह-दिसी, ठहर सके ना पाय, स० ॥
गज-सेना सह राजवी, हनुमत रीता थाय, स० ॥९॥
रथ घेर्‌यो संध्या समे, पूर्‌यो शंख सुचंग, स० ॥
सारा बोल उठ्या जिसे, रंग, रंग है रंग, स० ॥१०॥
राम सेना मे रंग है, राक्षस आणे सोच, स० ॥
किसाक निपज्या वानरा, याने सको न पोच, स० स० ॥११॥
वीर चढो कोइ मोटको, उण विन सर ना होय, स० ॥
कर मिटिंग तै करलिवी, प्राते लीजो जोय, स० ॥१२॥

दोहा

प्रात होत ले प्रबल-दल, राक्षस-देण दिलास ।
कुम्भकर्ण खुद ही चढ्यो, मनहु कुपित यम खास ॥१॥

—छन्द-पद्धरी—

कुम्भेश कटक-युत कियो गौन, मानहु ज्यूं अन्धड प्रबल पौन ।
पाहन सम गिरे गजराज दूर, उमड्यो है बल जिमि नदी पूर ॥१॥
मारे है मुदगर-झाट देय, पद काख हाथ चापै घनेय ।
दी पार-विना सब सैन्य मत्थ, को सूर भिरन उनसे समत्थ ॥२॥
घनघोर मचावहि शस्त्र झोक, बिन शक्ति ले कुण तास रोक ।
कपिनाथ प्रभू-शालक प्रसिद्ध, दधिमुख महेन्द्र अगद कुमुद्द ॥३॥

---

१ जल में मछली की तरह तथा मन की गति की तरह चचल ।

ढाल २०८ मी ॥ तर्ज—राधेश्याम० ॥

आजावो सारे लडने को अब देरी का काम नही।
मेरे वाण की नोक अगाडी है वचने का धाम नही॥
त्रसित भये वानर गण सारे आज भयकर काम वना।
इत उत भागे टिके एक ना उनमे ऐसे वाक्य भना॥१॥
शस्त्र डाल दो जावो डेरे विना लडे नहि मारुँगा।
अपनी नीद जायकर सोवो नहि उसको संहारुँगा॥
आन अड़ा सुग्रीव सामने क्यो बक-झक करता पागल।
दिखा शूरता विद्याएँ सब देख खड़ा तेरे आगल॥२॥
घनवाहन के सन्मुख आया भामण्डल भट जो ताजा।
वजने लगे जोर से वाजे, चारो ही जोधा जाजा॥
चारो दिसि दिगपाल सरीखे चारो भिडगये उणविरिया।
वर्षालू वद्दल के जैसे शस्त्रो की लगी झडियाँ॥३॥
गर्जे तर्जे सिह समाना स्व-पर का कुछ ख्याल नही।
तमुल वहाँ मचगये जंग, जो निरखत नयन लखात नही॥
करे चोट ना ओट गिने वो त्राही-त्राही मचादई।
भागतडा नहि जगे मिले है पर्वत रुपगये आन वही॥४॥
वावन वीर रु चोसठ योगिनी खप्पर भर-भर नाच रही।
वाह-वा वीरो धन्य जन्म ले जननी-पय दीपात सही॥
रत्थ चले घरणाट वाणो का वरणाटा सरणाट सिरे।
मरे, पडे. अरडाट करत है इसकी होड कहो कोन करे॥५॥
भलभलाट भालो की अणिये, तोमर और त्रिशूल चले।
कोइ आसना आ नहि सकता शेष-नाग भी हिले-डुले॥
कपीनाथ भामण्डल ऐसे काटक फाटक फाटकते।
दोनो को घायल करडारे विद्यायो के साटकते॥६॥
रावण आदी कहने लागे यह वाली का भाई है।
प्रवल शक्ति कैसी है इसकी वो तो आज दिखाई है॥
भामण्डल को इसा न जाना युद्ध कमाल कराया है।
शक मानली रावण-लाले मिले जो काकी-जाया है॥७॥
क्या जानी, क्या होय रही है, क्या हम कहकर आये है।
यह वश का नहि रोग रहा, वस काल रूप दिखलाये है॥

कुम्भकर्ण देखी ने लहु को, रथ ने पाछो घेरे।
इन्द्रजीत घनवाहन दोनो, लिया बीच मे हेरे ॥ज०॥५॥
पिता तुल्य काकासा कहिये, अनुचित लडवो याসূ।
पाछो जाणो शास्त्र पुकारे, होत अन्याय न म्हासू ॥ज०॥६॥
काको भूल करी है करती, लेन दिया नहिं दोई।
जीत हार मे परिणित होगी, जीती बाजी खोई ॥ज०॥७॥
नागपास मे ए बँधिया है, सहजे भूख से मरसी।
परवश जोर चले ना कोई, कारज अपणो सरसी ॥ज०॥८॥
मुँहटाली ने डेरे पहुँच्या, राम लखन दिल माही।
चिन्ता आणे केम छोडावो, दोनो नृप के ताई ॥ज०॥९॥
चिन्तवतो झट यादज आयो, सुरनो ए वरदानो।
महालोचन सुर चिन्तित सन्मुख, भयो उपस्थित आनो ॥ज०॥१०॥
सिंह-निनाद विद्या-रथ-मूसल, हल दे रामनी सेवा।
गदा कौमदी, गारुडी स्यन्दन, लक्ष्मण चरणो मे मेवा ॥ज०॥११॥
वारुणाग्नेय आदि अस्त्रज, आर विद्याएँ केई।
देकर के पद शीस नमायो, देखरया जन तेई ॥ज०॥१२॥

—ढाल-पूर्व—

सत्य हूँ सेवक प्रभु थारो, वचन यह सुनलीजो म्हारो,
आऊँगा याद करतवारो, अमोलख चीजो दे डारी,-
रजा ले चाल्यो आगारी ॥राम०॥१७१॥

लक्ष्मण गरुडध्वज रथ पर, बैठ कर आयो है सत्वर,
दोनो पै पडते ही दृग-शर, तडातड बंध टूट भागा,-
हुवो जयकार तिही जागा ॥राम०॥१७२॥

—सोरठा—

मिलिया आय महीप, चरणो पडिया चूपसूं।
देखे लहू समीप, करामात लक्ष्मण तणी ॥१॥

ढाल २१० मी ॥तर्ज—माड०॥

खबर लगी रावण के केम्प मे, छूटे दोनो धीग।
रीस करी रावण कहे रे, भारी गमाई श्रीग हो ॥१॥

थरग हियो थरराय कायर केई धर पडसी।
आडो न आगी एक बोल नर नाहक मरसी॥
है इसो जोग लछमन तणो भाईसा! मच मानलो।
इसलिये करुँ मैं अरज वह अपने हिय मे ठान लो॥१॥
दाँत पीस ला रीस ईस लंका को बोले।
तू धोयो लंक ने मुख रूठा उणरी टंटोले॥
पिण देख जमी के छेह काढ देसूं सारा ने।
वनवासी ने मार सदा मेवूं सीता ने॥
हा! अजहू थारो नीचपन, गयो कुपातर! नाथ रे।
तूं एकहि सीख्यो वात आ, अवर न आवे दाय रे॥२॥

ढाल २१३ मी॥ तर्ज—मान न कीजे रे मानवी०॥

थने बुलायो इण मुदे, रखै भाई मर जाय।
पिण रे अनानी तो अवै, मार्‌या विना न रहाय॥१॥
मानी नही माने वातडी, मानी ताणे हठ जोर।
मानी गमावे प्राण ने, मानी समजो निठोर॥टेर॥
रावण धनुप चढावियो, लहु गयो रीसाय।
वाप थानक तुजने गिण्यो, लाज न लायो मन-माय॥मा०॥२॥
कीनी मीठी अरदास तो, लागी कडवी आक।
यम-थानक पहुँचाड दूँ, निकले सगली ही वॉक॥मा०॥३॥
भाई दोनो रो युद्ध तो, मंड्यो मोटे मंडाण।
टले नही एको एक थी, देखे सारा महिराण॥मा०॥४॥
सारा राक्षस धाइया, धाया वानर-राय।
सरखा सूं सरखा भिड गया, लारे रहिया है नाय॥मा०॥५॥
कुम्भकर्ण अरु रामजी, लक्ष्मण साथे हरि-जीत।
एह वडो संगाम है, मंडियो क्षत्रिय कुल रीत॥मा०॥६॥
नाम वखाणू जूजुवा, गन्थ वढे अणमाप।
केम्प रुखाला छोडने, लारे रह्यो नही साफ॥मा०॥७॥
कुम्भकर्ण रघुनाथ पै, हरिजित लक्ष्मण रे साथ।
वाण मारे है आकरा, चाले विजली-सा हाथ॥मा०॥८॥
तामस वाण हरी ऊपर, व्हायो हरिजित ठाम।
लक्ष्मण लीनाएँ छेदियो, राख्यो नही उणरो नाम॥मा०॥९॥

होय सज-धज बैठ रथ मे, चालियो बड-वीर ।
विभीषण को राल पूठै, अग्र आयो धीर ॥रा०॥५॥
कहे रावण दूर हटजा, क्यो मरे पर आय ।
नहि बचेगा सत्य कहता, शक्ति लागत प्राय ॥रा०॥६॥
रघुवंशी मान मेरी, फिर लडेगे दोय ।
मरणदे इस नीच को तूं, मेरी मनसा सोय ॥रा०॥७॥
सौमित्री कहे सुणो रावण!, मार सकता कौन ।
विभीषण है कालजे मे, वारी श्रीफल[1] जौन ॥रा०॥८॥
दांय आई मृत्यु गर्वे, मेरा नही इनकार ।
भ्रमावी अत ही भ्रमावी, फेकदी ततकार ॥रा०॥९॥
चढी जा आकास अगनी, बनी अति विकराल ।
कोस अडतालीस माही, फैली ज्वालो ज्वाल ॥रा०॥१०॥
सा आवती देख सुग्रीव, भामण्डलादी राय ।
नील नल अरु विराधज, हनुमान तडाय ॥रा०॥११॥
अस्त्र शस्त्रो सेती ताडे, पाडे पर्वत शिल्ल ।
बिना अंकुश हाथिया ज्यो, सा रुके ना पल्ल ॥रा०॥१२॥
गरुडध्वज[2] जो लडत उपर, पडी उरस्थल आय ।
टूक पर्वत जेम गुडियो, हाहाकार कराय ॥रा०॥१३॥
राम कोप्यो दशानन पै, अडियो सन्मुख जाय ।
रथ तोड्यो रोप अधिको, बीजो तीजो ताय ॥रा०॥१४॥
दसानन के रत्थ पाचो, किया है चकचूर ।
भय पाई भाग छूटो, भ्रात दुख भरपूर ॥रा०॥१५॥
अंधवणियो राह अधिको, दूर टलवो योग ।
लंक माहे जाय धमियो, अस्त सूरज होग ॥रा०॥१६॥
गयो भागी जाण पाछा, राम आया ठाम ।
व्यथित देखी भाइडा ने, भये मूर्च्छित स्याम ॥रा०॥१७॥
करी शीतलता उठाया, बोले बन्धव साथ ।
वीर ! क्यो थे पोढिया छो, प्रकाशो दुख बात ॥रा०॥१८॥
शक्ति नही हो बोलने की, करो आखो सयन ।
बोलिया विन अरे भाई!, मुझे नही हो चयन ॥रा०॥१९॥

---

१ जैसे नारियल मे पानी रहता है । २ लक्ष्मण ।

दोहा

वीभीषण को राज दे, जरसू लक्ष्मण संग।
सीता से नहि काम हे, बोले राम अभग ॥१॥

ढाल २१५ मी ॥ तर्ज—सतिय शिरोमणी अंजना० ॥

भाखे विभीषण स्वामी जी, धैर्य तो धार के करो उपचार के।
कायरता झट परहरो, उद्यम के विना नही है सुधार के॥
तन्त्र मन्त्रज जडी औषधी, देव दानव थवा और भी होय तो।
रात्री में ही कर लीजिए, और भी रक्षा हित पूर्ण जोय तो ॥१॥
सुणजो श्री राम-यश रग सूँ ॥टेर॥

कोट तो सातज कर दिया, चार दरवज्जो ही रक्षक भूप के।
चारो दिशि मे चौकसी होय हुंशियार के सवे सरदार के।
वीच में राम लक्ष्मण कने, फिरै सुग्रीवजी नजर पसार के ॥सु०॥२॥

सीताजी एह सुण वारता, अति दुख आणियो हृदय के माय के।
हा ! वच्छ ! देवर कहाँ गयो, अपने वड वान्धव छोर सन्ताप के।
धिक-धिक हुं रे अभागिणी, मोर हिन पाइया दुख असराल के ॥सु०॥३॥

देवे सन्तोष सव औरतो, प्रात हो जावसी क्रोड कल्याण के।
उद्यम रामजी कर रहे, इते उत आवियो खगचर एक के॥
कहे रे उपचार वताय दूं, सत्य होयगा तास आराम के।
हाथ ग्रही लाया सामने, ते कहे साभलो म्हायरी वात के ॥सु०॥४॥

जावतो नार ले साथ में, मिलगयो वीच मे एक कुपात के।
शक्ति ये मार स्त्री ले गयो, जायकर हूँ पड्यो अवधपुरी वाग के॥
भरत जी छाट जन ऊपरे, स्वस्थ वनावियो करी उपकार के।
घाव साजो भयो तुरत ही, पूछियो जल तणो भेद के ॥सु०॥५॥

सार्थवाह इक आवियो, नगर अयोध्या ने वाहर विश्राम के।
तूटगो वृषभ उन एक ही, तास उपचार हित नाणो दिरवाय के॥
तिन्नू वे नर खायगा, वेल तो दुख पायो प्रत्यक्ष के।
तूंटा रे ऊपरे नर चले, इमा अधम तो पाव ही दुक्ख के ॥सु०॥६॥

कौतुक मंगलपुर मे पोंची, सोती जगाई बाल देरी०।
द्रोणमेघ नृप मेती जाची, सोभागी सुखमाल देरी० ॥१०॥
कन्या सहस्र तणे परिवारे, सघली लीवी लार, देरी०।
सवने एक प्रतिज्ञा लीधी, पूरण निश्चय धार देरी० ॥११॥
भरत भूपने मेल्यो अयोध्या, साथे लीधो नाथ,वर्ज्यो है प्रभुजी।
झननन यान चलावियो, रुकिया हे कित नाथ देरी० ॥१२॥
जलद्वीपे उजवालो देखी,फिकरकियो मनमाय,राघव अतिभारी।
अति दौडायो यान ने, वात करंता आय, देरी० ॥१३॥
वाट जोवे, देखे नभ साम्हे, इतने में उतरन्त, पूछे जल लाया ?
जलरीधणियाणीने लाया, सारा सुण हर्पन्त,हुयगा मनच्छाया ॥१४॥
मुदित हृदय वीसल्या विकशित, स्पर्शे प्रभुनो तत्र देरी०।
तिम-तिम शाता वर्तन लागी, सब निरखे इकमन्न देरी० ॥१५॥
शक्ति सहू देखंता नाठी, नागण लाठी खाय, देरी०।
भागन्ता हनुमान पकड के, मारी करडी ताय देरी० ॥१६॥
घणाँ जनोरा प्राण लूंटिया, दया-हीन पापीष्ट देरी०।
कौन वता, कहाँ से आई, कौन तुम्हारा ईष्ट देरी० ॥१७॥
जिणकेडे पडियो थी पाछे, राखू नही तस नाम, देरी०।
श्री धरणेन्द्र रावण ने दीधी, उणदिन सूं निज ठाम, देरी ॥१८॥
काम सर्यो रावणरो, पूरो, पिण लक्ष्मण भाग्य सवाय देरी०।
पूरव-भवना तप प्रभावे, वीसल्या इत आय, देरी० ॥१९॥
अब तो छोडो निज घर जावू, न्हावूं पाछी भूल देरी०।
छानी मानी रहसू में तो, पडी मुखडा मे धूल ॥२०॥
छोडी मुख मे देकर जूती, भूती अदृश्य थाय देरी०।
मंगल बाजा वजणे लागा, वन्दर हर्ष मनाय, देरी० ॥२१॥

ढाल २१७ मी ॥ तर्ज—चालो जल्दी वहजो० ॥

आवो सहियो आवो, मिलजुल के मगल गावो।
मोरी वहिनो ! बधावो गावो रंग सूं ॥टेर॥
मलया चन्दन लेप करायो, व्रण रुज गयो है सारो।
आनन्द मोटो ऊठ्यो लक्ष्मण, शाता सर्व प्रकारो ॥मो०॥१॥

रे रंगड जुगती जंग विचारे२, शिक्षा औरो री नही धारे ॥टेर॥

दशकन्धर सोचे दिल अन्दर, सोचूं कौन उपाय।
राम लखण ने किणविध जीतूं. आरत वढती जाय रे ॥रे०॥२॥

परवश पडिया भाई वेटा, केरो मुक्त कराऊँ।
अमोघ विजयशक्ति गई निष्फल, दुखडो किमे सुनाऊँ रे ॥रे०॥३॥

अस्त्र शस्त्र तन-वल थी मैं तो, जीत सकूंगो नाय।
कोइ उपाय करी वश आणूं, कोई काम वनाय रे ॥रे०॥४॥

विद्या सहस्र साधी जो सागे, ते पिण भई अलोप।
अव कैसे मुज सिद्धी होवे, साज वण्यो सव पोप रे ॥रे०॥५॥

विद्या तो वहुरूपिणी साधू, थई उद्यमी ईश।
कारज सरसे अमृत वरसे, पूरे मन्न जगीस रे ॥रे०॥६॥

एम विमासी पौपधशाला, अविचल ध्यान रमायो।
मणीपीठिका ऊपर वैसी, तन मन एक करायो रे ॥रे०॥७॥

त्रयी योग ने स्थिर वह करके, पद्मासन पूरायो।
जप माला लेकर के सेठा, मौनी पण मन भायो रे ॥रे०॥८॥

मन्दोदरि सारा पुर माही, धर्म-ध्यान उद्योत।
आठ दिवस तक करो अखण्डित, अधिकी जिगमिग ज्योति रे ॥रे०॥९॥

शुद्ध भाव सूं दान दिरावो, पालो-शील-तप-भाव।
अमर-पडह वजवायो राणी, धर मन मे उच्छाव रे ॥रे०॥१०॥

कोटवाल यम-दण्ड काम हो, लीनो अपणे हाथ।
नही करेगे मृत्यु-दण्ड तस चौडे सुणलो भ्रात रे ॥रे०॥११॥

युद्ध वन्द है आठ दिवसलो, रावण विद्या साधे।
सुग्रीव आदी अरज राम से. कीधी तज परमादे रे ॥रे०॥१२॥

आगे ही झेल्यो नही जावे, फिर वहुरूप करासी।
सिह पाखरियो किणविधि झेले, आई वडी उदासी रे ॥रे०॥१३॥

राम पयंपे साधनदो तस, नहिं कछु विघ्न कराना।
सत्य न्याय मे जीत होयगी, किंचित नहिं घवराना रे ॥रे०॥१४॥

अन्तराय करणी नही किसको, उत्तमनो आचारो।
'मिश्री मुनि' कहे महापुरुषो रो, यो ही खास विचारो रे ॥रे०॥१५॥

रावण तब शंक्यो है मन मे, होसी यह हत्यारी ।
नाहक स्त्री-हत्या लग जासी, थासी अपजस भारी,-
भवोभव होय खुवारी ॥क०॥५॥

कैसा दुष्कृत मैंने कीना, सुणी न केण किणारी ।
भाइ विभीषण की ना मानी, हाथो बात बिगारी,-
बाजगो अत्याचारी ॥क०॥६॥

जाय सौंपदूं रामचन्द्र ने, चल सीता इणवारी ।
बिठा विमान चला जब रावण, नीती भई सु-थारी,-
वीच मे शैल-गुफा री ॥क०॥७॥

शूर्पनखा बालक को रूपधर, रोवत है अनपारी ।
रावण उमे पूछवा लागो, कौन लगा दुख भारी,-
बाल यो वदे गिरा री ॥क०॥८॥

—कुण्डलिया-छन्द—

बाल वदै मैं मान हूँ, मरगे मात रु तात ।
कोउन स्हायक मुज मिला, झेला लंकानाथ ॥
झेला लंकानाथ मुझे पाला अरु पोषा ।
रक्खा सुखके माय नही जो किसने खोसा ॥
छोड मुझे असहाय वो, सीता देन अकाल ।
जरा नही लाया अनस, याते रोवत 'बाल' ॥१॥

दोहा

फिरी मनोरी भूप की, होगा जो भवितव्य ।
पै न तजूंगो मान तुझ, रहो सुखे अब गव्य ॥१॥

ढाल २२४ मी ॥ तर्ज—खडका री० ॥

मेल सीता हो अभीता पलीता ज्यो क्रोध ।
ज्ञान गीता नही चीता मान तीता जोध ॥१॥
रावण मन जोस झाल्यो जोर ॥टेर॥
विकट दल-बल सटक साज्यो कटक को नही पार ।
गटक बिन वो झटक रटक्यो, अटक आन दुधार ॥रा०॥२॥
पहन बख्तर टोप मागे, मुकट शिर पर सोह ।
उधर सेना भई तत्पर, कौन जीते जोह ॥रा०॥३॥

—ढाल-पूर्व—

दशानन शंक्यो मन माही, विद्या बहुरूपिणी ताई,
याद करतो ही झट आई, बोलो नृप ! हुकम काइ थारो,-
काम में करदूं परवारो ॥राम०॥१८०॥

भाल दश रूप हि विस्तारे, धरणि अरु गगन बीच सारे,
चारो दिशि रौद्र हि आकारे, रावण ही रावण दिखलाया,-
मानो ज्यो टीडीदल छाया ॥राम०॥१८१॥

कपीपति आदी घबराया, अबे क्या होसी रघुराया,
राम कहे सोच तजो भाया, लखण की जाणो नहि माया,-
असल वो सौमित्रा-जाया ॥राम०॥१८२॥

ढाल २२५ मी ॥ तर्ज—ख्याल की० ॥

'अरे' लक्ष्मण बलधारी, विद्या विस्तारी बल रो पौरषो ॥टेर॥

धनुष अर्णवावर्त उठायो, अग्नीमुख ते बाण।
नटवा ज्यो वो नृत्य करत हे, करे घणो घमसाण जी ॥ल०॥१॥
जहाँ देखे वहाँ पर भी मारे, छोडण री तल्लाक।
आप रूप होगयो वेधालो, धूम जमाई धाक जी ॥ल०॥२॥
तूर्ण मायसूं एक नीकले, साँधत मो व्है जाय।
मार्ग सहस्र, पोचत लक्षज, वीधत क्रोड कहाय जी ॥ल०॥३॥
अडव खडव को पत्तो नही है फोडे फडाफड शीस।
दोनो दल रा देखे दूर सूं जबर इणोरी रीस जी ॥ल०॥४॥
आकर्णान्ते[1] धनुष खेंचियो, वणग्यो कुण्डल जेम।
खननन नदियो खूनरी सरे, अपट चली है तेम जी ॥ल०॥५॥
हाथी घोडा रथ मानव की, ल्हासो तिरे अछेक।
इसो युद्ध निरख्यो नहि पहले, बोले भूप अनेक जी ॥ल०॥६॥
बना बना के रूप निर्जरी[2], हो गई है हैरान।
ओ किसडी माता रो जायो, किसा दुग्धरो पान जी ॥ल०॥७॥
बहुरूपणी नाम हमारो सुर का छका छुडाया।
इण आगे नहि चलती म्हारी, यह कैसा अजमा खायाजी ॥ल०॥८॥

---

१ कान की कोर तक ऊँचा। २ बहुरूपिणी विद्यादेवी।

आत तपे मन कम-कमे, नेणो जल ढलके हो ।
अब मिलनो छै दोहिलो, नही मानो अबके हो ॥वं०॥२॥
शक्ति गई विद्या गई, परिवार वधायो हो ।
जीतण की आसा गइ, दिन खोटो आयो हो ॥व०॥३॥
राज्यधानी सब हारगी, नही मानी किणकी हो ।
चक्र गयो अरि हाथ मे, आशा मोटी जिणकी हो ॥वं०॥४॥
बार-बार विनती करूँ, है चीज दूजो री हो ।
सीता दे दो भाई जी, हठ अपणो छोरी हो ॥वं०॥५॥
हूँ चाकर छूं रावरो, तुम ठाकुर म्हारा हो ।
रघुवर कहनो ते कहे, है भला तास विचारा हो ॥व०॥६॥
गुन्हो माफ सब होवसी, अवसर मत चूको हो ।
'मिश्री मुनि' कहे वन्धवा, सद्मारग ढूको हो ॥वं०॥७॥

—ढाल-पूर्व—

रावण सुण बोल्यो झुंझलाई, भाई नहि तूं दुश्मन ताई,
सुनाये अरि शोभा आई, चक्र अरु दुश्मन पै रुठ,-
मारूँगो मार एक मूठ ॥राम०॥१८३॥

पधार्‍या रामचन्द्र व्हाही, विभीषण आयी सुनवाई,
सौपदे सीता को लाई, लंका को राज करो सुख से,-
लोटमूँ फरमायो मुख से ॥राम०॥१८४॥

ढाल २२७ मी ॥ तर्ज—कव्वाली० ॥

मानजा लंकपति म्हारी, हृदय मेरा जु च्हाता है ।
करे वदफैल की बाते, वृथा क्यो जी गमाता है ॥१॥
नही होने का धरणी पर, तेरे-सा और कोइ राजा ।
इसलिये मैं चेताता हूँ, धाक झूठी जमाता है ॥मा०॥२॥
दशानन राम से बोला, छोडदो और सब बाते ।
राज्य कोई भी यह करलो, मुझे ना दुक्ख आता है ॥मा०॥३॥
काम जो चार करने की, तमन्ना मेरे है मन मे ।
करूंगा, रह गया जिन्दा, अन्यथा तोरे हाथा है ॥मा०॥४॥
धरणि का भार स्थंभे पर[1], लगाकर शेष हटवाना ।
मारना काल को दूजा[2], जोकि सब को सताता है ॥मा०॥५॥

दोहा

ज्येष्ठ कृष्ण एकादशी, पहर चतुर्थं जाण।
तीनलोक कण्टक महिप, रावणको अवसान ॥१॥
कुसुम वृष्टि सुरवर करी, देव देत आसीस।
जय-जय-जय सुर नर भणे, जीवो कोड वरीस ॥२॥
वासुदेव अष्टम अहो!, अष्टम ही बलदेव।
त्रयखण्डाधिप प्रकट भे, राम-लखन की सेव ॥३॥
नरक चतुर्थे ऊपनो, रावण जीव उदार।
भवभवान्त जिन-पद लही, वह होसी भवपार ॥४॥

ढाल २२८ मी ॥ तर्ज—जो आंनद मंगल-चहावो रे० ॥

जय पद्म नारायण देवा रे, काई जय-जय-जय रघुवंश ॥टेर॥
राक्षस भय पाइ कस में, वो भाग रहे दस दिस मे रे।
कहे रामचन्द्र तब रसमेरे, काइ जय-जय-जय रघुवंस ॥१॥
विभीषण दीलासा, द्यो सब को जाई खासा रे।
हो अपनापन विसवासा रे ॥काइ०॥२॥
विभीसण जावत रोका, नही भागण का मोका।
दयालू मालिक अनोखा रे ॥काइ०॥३॥
प्रभु को शिर न्हावे, प्रभु सान्त्वना फरमावे।
तुम जरा फिकर नहि लावे रे ॥काइ०॥४॥
विभीषण रावण पेखी, हो मूर्च्छित पडियो देखी।
ना सुध्धी रही विशेषी रे ॥काइ०॥५॥
मन्दोदरि आदी राणी, विलपती अति कुरलाणी।
हे नाथ! पहले ही जाणी रे, ॥काइ०॥६॥
कुम्भकर्णजी आदे, सब छोड्या धर अहलादे।
वे रोवत है विषवादे रे ॥काइ०॥७॥
विभीषण खात कटारी, श्री राम स्वयं उठ झाली।
क्या करते बातें काली जी ॥काइ०॥८॥
सरदार सुणो सब राणी, थो वीर बडो सुलतानी।
वो कायरता नहि आनो रे ॥काइ०॥९॥
रणभूमी झूंजी मरिया, मत शोक करो इण विरिया।
यह घाटा मोरे पडिया रे ॥काइ०॥१०॥

चौसठ मणरो एक विराजे बीच में जी।
जैसे सर्वार्थसिद्ध-सुरो पुन्य सीच में जी।
देता दान सन्मान के मुजरा झेलता जी।
आया मध्य बजार देखन दृग मेलता जी ॥६॥
सहस्र-स्थंभ प्रासाद रावण रो जाणिये जी।
राम विराज्या तत्र के मोजो माणिये जी॥
विभीषण निज महल पधारण वीनती जी।
कीधी है कर-जोड, सुणी त्रिखण्डपती जी ॥७॥
भोजन भक्ती खूब विभीषण जी करीजी।
शोभा ली सश्रीक सभी जन ऊचरी जी॥
राम मुदित मन देख अरज लहु यो भणी जी।
करिये राज्य अभिषेक प्रभू अब सुखमणी जी ॥८॥
राम कहे हम कवल कभी ना वीसरे जी।
लंक विभीषण दीध तिलक करसूं करे जी॥
पायो विभीषण चैन सेवा वे कररया जी।
दोउ बंधव सुखमाल त्रठे वे झिलरया जी ॥९॥
तीन खण्ड रा भूप कन्याये आपणी जी।
ला परणावे सामी करी निज थापणी जी॥
वर्ष गया षट बीत सुखो मे संचरी जी।
इसडा सुखरे माय खबर कुछ ना पडी जी ॥१०॥

दोहा

हरिजित अरु घनवाहनू, मरुस्थले शिव पाय।
तीर्थ मेघरथ वाजियो, कुम्भ नर्मदा प्राय ॥१॥
अवधपुरी अपराजिता, और सुमित्रा मात।
लक्ष्मण हित चिन्ता करे, खबर मिली ना आय ॥२॥

ढाल २३१ मी ॥ तर्ज—हो शिवपुर नगर सुहामणो० ॥

हांरे लाला, इक दिन धातकीखण्ड से, नारदऋषि आवन्तरे लाला।
पय-लागन्ता पूछियो, क्यो हो आरतवन्त रे लाला ॥१॥
ममता माता मे घणी ॥टेर॥
हांरे लाल, आंसूं न्हाखी मातजी, उत्तर आपे तेह रे लाल।
तात आज्ञाये वन गया, सीता राम स-सनेह रे लाला ॥म०॥२॥

राज्य करो यह सुख से हो तुम आज्ञाकारी मायरा।
काई ज्ञाता प्राणा समान॥
ज्यूं पहले आज्ञा मानी हो तिम मानो अब ही भाइडा।
काई मतना ज्यादा ताण॥सु०॥१२॥
भरत नमी ने चाल्यो हो काउ आल्यो लक्ष्मण दौडने।
काई बैसाड्यो प्रभु पास॥
सीता विसल्या आदीहो, काई भोजाया मिल सॉवठी।
काई कहे 'मिश्रि' हुल्लास॥सु०॥१३॥

ढाल २३६ मी॥ तर्ज—पल-पल बीते उमरिया०॥

इम किम जाओ देवरिया, दादा भाई को तज के।
पालो-पालो-पालो, थोडोसो प्रेम निभालो॥टेर॥
राज-पाट का ठाट अनोखा, देखण जैसा है।
दिवराणी का हैज हिया मे कैसा है, कैसा है॥
आ काई धूंधी आई रे, सजम लेवाने चाल्या॥पालो-पालो०॥१॥
चवदे वर्ष से आये वातो दुख-सुखरी नहीबूजी है बूजीहै।
या मनडा मे गुण्डी कोई दूजी है दूजी है॥
साची कहदो जी मालुम म्हाने हो जावे॥पालो-पालो०॥२॥
यह गोरामा वदन तुम्हारा, देखण लायक है लायक है।
वडे बहादुर भाई-भाई स्हायक है स्हायक है॥
जोडी जग में शोभे चारो री नामी॥पालो-पालो०॥३॥
संयम का मारग है टेढा, मुश्किल पलता जी पलता जी।
पैनी खड्ग धारा पै कोई विरला चलता जी चलताजी॥
सुख का नही है खेरा पाछे पछतासो॥पालो-पालो०॥४॥
घणा वर्षों सू राम रु सीता, आया हे आया है।
आते ही भत भरत भूप को वार कढाया है कढाया है॥
जनता यो कैसी रे, मतवा मेणी दिखावो॥पालो-पालो०॥५॥
मोटा भाई वाप ठिकाणे, केणो मानो हो मानो हो।
समजदार होवर के नाहक, ताणो हो ताणो हो॥
हंसी करासो रे, मानो लाडकरा देवर॥पालो-पालो०॥६॥

हाँरेक ललना गज निर्मद किम हो गयो ?
भरत तणे वश किम भयो ॥४॥
हाँरेक ललना मुनि भाखे सुणो रामजी ।
पूर्व भवाँतर काम जी ॥
हाँरेक ललना काई लहरो जीवरी ।
लगी मिथ्यामत नीवरी ॥५॥
हाँरेक राजा ऋषभ प्रभूरा साथ मे ।
चार सहस मुनि गाथ मे ॥
हाँरेक ललना भूप परीषह ना सह्यो ।
संजम तज उन मग गह्यो ॥६॥
हाँरेक ललना प्रहलाद सुप्रभनन्दन ।
चँद्र सूर्योदय वंदन ॥
हाँरेक ललना तापसना व्रत पालीने ।
भव-भवना दुख झालीने ॥७॥
हाँरेक ललना गजपुरपति हरिमति भूप ।
नारी चंद्रलेखा जो अनूप ॥
हाँरेक ललना चंद्रोदय तस सुत होग्यो ।
नाम कुलंकी पुन्य भोग्यो ॥८॥
हाँरेक ललना सूर्योदय उण पुर माही ।
विश्वभूति के घर जाई ॥
हाँरेक ललना अग्निकुण्डा अंगजात ।
श्रुतीरती नामे विख्यात ॥९॥
हाँरेक ललना कुलकर राजा बणियो ।
तप आश्रम जावण ठनियो ॥
हाँरेक ललना मग मे मुनि अभिनंदन ।
मिलिया नृप कीवी वंदन ॥१०॥
हाँरेक ललना मुनि भाखे भूपति भणी ।
तापस जीव रह्यो हणी ॥
हाँरेक ललना लक्कड जलता साप है ।
वो क्षेमंकर तुम बाप है ॥११॥

शाखा मार्‌यो कंत तंत उगटो वण्यो, मोरालाल तंत० ।
भव मे भमिया एह विषय वाटे तण्यो, मोरालाल विषय० ॥८॥
धनमाणज परसिद्ध सेठ-सुत ते थयो, मोरालाल सेठ० ।
रमण तणो ते जीव भूषण नामे थयो, मोरालाल भूषण० ॥९॥
परणावी वत्तीस कन्या सुख भोगवे, मोरालाल कन्या ।
रजनी पश्चिम याम वन्यो सुख योग वे मोरा० वन्यो० ॥१०॥
श्रीधर सपति सार केवल कमला वरी, मोरालाल केवल० ।
मोच्छव कीधो देव इन्द्रादिक परवरी, मोरालाल इन्द्रा० ॥११॥
भूषण भेटण जाय महलो सूं ऊतरी, मोरालाल महलो० ।
सर्प डस्यो मग माय भाव सुत गो मरी, मोरालाल भाव० ॥१२॥
जम्बू विदेह[१] मजार रतनपुरी राजती, मोरालाल रतनपुरी० ।
अचल नामा चक्रीश राणी मृगा छाजती, मोरालाल राणी० ॥१३॥
प्रिय सुदर्शन पुत्र पणे ते जाइयो, मोरालाल पुत्र० ।
वाल वये वैराग व्याह नहिं भाइयो, मोरालाल व्याह० ॥१४॥
अति हठ जाणी तात, जात जव मानियो, मोरालाल जात० ।
कन्या तीन हजार व्याही सुख आणियो, मोरालाल व्याही० ॥१५॥
साठ सहस्रलो वर्प गृही-वासे रह्यो, मोरालाल गेहवास० ।
तप जप कीधो वहुत अंते अनसन लह्यो, मोरा० अंते० ॥१६॥

दोहा

कल्प पाँचवे देव हो, माणे सुर-सुख सार ।
भ्रम विनोद भव मे घणो, पायो नर अवतार ॥१॥
धूर्तपणे धूर्त्या वहुत, राखी माया-जाल ।
अन्ते वह संयम ग्रही, पंचमकल्प विशाल ॥२॥

—चन्द्रायणा—

हुवो सुदर्शन जीव भरत वड भूपती ।
पूरव पुण्य पसाय पायो ऋद्धी अती ॥
अपर देव वैताढ्य मरी गज अे थयो ।
रावण कियो स्वाधीन राम ते संग्रह्यो ॥१॥

---

१ जम्बूद्वीप र महा-विदेह मे ।

कपिपति भामण्डल हनुमान, विभीषण आदी सब राजान,
पाये अपना राजस्थान, दीना भक्तो को वे और-
वधारा पाइये जी ॥अ०॥७॥

सबको यथायोग्य ही आपे, ठिकाना थिर करके ही थापे,
कमी नही राखी है जु वहाँ पै, मिल गये गामवालो को गाम-
खेत भी पाइये जी ॥अ०॥८॥

रंजित तीन खण्ड के राजा, मालिक माना मनसू ताजा,
धुरती नौलख नौबत बाजा, हो गये पृथ्वी में प्रख्यात,-
रामयश गाइये जी ॥अ०॥९॥

ले ले सीख गये निज ठाम, मंत्री पाँच लाख अभिराम,
मुख्य में कपिपति करते काम, सेवा मे हनूमान है खास-कि,-
मोद भराइये जी ॥अ०॥१०॥

लखण के राण्यों छिन्नु सहस है, पद्म के चौपन सहस सकस है,
वे सब प्रेम तणे ही वस है, सीता कौसल्या दोनो ही -
मान वधाइये जी ॥अ०॥११॥

—कवित्त—

वढे धन-धान मान-आन सनमान सदा,-
धर्म-ध्यान पच्चखान भजे भगवान है।
प्रेम नेम क्षेम नद वहत अपट जहाँ,-
चौपद द्विपद घने सत्य शील दान है॥
विनय विवेक व्यवहार तप भावनाएँ,-
विद्या वडपन चारू रीति रसवान है।
दया दम द्युतिवन्त वीर औ सरल ताजे,-
राजे राम राज्य प्रजा सुख-गलतान है॥१॥
नही है अफण्ड दण्ड भण्ड भण्डीचार कहाँ,-
झूठ व्यभिचार हूको नाम न निशान है।
दीन हीन क्षीन नही मन के मलीन गये,-
चोर ढोर भोर वहाँ ठोर न लहान है॥
हिंसा घोर अत्याचारो दीखते ना एक उत,-
खुले रहे द्वार नित नही परेशान है।

—सोरठा—

व्रत लेते विन पार, पण पाले विरला मनुज ।
जे पाले नर नार, धन्यवाद पावे इला[1] ॥१॥

ढाल २५२ मी ॥ तर्ज—लावणी ॥

श्री सत्यवती सीताय एकाकी थावे ।
यूथ-विहीन[2] हरणीय जिमी दरशावे ॥
विपिन महा विकराल व्याल कइ आवे ।
सिंह चिता अरु व्याघ्र जु शब्द सुनावे ॥
सीताजी साहसीक नही घबराई ।
यह कर्म कहानी सुणो भव्य हुलसाई ॥टेर॥१॥
कोमल पद को कण्टक चीरे चररर ।
निकसे खून अपार वहत है सररर ॥
लचकाते है पैर खड्डे मे गिरता ।
थररर धूजे वदन झिले नहिं झिलता ॥
वसन वदन भी फटे ठूंठ लगताई ॥यह०॥२॥
भूख प्यास अरु विरह दुक्ख है तीजा ।
उसे धैर्य दे कौन सग नहिं वीजा ॥
पूरण-गर्भा वजन पेट का न्यारा ।
वहाँ रोने के सिवा और क्या चारा ॥
इत उत वन मे फिरत थकी है वाई ॥यह०॥३॥
आया इत मैदान छाय तरुवर की ।
बैठ गई सा वाल शरण जिनवर की ॥
सव कर्मो का दोष औरो का नाही ।
दो शक्ती सर्वेश[1] सहू हुलसाई ॥
इतने मे इक फौज विपिन मे आई ॥यह०॥४॥
नरपति निरखी नार नजर फैलाई ।
वनदेवी या और अठे क्यो आई ॥
निर्णय करलूं पूछ स्पष्ट हो जाई ।
यो चिंती नृप स्वयं शीघ्र उत जाई ॥

१ धरती पर । २ झुण्ड से भटकी हुई हिरणी ।

नमोकार के जाप मगन लखि बाई ॥यह०॥५॥

पूछे नृप अयि बहिन विपिन के मांही।
आये हो किणहेत देवो फुरमाई ॥
हो किसकी घरनार, कौन तुम जाई।
किस जाति मे जन्मे किस की बाई ॥
दुखद दशा मे निश्चित रहे दिखाई ॥यह०॥६॥

भय-विह्वल सीता हो भूषण सारा।
फेंक दिया है खोल, मौन व्रत धारा ॥
भूप कहे क्यो डरो पहिनलो गहना।
है मर्यादा-शील धर्म पै रहना ॥
सुख-दुख कर्माधीन प्रभू फरमाई ॥यह०॥७॥

आभूषण धर अंग नयन कर नीचा।
जाणी पुरुप प्रधान वचन जब सीचा ॥
सन्मुख बैठा राय सोचता कुन है।
जो इसे निकाली व्हार दुष्ट वो जन है ॥
'मिश्री मुनि' कहे योग बना शुभ आई ॥यह०॥८॥

दोहा

इतै सचिव उत आय के, कहे सुनो मतिराज।
पुण्डरीकपुर गह धनी, वज्रजंघ नरराज ॥१॥
गजवाहन-सुत गुणनिलो, श्रावक पर-तिय-वीर।
पर-दुख-हर्ता लेन करि, आयो इन वन तीर ॥२॥
राज ने जावन रुदन लख, सुणन आय पूछेय।
तज शंका कह दीजिये, चीनक चीन्यो तेय ॥३॥

शिखरिणी-छन्द ॥ (सीता वाक्य)

सुणो राजा मेरी सजन जन वैरी बन गये।
कलंकी मानी के वचन सुन रूठे ननगवे ॥
निकारी धोरी ने विपिन बिच छोरी गज दिये।
बनावें क्यों दोषी पर सब कमाये निजगरे ॥१॥

दान दाता गाम गाम सुरतरु एक भन,
भोगी शालीभद्र जैसे और भोगी कोडे है ॥१॥
माल के धरैया इस धरणी पै हुये बहू,
दशारणभद्र तुल्य एक ना निहारा है।
लब्धिवन्त गोयम-सा दूजा मुनि कहाँ मिले,
स्थूलिभद्र सम त्यागी कौन जग भारा है ॥
पुस्तको मे गीता एक सतियो मे सीता सती,
पतिव्रत धर्म जाने दृग-दिल-धारा है।
रोवे राम ताही हित इचरज ईमे काई,
'मिश्री मुनि' दुनियो मे शील-व्रत प्यारा है ॥२॥

दोहा

गर्भ-दोष टाले सकल, महल मनोहर मात।
पूरणकाले प्रसविया, सुरपति-सा साक्षात ॥१॥

ढाल २५६ मी ॥ तर्ज—जोवन के दिन चार प्यार की वेला है० ॥

ढलती आधीरात नौपतो घुर रही है।
सननन तोपे चले खुशी अति हुय रही है ॥टेर॥

भली वक्त सुत सीता जाया, मानो युगल इन्द्र घर आया।
ज्योतिपुंज कमनीय आशा मन खिल रही है ॥ढलती०॥१॥

जन्मोत्सव जनपति करवायो, सयल शहर घर आगण आयो।
घर घर मंगलाचार वधायो बँट रही है ॥ढलती०॥२॥

कुमी नही राखी इक पाई, याचक-गण रहे खूब सराही।
इसो दिलावर भूप दान नदि वह रही है ॥ढलती०॥३॥

किया दशोटन खुल्ले दिलसे, नाम दियाहै सब मिलझुल के।
गुणनिष्पन्न अभिराम कामना फलरही है ॥ढलती०॥४॥

लवणाकुश मदनाकुश सागे, व्हाला सब जनता ने लागे।
मनरा मारा कोड भोजाई भररही है ॥ढलती०॥५॥

नित्त वधावा मंगलमाला, पुनवानी का सर्व उजाला।
हय गय रय धन वढै, सुयश-ध्वज लहरही है ॥ढलती०॥६॥

हाथल मारत झाल्लिया, एक एक ने ताम ।।स०।।
लथवथ चारो हो रया, देखे लोक तमाम ।।स०।।६।।
छूटे गढ सूं सूरमा, बाँकडला सरदार ।।स०।।
हय गज चढिया शस्त्र ले, राजा राजकुमार ।।स०।।१०।।
पिण वे कुछ ना करसकै, जाय सक्या न नजीक ।।स०।।
शस्त्र चलावे किण तरे, किणरे लागे कीक ।।स०।।११।।
फाड जबाडा फेंकिया, भागा झरते खून ।।स०।।
ताड्या वन मे ताकडा, झारसक्या नहिं धूल ।।स०।।१२।।
मामासा आदे सहू, आय मिल्या नर-वृन्द ।।स०।।
मिलता कूंवर यू वदे, खागये गधा गडीन्ध ।।स०।।१३।।
पौरुप प्रकट पिछाणियो, पितृ-वश प्रमाण ।।स०।।
ये नही सारे एकरे, सूरो रा सुलतान, सलूना ।।स०।।१४।।
मामा ने मुजरो कियो, माता ने परणाम ।।स०।।
कीधो काई लालजी!, नादानी रो काम ।।स०।।१५।।
भाभू! वे था मूरखा, देता सबने त्रास ।।स०।।
मार कूट बारे किया, इणमे काइ स्याबास ।।स०।।१६।।
ले गोदी संभालिया, आई नही तन आल, ।।स०।।
'बाल' ख्याल इसडा करे, 'मिश्रीमुनि' कही ढाल ।।स०।।१७।।

दोहा

मामा-मामी मात-सह, दासी-दास गुलाम ।
मिल-जुल सारा करत है, कुवरो रा गुणग्राम ।।१।।
नि सहि शब्दोच्चार मे, नभ-गति से आवन्त ।
सीताजी सन्मानियो, आवो इत गुणवन्त ।।२।।

ढाल २५८ मी ।। तर्ज—वीरा लूंबा झूंला होय आइजो० ।।

आओ स्वधर्मी हमारा, मैं लेवूं वारणा थाँरा जी ।।टेर।।
सिद्धारथ श्रावक ए है, द्वादश व्रत धारक जे है जी ।।आ०।।१।।
अष्टाग निमित्त के ज्ञाता, पुनि जिन-वाणी रंग राताजी ।।आ०।।२।।
यह वहोत्र कला पिण जाणे, नही चवदे विद्या छाने जी ।।आ०।।३।।
षट् द्रव्य हि ज्ञान प्ररूपे, कुण स्याद्वाद मे जीपे जी ।।आ०।।४।।
है विविध तपस्याधारी, श्रावक प्रतिमा वही सारी जी ।।आ०।।५।।

हे बंधव शाता थांके, थे भला पधार्या म्हांके जी ॥आ०॥६॥
पहले तो आहार लिरावो, फिर तात्विक ज्ञान सुणावो जी ॥आ०॥७॥
ले अहार कहे निणधारी, सीताजी कहे पधारी जी ॥आ०॥८॥
सती आद्योपान्त सुणाई सुण छाती भर-भर आई जी ॥आ०॥९॥
मत सोच करो सुत थारा, है हरि हलधर से प्यारा जी ॥आ०॥१०॥
सब कलंक उतर यो जासी, महिमा जग मे प्रकटासी जी ॥आ०॥११॥
कहे सीता कुछ ठहरावो, बच्चों ने ज्ञान पढ़ावो जी ॥आ०॥१२॥

दोहा

मान कथन, शिशु ज्ञान हित, श्रमणोपासक तेह ।
ठहर गयो, विद्या पढ़े, बालक विनय-समेत ॥१॥
बुद्धि विनय अरु विज्ञता, जिण मे होय प्रचूर ।
अल्प समय मे वे सही, हुवे हुशियार जरूर ॥२॥

ढाल २५९ मी ॥ तर्ज -पपैया काहे मचायन शोर० ॥

कला सब सीख्या राजकुमार, ऐ, पारलौकिक सार ॥टेर॥
अस्त्र-शस्त्र कई शास्त्र सनूने, अर्थ पाठ हिरदे धर लीने ।
शब्द-ज्ञान सुखकार ॥क०॥१॥
स्याद्वाद वर तत्व सिखाया, और अलौकिक पथ समझाया ।
पढ़ लिख भये तयार ॥क०॥२॥
लघु वय ज्ञान खजाना गहेरा, सिद्धारथ श्रावक ने तेरा ।
बुद्धी के भण्डार ॥क०॥३॥
सर्व परीक्षा हुये उत्तीरण, सिद्ध कार्य श्रावक ने पूरण ।
हर्षित सब परिवार ॥क०॥४॥
अष्टादश वर्षों की ऊमर, प्रकट पच्चीस-सा दीसत सुन्दर ।
स्वर्णोपम आकार ॥क०॥५॥
शशिचूला बाला अभिरामा, कृशोदरी कोमल गुणधामा ।
अंगजात पटनार ॥क०॥६॥
लग आई बत्तीस कन्या का, लवणांकुश सुन नारन का ।
प्रेमधरी अनगार ॥क०॥७॥
अनंगलवण परणाय दीधी है, इन शोभा अधिकी कीधी है ।
मदनांकुश [illegible] ॥क०॥८॥

पृथ्वीपुर नायक पृथु नरवर, अमृतवती राणी उदर गर।
कनकप्रभा तस बाल ॥क०॥६॥
मदनाकुश हित मामे मागी, वो नटग्यो बोल्यो दुर्भागी।
वंश अजाण विचार ॥क०॥१०॥
न्यात जात अज्ञात हमे है, मागत नाई शर्म तुम्हे है।
कहा 'मिश्री' ललकार ॥क०॥११॥

—कवित्त—

दूत से श्रवण कर मामो घणो रीस भर्यो-
लेके चमू चढ्यो ताम पृथ्वी-पुर जोर से।
घेर लीनो पुर मारो लव-भ्रात पृथु वाघ्र-
मोरचे पै आन अड्यो जंग माच्यो घोर से।
वज्रजंघ बांधलीनो पृथुवाघ्र भणी जाय-
पोतनपुर को नाथ पृथु तेड्यो ओर से।
मित्र के मदत काज सुनत ही दौड आयो-
वज्रजंघ सुत तेडा ऊगते ही भोर से ॥१॥

दोहा

अनंग लवण सज चालिया, मामा-सुत को रोक।
उभय ओर माच्यो समर, जबर शस्त्र की झोक ॥१॥

ढाल २६० मी ॥ तर्ज—राजवियो ने राजपियारो० ॥

मदनाकुश भुज इन्द्र वज्र से, छोडे शर अति खारा रे।
सह न सक्या वे भागे दश दिस, होस उड्या है व्हारारे ॥१॥
वंश बतावूं उरा पधारो, चारो शाखा भेली रे ॥टेर॥
पोतनपुरपति प्राक्रम पूरो, अडियो सन्मुख आणी रे।
गदा घाव से मूर्च्छित कीनो, बाध्यो गाढो ताणी रे ॥वंश०॥२॥
पृथु नृप आ एम पयपै, रे छोकर टलजाना रे।
बालहत्या हमको लगजासी, नमन करी भगजाना रे ॥वंश०॥३॥
मदन कहे तजदे लपराई, इणमे शोभा नाही रे।
खड्ग बजाया क्षत्री दीपे, चौडे रण के माही रे ॥वंश०॥४॥
वृद्ध भयो क्यो पाप वधारे, भजन करेनी भाई रे।
नाहक मरसी दुर्गति रुलसी, याते दूं चेताई रे ॥वंश०॥५॥

उत्ता योग नही जानी थी, हमगे गन सिधि छानी थी ।
हम मात को नही पिछानी थी ॥सु०॥१॥
कहे वज्रजंग पुरको चालो, कोइ वचन गह्या पर मन आलो ।
मुनि नारद नगायो है चालो ॥सु०॥२॥
प्रथम शक्ति संचय करणी, विन पौरुष कौन रखी धरणी ।
यह नीति शास्त्र चवडे वरणी ॥सु०॥३॥
दोनो के जचगी हे मनमे, दिग्विजय करण चाल्या छिनमे ।
भुज जोस समावे नही जिनमे ॥सु०॥४॥
पुण्डरिकपुर सारे आये है, दल बादल ताम सजाये है ।
पृथु वज्रजग संग धाये है ॥सु०॥५॥
देश साधन संचरिया हे, लोकाक्षपुरी पग धरिया है ।
कूवेरकान्त पग-परिया है ॥सु०॥६॥
रायकर्ण लंका क पत्ती, जीती लीधो साथ गती ।
विजयस्थलि शोभा लीध अती ॥सु०॥७॥
गंगा नदी उतरिया है, कैलाशगिरी यश वरिया है ।
उत्तर दिशि गमन से घिरिया हे ॥सु०॥८॥
नंदन चारु देश सीधा, जीती तस स्वामी संग लीधा ।
सिह कुन्तल आ डेरा दीधा ॥सु०॥६॥
नृप करडो युद्ध कियो गहरो, मदनाकुश वरियो है सहरो ।
भीम शूल सलभा कहरो ॥सु०॥१०॥
सिंधू तट साध लिया सारा, आर्य अनार्य जु जनपारा ।
नाम लियो है परवारा ॥सु०॥११॥

दोहा

घणा भूप साथे चले, और ऋद्धि अनपार ।
विजय करीने वाहुड्या, लव-कुश राजकुमार ॥१॥
दरिया सम दल गाजतो, वाजे गुहिर निसाण ।
पुण्डरीकपुर आविया, वणराजा महाराण ॥२॥

ढाल २६२ मी ॥ तर्ज—मन मोह्यो रे तुंगियापुर नगर सुहामणो० ॥

धन्य है वज्रजग वड भूपती रे, ज्यारा भाणेजा ऊगत भाण रे ।
देश घणोरा वड-वड राजिया रे, किया आपुण वल परमाण रे ॥टेर॥

अति आडम्बर माता चरण मे रे, नमतां ही माता दी आशीस रे ।
यशजो थे अन-धन इज्जत आयु ने रे, पालो मर्यादा विसवावीस रे ॥ध०॥२॥
देव गुरु ने धर्म प्रसाद सूं रे, नीका सूं नीका वन्दन होय रे ।
राम-लक्ष्मण रे सरिस उजागरू रे, माने सब भूपति आछा जोय रे ॥ध०॥३॥
भोजन आदि से निवृत होयके रे, शल्ला मातुल दीनी सुखकार रे ।
चालो अयोध्या अवसर आवियो रे, पितृ पितृव्य ने मिलन कुमार रे ॥ध०॥४॥

—कवित्त—

कालाम्बु लम्पाक लंका पृथु वज्रजंघ आदि-
मकुन्तल चूलमल्ल आदी वट राजवी ।
अनुकूल अवनीप, एक से है एक आलि,-
युद्ध-मतवाले माने ताल आज्ञा बाजवी ॥
चमू है चतुर बल आम्बी अणी जीतनारे,-
रिपु के पछारनारे सिंह सम गाज जो ।
चतुर्मुखी ठोस जोस होस ने सज्जित भये,-
टले नहीं भिटे ऐसे जैसे इन्द्र साजवी ॥१॥

—सोरठा—

मुहूरत रे मण्डाण, करी चढाई जोर री ।
माता ने दो-पाण, जोड इसी अरजी करी ॥१॥

अन्तर ढाल ॥ तर्ज—ख्याल की० ॥

मैं जावो अयोध्या, आज्ञा दिरावो अम्मा आज ही ॥टेर॥
आज्ञा झट बगसावदो म्हारे, अब तो रह्यो न जाय ।
करी कलंकित बाहिर काढी, थे दुःख पाया माय ॥
थें दुख पाया माय के वैर निकालसां ।
आस्यो देवो गोद के मान उजालसां ॥मैं०॥१॥
श्रोण सुणी लवणांकुश लारे, मात कहे रे जाया ।
करो फौजां सजकारणी म्हे, करो म दल्ल संभाल ॥
करो थे दल्ल संभाया, दिखाय सूद उजालसां ।
महा लोगाइ मेरा उजल करावसां ॥मैं०॥
मनमोभो बेटो, काम दिराजो आज भोड़िजे ॥टेर॥

तीन लोक रो कंटक रिपुमन, रावण दियो पछाड
वायू मे तरुवर तो डोले, डोल सके न पहाड ।।
डोल सके न पहाड पुन थे मानलो ।
जो भाखूं मैं वात क उणपर ध्यानलो ।।मन०।।३।।
घन गर्जारव सुन अष्टापद कूदी घुटना तोडे ।
घन को नहि नुकशान रती भर, पडते उसमे फोडे ।।
पडते उसमे फोडे स्पष्ट यह वात है ।
कौन जुडे तम जोड त्रिखण्डीनाथ है ।।मन०।।४।।
अगर प्रेम पूर्वक थे जावो, मुजरो करवा हेत ।
सुख मे जावो नही मनाई, सागे वणसी वेत ।।
सागे वणसी वेत, आसरो थायरो ।
लाख करो हे लाल! नही माने मन मायरो ।।मन०।।५।।

—ढाल-चालू—

कुँवर पयंपै माजी मायरा रे, थारा कहणा सूँ जावा तेथ रे ।
नमन करतो पूछेला सही रे, किणरा हो जाया आया छो इत केथ रे ।।ध०।।५।।
उत्तर देवोला सुत सीता तणा रे, सुणकर हँससी सब सरदार रे ।
आया रुलतोडा छोरा निज घरे रे, उणरा-उणरा है देसी गार रे ।।ध०।।६।।
सहन करोला किणविध सोचलो रे, दूध लजासो हर्गिज नाय रे ।
राड होजासी परिषद मायने रे, उणरो वतावा आप उपाय रे ।।ध०।।७।।
दूजो दुख दीधो म्हारी मात ने रे, जासू मन मिलसी वोलो केम रे ।
फाटो पय जमने वालो है नही रे, इणसू तो आछो युद्ध इण टेम रे ।।ध०।।८।।
फासू क्यो चिन्ता आणो चित्त मे रे, वंश उणोरे उपज्या खास रे ।
गौरव राखोला विजनस मातजी रे, पूरण जगदंवा करसी आस रे ।।ध०।।६।।

—ढाल-पूर्व—

मिलोला इज्जत से माता, रखोगा पूज्यो का नाता,
खतासो पूरण ही खाता, वे भी क्या जाणेला मन मे,-
हुवा सुत सीता के वन मे ।।राम०।।२१०।।
कही यो कटक लेय सागे, चढ्या है देख अरी भागे,
सहम दश मनुज चले आगे, समा करडारे पथ सारे,-
चकित व्हे देखी जनपारे ।।राम०।।२११।।

चढे राजा सग अठारा तदपि जितियो नाय ।
पकड काठा जेल नाख्या, चढ गयो कपिराय ।।ल०।।८।।
इधर नारद जाय भाग्यो, जहाँ भामण्डल भूप ।
वीर आयो बहिन पासे, वचन कहे धर चूंप ।।ल०।।९।।
प्रथम गलती राम कीनी, दियो तुज वनवास ।
लियो अपजस नारी पासे, कौन दी स्यावास ।।ल०।।१०।।
भेजियो क्यो भाणजो ने, मरावाने काज ।
जाणती नहि केम जीते, मिरग हा! मृगराज ।।ल०।।११।।
नही मानी सुणो भाई! दोष मेरा नाय ।
कहे भाई चलो वेगा, रखै हो अन्याय ।।ल०।।१२।।
वहिन भाई वेस याने, पौचगा ततकाल ।
रह्या छाने व्योम माही, पेख रहिया ख्याल ।।ल०।।१३।।
मदन साथे कपीपति युध, खात सूँ होवन्त ।
गुप्तजा भामण्डलू रे, वचन यो पभणन्त ।।ल०।।१४।।
मत लडो आजावो साथे, दियो पूरो भेद ।
सती पासे आय नमियो, मिट्यो सारो खेद ।।ल०।।१५।।
लवण-अंकुशमात चरणे, दीध शीस झुकाय ।
कहे सीता, तोर मातुल, खास यह जग माय ।।ल०।।१६।।
भामण्डल से कियो मुजरो, खोले लीधा खेच ।
चूमि मस्तक, स्नेह पूरण, पोखियो है सेच ।।ल०।।१७।।
वीर पत्नी, वीर-भगनी, मात तव विख्यात ।
वीर-माता अबै वाजी, साँभलो गुण-पात ।।ल०।।१८।।
प्रवल-वली थे प्रसिद्ध होगा, करो केहा काम ।
पिता काका सेती लडता, होवसो वदनाम ।।ल०।।१९।।
घणा दुर्धर जेम भूधर, टलणवाला नाय ।
उभय पक्षे होय हाणी सोचलो मन माँय ।।ल०।।२०।।
मामामा! अव जग छिडगो, पडो पावो केम ।
मोरचा मे हटण पीछो, नही म्हारो नेम ।।ल०।।२१।।
युद्ध मडियो हुवो हाको, कपिपति गो काय ।
चन्द्ररश्मी चढ्यो क्रोधे, झेलियो न झिलाय ।।ल०।।२२।।

मरणाट चले शर झाट जहा अरराट करे न धरे पगला ।
खललाट खलाखल खून चले, थरराट करे दल जो सगला ॥
अवधेश हरी सह देख तदा नगनो त्रिन ताम सुधा पिघला ।
किन कारन रीस न आवत हे यह दोप भरा जिम आग जला ॥२॥

—ढाल-चालू—

मनच्हाता इनसे मिलने हित पर कृत्यो पर तामस आता ।
ज्ञानी विन निर्णय नही होता अरु युद्ध करण भी नहि भाता ॥
लवणाकुश राम अगाडी हे, मदनाकुश लक्ष्मण के साथे ।
वचन सुनाते अरे आपने रावण को मारा हाथे ॥५॥
हम दोनो आपमे लडते हे, सौभाग्य दिलाना महर करी ।
हार जीत का सोच नही पर लडने की है चाह भरी ॥
इतनी कह करके अडे वीर शस्त्रो की झोक करारी हे ।
खगचर पदचर सब देख रहे यह जोड चारो की भारी है ॥६॥
टिड्डी-दल मानिन्द अरे शर-जाल गगन में छाया है ।
इत उत ल्हासो पै ल्हासो वे मृत्यु-सा दृश्य दिखलाया है ॥
रत्थो पै रथ समरत्थ वहै हयरश्मी खीचत थाक गये ।
पर रथारोहि के हाथो में वह जोस वढे हे नये-नये ॥७॥
विजयवाहिनी भाज चली अपशोप आज यह होगा है ।
वडे-वडे सरदार सभी भये जोगा भी नाजोगा है ॥
हाथ थके है राम, रामानुज वडा फिकर दिल छाया है ।
नादान वच्चो ने रे आज हा! क्या जादू वर्पाया है ॥८॥
है कृतातमुख राम सारथी, वीर विराध हरी जी का ।
दोनो थक चकचूर भये अरु तेज हुआ दिल का फीका ॥
चोट चलाकी, कर की स्फूर्ती देखन नायक वच्चो की ।
नारद नृत्य करत पर्यंपै जीत होत है सच्चो की ॥९॥
रथ-थाके हय-थाके सारे फोज मोज का खोज गया ।
जो हाल है रामचन्द्र का वो ही लछमन का होय रह्या ॥
लव कुश चोट टाल कर करता उनकी सीधी टक्कर है ।
तो भी विचलित नहि होते है व्याघ्र जिसे वे तत्पर है ॥१०॥
कर ढीले भये रामचंद्र के शर घावो से पीडित है ।
वज्रावर्त काम नहि देता हल मसूल भी दडित है ॥

ढाल २७० मी ।। तर्ज—तृष्णावन्त नदी सुत जाणो० ।

अवसर जाणी राघव-राणी, प्रबल वीरता धारी ।
नर सुर राजा प्रजा समक्षे, त्यार भई तत्कारी रे ।।१।।
सीता करती धीज कल्याणी ।।टेर।।
झालोझाल विशाल भयंकर, देखत उर कंपावे ।
समरागण मे महारथी जिमि, घणा उमग थी जावे रे ।।सी०।।२।।
वैसे ही वा सती शिरोमणि, पावक कुण्ड पै आई ।
जैसो हर्ष व्याह की विरिया, उण से भी अधिकाई रे ।।सी०।।३।।
पंच-परमेष्ठी प्रथम नमन कर, चारो ले शरणा री ।
ऊँचे स्वर से मंजुल वाणी, शारद जेम उचारी रे ।।सी०।।४।।
लोकपाल दिग्पाल सुरासुर, रवि शशि शाख तिहारी ।
दिन रात्री सोती अरु जाग्रत, योग त्रय मे धारी रे ।।सी०।।५।।
रामचन्द्र टाली नर किसकी, जो कभी व्ही इच्छा री ।
तो पावक मुज भस्म करीजो, अर्ज करूँ इणवारी रे ।।सी०।।६।।
अगर शुद्ध अति विशुध भाव हो, तो वनजाना वारी ।
यों कहि उचक पडी है सीता, 'मिश्री' कहे वलिहारी रे ।।सी०।।७।।

दोहा

पावक पडतो ही प्रथम, शीतल बना सलील ।
स्वर्ण पाज रत्नो जडित, पुष्करणी रंगरील ।।१।।

ढाल २७१ मी ।। तर्ज—कायथडा० ।।

हाँरेक सीता रत्न सिहासन कमल पै,
हाँरेक सीता ऊपर विराज्या जाय ।
धन सीता नाम अमर ते कर दियो,
लाहो शील तणो लियो ।।टेर।।
हाँरेक जल पर हस तिरे मोती चगे,
हाँरेक सीता नाचे सुर-वनिताय ।।ध०।।१।।
हाँरेक नभ मे नवरंग वर्षे फूलडा,
हाँरेक देवता नाटक करे अपार ।।ध०।।
हाँरेक बोले जय सीता जन-जन तदा,
हाँरेक महिमा वरती मेरु सुमार ।।ध०।।२।।

हांरिक चौडे उज्ज्वल हो गइ जानकी,
हांरिक उतर्यो सारो नास कलंक ॥ध्रु०॥
हांरिक बोलो अब तो भेंटी कुण कहे,
हांरिक ओ तो द्वितिया चाल मयंक ॥ध्रु०॥३॥
हांरिक कीनो ऊँचो पीवर मानरो,
हांरिक दीपायो रघुकुलनो परिवार ॥ध्रु०॥
हांरिक फीटा पड्या सारा पापिया,
हांरिक नकटा निंदाखोर लबार ॥ध्रु०॥८॥

—छप्पय-छन्द—

सीता शील प्रताप राम मथुरा के माही।
लीधो धनुष चढाय विद्याधर री विनराई ॥
सिन्धु तिर्यो हनुमान पाज पत्थरकी होगी।
कियो नास उद्यान इन्द्रजित भयो वियोगी ॥
अजब लंक सब धुड़ गई, जाकी तोड़ी लखवार।
लक्ष्मण जीत्यो लंकपति सीता शील प्रभाव वर ॥६॥
वन में छोरी राम भाल किंचित भी नाहिं।
वज्रजंघ-सो भ्रात अचानक मिलगो आई ॥
पुत्र सरीसा पुत्र दिया तिलक सो जोड़ा।
अनल मिटी सो नीर भई यश गाता वहु सीता ॥
गावत चार सीपो उसी सीता शील सजोर।
न हुवो न भविष्यती, सीता जैसी और ॥७॥

—ढाल-मारू—

हांरिक आयो पाणी [illegible] ज्यों,
हांरिक [illegible] हो [illegible] ॥ध्रु०॥
हांरिक [illegible] नरनारी [illegible],
हांरिक [illegible] ॥ध्रु०॥९॥
हांरिक [illegible] [illegible] दिखलावे,
हांरिक [illegible] [illegible] [illegible] ॥ध्रु०॥
हांरिक [illegible]
हांरिक [illegible] ॥ध्रु०॥१०॥

हाँरेक सीता हाथा सूँ जल सीचियो,
हाँरेक पाछो मारो लीधो खेंच ॥ध०॥
हाँरेक पाछा जीवडा बैठा ढंग सूँ,
हाँरेक जैसे जलिया पर शुभ सेंच ॥ध०॥७॥
हाँरेक लव-कुश तिरता आया अम्ब पै,
हाँरेक कीधो कोटि-कोटि परणाम ॥ध०॥
हाँरेक आया सुग्रीवादिक भूपती,
हाँरेक नमतो पाया परम आराम ॥ध०॥८॥
हाँरेक लक्ष्मण प्रेम सहित मुजरो कियो,
हाँरेक भावज कियो आज कल्याण ॥ध०॥
हाँरेक राखी बात घराणा री सही
हाँरेक भाभी कितरा करूँ वखाण ॥ध०॥९॥

दोहा

अब आये श्री रामजी, करता पश्चात्ताप ॥
होय नम्र, गद-गद हृदय, भाखे श्रीमुख आप ॥१॥

ढाल मी २७२ ॥ तर्ज—मांड० ॥

महाराणी म्हारी गलती सारी क्षमहू गुण गंभीर ।
भूल करारी होगइ भारी, भूलो शील-सुधीर हो ॥टेर॥
लोक कथन मैं मानियो रे, राखण कुलरी लाज ।
ऊँडो सोच्यो मैं नही रे, दीनी तो उर दाज हो ॥म०॥१॥
अटवी माहे एकली रे, भेजी निर्दय होय ।
स्त्री हत्या निर्दोपण मन से, वचन से लागो मोय हो ॥म०॥२॥
अणजुगतो कारज मैं कीनो, लीनो अपयश पूर ।
किणरो ही कहणो नहि मान्यो, आण्यो क्रोध करूर हो ॥म०॥३॥
अन्तिम दुख दीधो अगनी रो, ओछी बुध हिय धार ।
थारा शील प्रभाव थी रे, उज्ज्वल हुवा अपार हो ॥म०॥४॥
पश्चात्ताप उणीरो मोने, और खमावूं आज ।
मोटो मन कर थे खमज्यो, अहो! धर्मरी जहाज हो ॥म०॥५॥
सीता कर-जोडी कहे रे, मैं नही आणी रीस ।
कृतकर्मों रा फल मैं भुगत्या, दोष नही तुम ईश हो ॥म०॥६॥

जन अपवाद निवारण म्हारो, मुजको आग मजार।
दोनों पक्ष थी उज्ज्वल बनगी, ओ थारो उपकार हो ॥म०॥७॥
जीवित रहूंगी सुखशाता मे, आप नाम आधार।
मत दुख आणो आप हृदय मे, मैं दासी चरणार हो ॥म०॥८॥
रवि रज थी जो झांको होवे, वायु केरे योग।
दोष नहीं है भू रज केरो, जाणे सारा लोग हो ॥म०॥९॥
अहि शिर पै जो मेंडक खेले, मन्त्र तणो परभाव।
मेंडक रो न महत्व इणी मे, सुणिये अयोध्या-राव हो ॥म०॥१०॥
कोकिल मधुरी वाणी बोले, साफ वसन्त विशेष।
कोयल रो काई किरियावर चैत्र मास को शेष हो ॥म०॥११॥
गटर तणो पाणी गंगाजल, होवत गंगा संग।
लोह बणे सुवरण जो सागे, पारस रे परसंग हो ॥म०॥१२॥
ज्यों म्हारा सब काज सुधरिया, स्वामी आप प्रसाद।
म्हारो इण मे नहीं मोटापण, सत्य शील सुस्वाद हो ॥म०॥१३॥
घरे पधारो हे गज-गमणी, रमणी हो रमणीक।
सुख भोगो संगारना रे, 'मिश्री' नाम नजीक हो ॥म०॥१४॥

—ढाल-पूर्व—

रह्यो घर सुख में हे स्वामी, विषय सुख कर्म-बंध गामी,
इच्छुक नहीं अब अन्तर्यामी, संयम ले तपजप धामी, —
मोह अरु ममता मारूँगी ॥राम०॥२०॥
लक्ष्मण आदी सरदारो! स्नेह-सूत शुभाशीष म्हारो,
तजूं संसार कर्म-भारो, लोच [illegible] [illegible],-
[illegible] ॥राम०॥२१॥

दोहा

[illegible]।
[illegible] ॥१॥
[illegible]।
[illegible] ॥२॥

—चन्द्रायणा—

[illegible]।
[illegible]॥

धन्य धन्य अति धन्य छती रिध त्याग दी ।
श्रमणी वण सागेय त्रिपथ के आग दी ॥१॥

ढाल २७३ मी ॥ तर्ज—पहलो तो पांमो रायवर ढालिये० ॥

भला पति ने भला नंदना, भला भाई ने भल परिवार ।
भला महल ने सैय्या पिण भली, भला-भला आभूषण सार ॥१॥
सीता सतवंती सारा छोडी ने सजम आदर्यो ॥टेर॥
मान भलो ने भलो यश मिल्यो, भलो राज्य ने भल भण्डार ।
नौकर चाकर तो सारा ही भला, भला जिणोरा हे सरदार ॥सी०॥२॥
भली माता ने पिता पिण भला, सासू भली ने सखियो सार ।
वहुयर भली ने भोजायो भली, मामी मामा ने भला चार ॥सी०॥३॥
देवर भला ने भतीजा भला, भला जेठूता आज्ञाकार ।
भला भोजन ने वगीचा भला, भलापणा रो नही है पार ॥सी०॥४॥
चन्दन सेच्यो थी राघव चेतिया, वोले सीताजी कित गा चाल ।
लु चित केशो थी लावो शीघ्र ही, भूचर ने खेचर सव भोपाल ॥सी०॥५॥
हँसवा सव लागा प्रभुजी कोपिया, अरे लक्ष्मण अे लोक गिवार ।
हंसी उडावे दुष्टी मायरी, तूं तो नही देवे दण्ड लिगार ॥सी०॥६॥
धनुष उठायो रीसे प्रजल्या, भाषे लक्ष्मण जी सुणिये भ्रात' ।
एतो चरणोरा सेवक आपरा, हँसी करणरी 'प्रभु' नही है वात ॥सी०॥७॥
संयम ले लीनो सीता जी सही, श्री जयभूषण गुरुवर पास ।
आज हुवा है ते तो केवली, महा उपकारी गुण री रास ॥सी०॥८॥
पहले प्रभुजी सीता ने तजी, लोक अपयश रो भय मन आण ।
अव तो सीताजी छोड्या आपने, भव भ्रमण रो भय मन ठाण ॥सी०॥९॥
केवल महोत्सव तो भाई' कीजिये, वने सीताजी श्रमणी रूप ।
दर्शन कर लीजो निज देवी तणा, सहजाणा थी मानो भूप ॥सी०॥१०॥
सह परिवारे आया रामजी, विधि सूं कर वन्दन सीता ताय ।
धन्य महाराणी जन्म सुधारियो, धन्य पिता ने धन-धन माय ॥सी०॥११॥

दोहा

केवल अर दीक्षा युगल, उच्छव रघुपति कीध ।
देसना सुण फिर पूछियो, सद्गुरु उत्तर दीध ॥१॥

अर्थ-लोभ ललचाई हो एक श्रीकात थो सेठियो-
सगपण कीध तिवार ।।मु०।।६।।
वसूदत्त रीसायो हो निशि श्रीकान्त ने मारियो-
वो तस लीधो मार ।।
विंध्या अटवी मृगला हो दोनो ही योनी पाविया-
गुणवती मरी कुँवार ।।मु०।।७।।
सा पिण हिरणी होगी हो उणयोगे लड दोनो मुआ-
रुलिया काल अपार ।।मु०।।
धनदत्त भ्राता मरतो हो चिन्तातुर घरसूँ नीकल्यो-
वन मे लागी भूख ।
मुनि देखी वो मागे हो भोजन उसके पास से-
मुनि कहे कहाँ इत ढूक ।।मु०।।८।।
संग्रह हम नही करते हो फिर वर्ते रात्री और भी-
निशि भोजन दुखकार ।।
उत्तम ने नही छाजे हो हिंसानो थानक मोटको-
त्याग करो धर प्यार ।।मु०।।९।।
श्रावकसुन्दर वणियो हो जिन-धर्मनिभायो चित्तसूँ-
अन्ते पहले स्वर्ग ।।
महापुर मेरु सेठज हो पद्मरुची सुत जन्मगो-
श्रावक वण्यो संसर्ग ।।मु०।।१०।।
इकदिन गोकुल जातो हो इक वृषभवृद्ध अवलोकियो-
तडफत व्याधी काय ।
नमस्कार महामंत्रज हो सुणायो उसके कान मे-
वो धार्‌यो मन माय ।।मु०।।११।।
छत्रछाय नृप राणी हो श्रीदत्ता उदरे ऊपनो-
उण वृषभ नो जीव ।
वृषभध्वज अभिधानज हो वर यौवनवय मे आवियो-
इक दिन मृत्यु दीठ ।।मु०।।१२।।
जगा पावनो पायो हो शुभ जातीस्मरण ज्ञान ने-
हुयगो अति खुशहाल ।
उपकारी से मिलवा हो इक चित्र करायो चंपरो-
दाता मंत्र दयाल ।।मु०।।१३।।

दोहा

करी, जीव श्रीकन्तनो, जन्म रु मरण अनेक ।
पाटण कन्द मृणालवे, पुण्याकूर विशेख ॥१॥
वज्रमुकण्ठ नरीन्द्र सुत, हेमवती अँगजात ।
शंभू नाम सुहामणो, सोहे सज्जन साथ ॥२॥

सोरठा

वसूदत्त प्राणीय, शंभू नृप प्रोहित तणी ।
रत्नचुडा अंगजीय, श्रीभूती नन्दन भलो ॥१॥
गुणवन्ती गहरीय, घूमी भव कंतार मे ।
श्रीभूती नर-तीय, नामे खास सरस्वती ॥२॥

कवित्त

वेगवती पुत्री तास बहुत कला की जाण-
जोवण की वय आई एकदा उद्यान मे ।
ध्यान युक्त जैन मुनी दुनी करे सेव घणी-
वेगवती आणी द्वेष मत के अज्ञान मे ॥
कलंक चढायो मिथ्या वनिता रसिक एह-
भेड परवाई लोकनिदा के वितान मे ।
दोष से दुखित साधू प्रतिज्ञा कठिन कीधी-
कलंक सहित नही लेवूं अन-पान मैं ॥१॥
कोप के शासन-सुर वेगवती मुख फेर्‌यो-
करती आक्रन्द अति भूली मारो होस है ।
मावित निकाली व्हार लेके नर नारी लार-
सुदर्शन मुनि पास कहे ज्ञान-कोष है ॥
मैंने दिया मिथ्या आल ताके फल मिले मोको-
मुनिजी को दोष नही सारो म्हारो दोष है ।
क्षमा करो महामुनि श्राविका वनी है साची-
साजी सुर करी डारी पायो मा संतोष है ॥२॥

ढाल २७५ मी ॥ तर्ज - जीव रे तूं शील तणो कर संग० ॥

मुनि कीर्ति फैली घणी रे, पारणो करके विहार ।
कर लीनो शुध भाव सं रे, वेगवती मा लार ॥१॥
ब्राह्मणी रे करती है धर्मध्यान ॥टेर॥

कन्या गुणी लावण्यता रे, रूप अनूपम पेख ।
राजा रीझ्यो ताहि पै रे, प्रोहित ने कहे देख ॥श्रा०॥२॥
तुम कन्या परणावदे रे, ते कहे देवूं नांय ।
मिथ्यामति ने कन्यका रे, देता ह्वै दुख प्राय ॥श्रा०॥३॥
जबराई सूं भूपती रे, लीधी मारी बाप ।
ब्राह्मण नीयाणो कर्यो रे, नृप ने दुख री थाप ॥श्रा०॥४॥
थोड़ा दिना सूं छोड़ दी रे, सा लियो संजम भार ।
अन्ते नीयाणो कियो रे, मारण कारण धार ॥श्रा०॥५॥
पंचम स्वर्ग पहुंचगी रे, त्यां थी चव मधुराय ।
जनक विदेही पुत्रिका रे, सीताजी जनमाय ॥श्रा०॥६॥
वेग पुराणो ना पडे रे, आयो रूठो काल ।
याने नेतो प्राणिया रे, आल भयंकर जाल ॥श्रा०॥७॥
प्रभु भमतां भव विषै रे, कुशध्वज द्विज नी नार ।
तस सुत नन्दन नामथी रे, सुन्दर ते सुकमार ॥श्रा०॥८॥
विजयसिंह गुरु पास में रे, संयम लीनो तेह ।
महा दुक्कर तप आदर्यो रे, क्षीण कर्यो निज देह ॥श्रा०॥९॥
कनकप्रभ गगनगामनी रे, ऋद्धी लख मुनिराय ।
नीयाणो निश्चिन्त कियो रे, तप फल [illegible] समान ॥श्रा०॥१०॥
[illegible] कल्प सुर पद लह्यो रे, आयु पूर्ण ने अन्त ।
हुओ रावण नामथी रे, महा बली बलवन्त ॥श्रा०॥११॥
बालापणो जीव ने रे, भीभीषण ने भ्रात ।
[illegible] ॥श्रा०॥१२॥
[illegible] ।
[illegible] ॥श्रा०॥१३॥
[illegible] ।
[illegible] ॥श्रा०॥१४॥
[illegible] ।
[illegible] ॥श्रा०॥१५॥
[illegible] ।
[illegible] ॥श्रा०॥१६॥
[illegible] ।
[illegible]

दशरथ सुत लक्ष्मण हुवो रे, सा बाला वनमाय ।
अती उग्र तपस्या तपी रे, ब्रह्मचर्य-युत प्राय ॥ब्रा०॥१८॥
अनशन कर ईसान मे रे, देव तणा सुख भोग ।
कौसल्या सा जाणिये रे, लक्ष्मण रे सुखयोग ॥ब्रा०॥१६॥
गुणवंतीनो बंधवो रे, गणधर नाम रसाल ।
कुण्डलमण्डित वह वण्यो रे, व्रत सेव्यो तिहुँ काल ॥ब्रा०॥२०॥
भामण्डल सीता तणो रे, वन्धव ते वडराय ।
वामदेवना पुत्रसो रे, काकंदी पुर माय ॥
श्यामा नारी जाइयो रे, सुसावर्त्ति वर काय ॥ब्रा०॥२१॥
सुनन्द रु वसुनन्दजी रे, प्रतिलाभ्या अणगार ।
मासखमण रे पारणे रे, उत्तर कुरु अवतार ॥ब्रा०॥२२॥
प्रथम स्वर्ग से अवतरी रे, रतिवर्द्धन नर राज ।
काकंदी मे जाणजो रे, सुदर्शना उर साज ॥ब्रा०॥२३॥
प्रीयंकर शुभंकरू रे, दोर्दंड सुत दोय ।
राज्य भोग दीक्षा ग्रही रे, ग्रैवेयिक सुर होय ॥ब्रा०॥२४॥
लवणांकुश मदनांकुसू रे, सीता रा अंगजात ।
चरमशरीरी ए सही रे, होसे सिद्ध साक्षात ॥ब्रा०॥२५॥
सुदर्शना तस मातजी रे, सुर भव कर सुख माल ।
सिद्धारथ श्रावक हुवो रे, 'मिश्री' कथी ए ढाल ॥ब्रा०॥२६॥

दोहा

पूरव भव भाख्यो गुरू, सुण पाया वैराग ।
सेनापति संजम लियो, जग राख्यो सौभाग ॥१॥

रामचंद्र आदे सहू, प्रणम्या गुरु पद ताम ।
हिये हर्ष अति ऊपनो, लखि संबंध तमाम ॥२॥

ढाल २७६ मी ॥ तर्ज– मोहन वंशीवाले तुमको लाखो प्रणाम० ॥

रामचंद्र सीता पै जाकर, वन्दन कीनो शीस नमाकर ।
धन्य आप अवतार, तुमको कोटि प्रणाम ॥१॥
सीता सतिय महान, तुमको कोटि प्रणाम ॥टेर॥
सुकुमारांगी कठिन संयम पथ, भूख तृषा गीषम शर्दी अत ।
कैसे सहन करोगी, तुमको कोटि प्रणाम ॥सी०॥२॥

सार्धद्विसत सुत लक्ष्मण का, कोपानल हो गये दृग उनका,
युद्ध हित त्यार भये तनका, लवणाकुश बोले पितु काका,
मरावे प्रेम जगत ज्याका ॥२२४॥

दोहा

युध साजो लाजो नही, भाजो यहाँ से भूर ।
भाइ अवध्य होते सदा, सोचो नहि वेसूर ॥१॥
शर्मिन्दा हो शान्त वे, आज्ञा ले पितु पास ।
संजम लेकर संचर्या, गुरू सह ज्ञानाभ्यास ॥२॥

ढाल २७७ मी ॥ तर्ज—हाँ सगीजी ने पेड़ा भावे० ॥

लवणाकुश मदनाकुश भाई, वडी धूममे परण्या त्वाँही ।
आये अयोध्या ठाट सूँ, लिये उन्हे वधाई रे ॥१॥
हरी हलधर सुखदाई, राम राज्य मर्यादा माही ।
अमन चैन मे लोग रहै, नित खुशी मनाई रे ॥टेर॥
भामण्डल साधी है श्रेणी, आण अखण्डित चाले जैनी ।
अव तो दीक्षा लेवसूँ मनशा भइ तेवी रे ॥हरी०॥२॥
सूता भावे शुद्ध भावना, भूमीपर नहि नीद आवना ।
सहमा विद्युत्पात हुवो, मृत्यु पा-जाना रे ॥हरी०॥३॥
देवकुरु युगलिक-नन पायो,देवहोय नर-भव सुखदायो ।
करसी निज उद्धार ग्रन्य-कर्ता दर्शायो रे ॥हरी०॥४॥
मेरुगिरि वजरंगी जावे, कर क्रीडा पीछा घर आवे ।
अस्त होत लख रवि चिन्तित वो मन मे थावे रे ॥हरी०॥५॥
अहो कारमी काया माया, कैसा विभाकर तेज वढाया ।
भयो देखतो अस्त आनकर कौन बचाया रे ॥हरी०॥६॥
वडे पुत्रको राज्य भलाया, आरभ सारंभ सब छिटकाया ।
गहरा देकर दान सुयश वो खूब कमाया रे ॥हरी०॥७॥
धर्मरत्न गुरुवर के पासे, ली दीक्षा कर उत्सव सासे ।
धन्य अंजनी-लाल आत्म-पथ करन उजासे रे ॥हरी०॥८॥
ली दीक्षा साथे गज-गमणी, सातसहस राण्यो मनहरणी ।
लक्ष्मीवति श्रमणी संग देखो साची करणी रे ॥हरी०॥९॥
नारी प्यारी भोगजु न्हावे, साधन मिनिया तेज जणावे ।
कर्म बँधावे कामगी दुर्गति पहुँचावे रे ॥हरी०॥१०॥

सुवर्ण स्थंभे सहारो पावियो, हास्य सूं अनरथ पाय हो, सु०॥७॥
देवत देखी थररर धूजियो, अररर हुवो अन्याय हो, सु० ॥
मोटो प्रासादज हाहा! ढह गयो,पश्चात्ताप लहाय हो सु० ॥८॥
आँखो विकशित कोमल कमलसी,नही चेतना तार हो, सु० ॥
कपिपति आदी सारा राजिया,स्तब्ध भया तिणवार हो,सु० ॥९॥
हाहाकार मच्यो अति रौद्र ही, रोवे सब सरदार हो, सु० ॥
तीनखण्डनो साहिब चलदियो, दीसे देव दीदार हो, सु० ॥१०॥
अन्तेउर मे खबरो जावतो, मूओ जाणी कन्त हो, सु० ॥
शिर कूटे वक्षस्थल हरे, करुणस्वरे कुरलन्त हो, सु० ॥११॥
शोकाकुल तो शब्द सुणीजतो, अति अमंगल होवेत, सु० ॥
राम पधार्‌या लक्ष्मण देह पै, ढंग लखी कोपेत हो, सु० ॥१२॥
जीवे छै मुज ह्वालो वीरजी, माड्यो काई उत्पात हो, सु० ॥
मूर्च्छा आई कोइ प्रयोग थी, सदुपचार करात हो, सु० ॥१३॥
वैद्य बुलाया विविध प्रकारना,कोई ज्योतिपना जाण हो,सु० ॥
मन्त्र-तन्त्र उपकर्म अनेक ही, कीधा बुद्धि प्रमाण हो, सु० ॥१४॥
एक न लागो तास उपाय जो, राम तदा मूर्च्छाय हो, सु० ॥
संज्ञा पामी पाछा ऊठिया, रोवत है असहाय हो, सु० ॥१५॥
शत्रुघन लंकेश रु कपिपती, रोवे निरहाधार हो, सु० ॥
कौशल्यादी माता आरडे, नयनो नीर प्रवाह हो, सु० ॥१६॥
कठै पधार्‌या वड बन्धव तजी, लागी उर मे लाय हो, सु० ॥
घर-घर मारग पन्थ मे, माच्यो हा हा हाय हो, सु० ॥१७॥
झण्डा झुकिया तीनो खण्ड मे, होय रह्यो अरडाट हो, सु० ॥
मिश्री मुनि सारा चित्त वे, पडी अचिती वाट हो, सु० ॥१८॥

—शिखरिणी-छन्द—

दशा ऐसी देखी अथिर जग जाना लवण ने ।
लघु भ्राता साथे चरण ग्रह आज्ञा पितुन मे ॥
लही चाल्या दोई सुगुरु उप आया चलकरी ।
वरी दीक्षा शिक्षा अखिल दुख टारो शिववरी ॥१॥

दोहा

अंगज अरु बन्धव तणो, विरह दुःख विन पार ।
वार-वार मूर्च्छा लहै, राघव दीन-दयाल ॥१॥

—सोरठा—

बीत गये पटमास, हाल न चेत्या रामजा ।
रात्रिन्दिवस उदास, दुश्मन मोखो ताकियो ॥१॥
इन्द्रजीत-सुत और, सूर्पनखारो सूर जो ।
छाने अयोध्या भोर, माडे घुसिया मूरखा ॥२॥
अपर अनेको भूप, लाभ उठावण आविया ।
राघव सुणी विरूप, खांधे ले भाई भणी ॥३॥

—कवित्त—

रोष भर रामचंद्र चाप को चढाय चारु-
सिन्धु जिसो गाज कर फाल देतो आयो है ।
मार कूट काढ दीना भई है फजीती पूरी-
लेता जावो राज ऐसो वचन सुनायो है ॥
अवधी से जटायु का देव देवलोक बीच-
आयो परिवार युत गाढो दुख पायो है ।
अहो अहो राम-राय मोह के अधीन हो के-
मृत-भाई ले के फिर अचरज पायो है ॥१॥

—चन्द्रायणा—

वैरी लज्जा पाय गुरु अतिवेग पै ।
सजम लीधो जाय हार्‌या जब तेग मे ॥
समजावण के काज जटायू देव ने ।
दिखलावे दृष्टान्त जाण निज सेव ने ॥१॥

ढाल मी २८० ॥ तर्ज—जिनवर वादूला० ॥

देव जटायू रूप विकुर्वी, रोपे कमल चटान, युक्ती करता रे ।
ऊखर पृथ्वी बिना ही पाणी, बोवे बीज महान् नजरो पडता रे ॥१॥
वालू पीसे घाणी माहे, अकल बिनोग काम, रामजी भाखे रे ।
जलबिन कमल कभी नहि ऊगे, खेती होय निकाम, जातनी शाखेरे ॥२॥
सूका वृक्ष कभी नहि फूले, तिल बिन कैसे तेल, सोचो मन मेरे ।
मूढ होय क्यो समय बिगाडो, खोटा खेल, समज नहि तन में रे ॥३॥
कृत्रिम नर हँस बोलियो, खाना नही होग, मृवा किम जीवे रे ।
सुण कोप्या मारण ही धाया, अदृश्य आग थी जोय, मोह रमणीवेरे ॥४॥

ढाल २८१ मी ॥ मी ॥—नमूं अनन्त चौवीसी० ॥

वर शुद्धाचारी पाले पंचाचार,
समिती अरु गुप्ती युत जयणारी चाल ॥
छठ अट्ठम आदी तप करते विविध प्रकार,-
अभिग्रह केइ धारे, टारे पाप पराल ॥१॥

मेरु गिरि सादृश पण महाव्रय पालन्त,-
धीमा ने गिरवा ब्रह्मचारी गुणवन्त।
पढिया है पूरण चवदै पूरव सार,-
वाणी अंग द्वादश अर्थ, पाठ लिये धार ॥२॥

है ज्ञान-शिरोमणि राम-मुनि रमणीक,-
दे मधुर-देशना भव्य सुणे धर पीक।
गुरुवासे वसिया साठ वर्ष परिमाण,-
कीनी गुरु-सेवा षट् द्रव्यन की जाण ॥३॥
गुरु-आज्ञा पाई अष्ट गुणो संयुक्त,-
स्वतन्त्र विहारी विकथा से वह मुक्त।
तपे तेला माहे ध्यान-मग्न दिन तीन,-
विशुद्ध भावो से अवधी-ज्ञान ही लीन ॥४॥
निज अनुज भणी वे चउथी पृथ्वी दीठ,-
रावण संघाते लडते है दृठ पीठ।
मुनि राम चिन्तवे मै हो तो धनदत्त,-
लक्ष्मण लघु-भ्राता वसूदत्त शुभ चित्त ॥५॥
मुज काजे मूओ भमतो भव-भव भूर,-
इहाँ लक्ष्मण हो कर कीधी सेव प्रचूर।
सो वर्ष कुंवर-पन मण्डलीक शत तीन,-
दिग्विजय चालीसज पदवी हरी प्रवीन ॥६॥
वर सहस्र इग्यारा ऊपर पाँचसो साठ,-
सर्वायू भोग्यो पद्मपुराणे पाठ।
अव्रत्ती रहिया युद्ध तीन सो साठ,
कीधा था याते भोगे दुख के ठाट ॥७॥
यह देख स्थिती वे घोर तपस्या ठाई,
कर्मो ने हणवा राम वण्या उत्साही।

स्यन्दन स्थल नगर लेन पारणो जावे,
गजगति ने चाले देखी जन हर्षावे ॥८॥
ले लेकर वस्तु थाल भरी भरी लावे,
लायो नही लेवे लोक घणा दुख पावे।
जन शब्द शोर से स्थम्भ भाज गजराज,
मदमस्त हुवो है करवा लग्यो अकाज ॥९॥
उत आहार न लीना आया नृप के भौन,
प्रीतीनन्दी नृप पडिलाभ्यो गुणगोन।
प्रभु कियो पारणो पंच दिव्य प्रगटाया,
भइ दिव्य घोषणा राम मुनीश्वर आया ॥१०॥
यह धन्ध देखकर अभिग्रह एहो कीध,
नही आवूं नगर मे वन में धर्म प्रसीध।
महा आरम्भ होवे कोलाहल भी थाय,
मुनि धर्म- आराधन वन मे सुख थी थाय ॥११॥
रन वन मे विचरे सदा समाधी भाव,
सम-दम उर छायो प्रतिमा धर तप दाव।
जीवन अरु मरणो मित्र शत्रु सम तोल,
नागर ने ठाकर [illegible] कंचन तोल ॥१२॥
[illegible]

—छप्पय—

मूल गाथा अडचास, ढाल इक्कावन आछी।
छ सौ बावन गाहा चंदायण साते साची॥
दोहा सितत्तर जान, सत्ताईस कवित शिखरणी।
संख्या आठ विचार, सवैया चार थियट्टरणी॥
एकादस है सोरठा, छप्पय दस दिखला रहे।
छन्दमालिनि एक है, चौथे खण्ड समा गये॥१॥

सम्पूर्ण ग्रन्थ मे आये हुए पद्यो की संख्या

— कलश—

द्विशत् त्रिशत् मूल गाथा द्विशत् चौरासी ढाल है।
सप्तविसति सैकडा पर अड़तीस गाह रसाल है॥
दोहा दोय सो है सत्ताईस सवैया दस चार है।
कवित्त पचपन तीस छप्पय पदडी पच्चीस सार है॥१॥
है सोरठा तीस सारे शिखरणी पनरावलि।
चन्द्रायणा धर चूंप पिस्तालीस कीना मन रलि॥
अडियल दस पुनि द्रुतविलम्बित चार चौपई तीन हे।
थियट्ठर खट छन्द पाँचई मालनी दो लीन हे॥२॥
सिलोका खट गीतिका इक दो पंच त्रोटक छन्द है।
वसु त्रिभंगी हरिगीतिका पिण आठ ही आनन्द है॥
एक कुण्डलिया मिला, आदि संख्या है महा।
राम यशोरसायन मैं कृति कीनि है अहा॥३॥
महा तपोनिधि वचनसिद्धि सुगुरु श्री बुधमाल है।
अति अनुग्रह तस चरण रज रचा ग्रन्थ रसाल है॥
मरुधरा पर मुनि "मिश्रीमल" विचरे है सदा।
सुगुरु कृपया नित्य वरते संघ मे सुख सम्पदा॥४॥

॥ समाप्तोऽयम्-ग्रन्थ ॥

परिशिष्ट

[रामायण के प्रमुख पात्रों के वृत्तांत]

के राजा सुकण्ठ की रानी कनकोदरी के गर्भ से सिंहवाहन नाम का पुत्र हुआ। सिंहवाहन ने चिरकाल तक राज्य-सुख भोगा। फिर तेरहवे तीर्थंकर विमल प्रभु के तीर्थ में लक्ष्मीधर नाम के मुनि से श्रमण-दीक्षा ले ली। कठोर तप करते हुए उसने श्रमण-पर्याय का पालन किया। आयुष्य पूर्णकर वह लातक स्वर्ग में देव बना और चिरकाल तक स्वर्गसुख भोगता रहा।

देवलोक की आयु पूर्ण करने के उपरान्त **दमयन्त** का जीव अंजना की कुक्षि मे **हनुमान** के रूप मे उत्पन्न हुआ।

पूर्वजन्मो मे सद्धर्म का आचरण करने से ही हनुमान वज्रदेही, चरम-शरीरी, तद्भव मोक्षगामी, अनेक सद्गुणो के भण्डार, महापराक्रमी और विद्याधरो के राजा बने।

सीता और भामण्डल

ढाल ६२, पृष्ठ ६८-१०३

वसुभूति नाम का एक ब्राह्मण जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे बसे दारु नाम के ग्राम में निवास करता था। उसकी पत्नी का नाम था *अनुकोशा* और पुत्र का नाम अनुभूति[1]। अनुभूति का विवाह सरसा नाम की सुन्दर युवती के साथ हुआ। सरसा से अनुभूति अत्यधिक प्रेम करता था।

सरसा अत्यन्त सुन्दरी होने के साथ-साथ अपने नाम के अनुरूप सरस भी थी, यानी वह सबसे मुस्कराकर-हँसकर बोलती। उसके मधुर-भाषिणी होने के कारण उसकी सुन्दरता मे चार चाँद लग गये। परिणाम यह हुआ कि कयान नाम के एक ब्राह्मण ने उसका अपहरण कर लिया।

सरसा के अपहरण से अनुभूति को बहुत दुख हुआ। वह पागल सा बनकर उसे ढूँढने लगा।

वसुभूति और अनुकोशा भी पुत्रवधू को ढूँढने निकल गये। मार्ग मे उन्हे एक मुनि के दर्शन हो गये। मुनि की वैराग्यवर्धिनी देशना मे उनका शोक कम हुआ और उन दोनो ने संयम स्वीकार कर लिया। संयम-पालन करते हुए देह त्यागकर सौधर्म देवलोक मे देव पर्याय प्राप्त की। वहाँ से च्यवकर वसुभूति का जीव वैताढ्य पर्वत पर अवस्थित रथनूपुर नगर का राजा चन्द्रगति विद्याधर बना और अनुकोशा का जीव उसकी रानी पुष्पावती बना।

सरसा को भी एक साध्वी का निमित्त मिल गया। उनकी प्रेरणा से

---

1 त्रिषष्टि० (७।४) मे इसका नाम अतिभूति दिया गया है।

सुन्दरी को साधारण लकडहारिन समझकर राजा प्रकाशसिंह ने उसे स्वीकार नही किया। परिणामस्वरूप कुलमण्डित राजमहल छोडकर वन की ओर चल दिया और पल्ली बनाकर वहाँ रहने लगा। जीविका-निर्वाह के लिये उसने लूट-मार करना शुरू कर दिया।

वह पल्ली क्योकि राजा दशरथ की राज्य सीमा के समीप थी, इसलिए वह दशरथ के प्रान्त भाग मे लूटमार करने लगा। दशरथ के एक सामन्त बालचन्द्र ने उसे पकडकर राजा के समक्ष प्रस्तुत कर दिया। कुछ समय तक तो राजा ने उसे बन्दीगृह मे रखा और फिर छोड दिया।

अब कुलमण्डित उद्देश्यहीन होकर इधर-उधर भटकने लगा। भाग्य-योग से उसे मुनिश्री मुनिचन्द्र के दर्शन हो गये। उसने श्रावकधर्म स्वीकार कर लिया। किन्तु क्योकि राजकुमार होकर भी वह राज्य-सुख प्राप्त न कर सका, इसलिए उसके हृदय मे राज्य-प्राप्ति की लालसा बनी रही। कालधर्म पाकर वह राजा जनक की पत्नी विदेहा के गर्भ में अवतरित हुआ।

उधर ब्रह्मदेवलोक से च्यवकर सरसा का जीव भी राजा जनक की पत्नी विदेहा के गर्भ मे आया। दोनो जीव अनुक्रम मे गर्भ मे बढने लगे।

इधर जब पिंगल ने जंगल से लौटकर घर मे अतिसुन्दरी को न देखा तो वह बहुत दुखी हुआ। उसे खोजता हुआ इधर-उधर भटकने लगा। शुभयोग से उसे आचार्य आर्यगुप्त के दर्शन हो गये। उसने श्रमणधर्म स्वीकार कर लिया। व्रतो का पालन करते हुए भी उसके हृदय से अतिसुन्दरी न निकाल सकी और राजकुमार कुलमण्डित के प्रति भी वैरभाव बना रहा। फिर भी एक दिन की श्रमण पर्याय भी देव गति का कारण होती है, इस-लिए कालधर्म पाकर वह सौधर्म देवलोक मे देव बना।

इसी वैर के कारण जब जनक-पत्नी विदेहा ने युगल पुत्र-पुत्री को जन्म दिया तो उसने कुलमण्डित के जीव का हरण कर लिया, लेकिन कुल-मण्डित का जीव पूर्णायु लेकर आया था, इस कारण वह उसे मार न सका, सिर्फ वैताढ्य पर्वत के रथनूपुर नगर के नन्दनोद्यान मे रख आया। वहाँ चन्द्रगति विद्याधर ने उसे उठा लिया और अपना ही पुत्र मानकर उसका पालन-पोषण किया। उसका नाम भामण्डल रख दिया।

सरसा का जीव सीता के रूप में जनक के घर मे ही पलता रहा।

इधर प्रथम मुनि ने निरतिचार संयम का पालन किया और कालधर्म प्राप्त कर पाँचवे देवलोक में महर्द्धिक देव बने। पूर्वभव के स्नेह-संस्कारवश वे मुनिवेश धारण करके कौशाम्बी आये और रतिवर्द्धन को उसके पूर्वभव सुनाकर धर्माराधना की प्रेरणा दी। रतिवर्द्धन को भी जातिस्मरणज्ञान हो गया। संसार त्यागकर उसने मुनि-दीक्षा ली और आयु पूर्ण करके पाँचवे देवलोक मे देव बने।

वहाँ से च्यवकर दोनो भाई महाविदेहक्षेत्र के विबुद्ध नगर के राजा हुए। इस जन्म में भी संयम पालन करके अच्युत देवलोक मे देव बने। वहाँ से आयुष्य पूर्ण कर प्रथम-पश्चिम के जीव दोनो देव प्रतिवासुदेव रावण के इन्द्रजित और मेघवाहन नाम के पुत्र हुए।

रानी इन्दुमुखी उन दोनो की माता मंदोदरी के रूप में उत्पन्न हुई।

भरत और भुवनालंकार हाथी

ढाल २३७-२३८, पृष्ठ २५७-२६१

इस भरतक्षेत्र के वर्तमान अवसर्पिणी काल मे आदि तीर्थंकर श्री ऋषभदेव हुए। धर्मतीर्थ की स्थापना और जीवो के कल्याण के लिए उन्होने श्रामणी दीक्षा ग्रहण की। उनके साथ-साथ देखा-देखी अन्य चार हजार राजा भी प्रव्रजित हो गए।

इस समय तक लोग साधुचर्या मे अनभिज्ञ थे। वे नही जानते थे कि श्रमणो को निर्दोष आहार किस प्रकार दिया जाता है। परिणामस्वरूप मुनियो को भोजन न मिल सका। प्रभु तो निराहार रहकर ही अपनी संयम यात्रा चलाते रहे लेकिन अन्य श्रमण क्षुधा वेदना न सह सके। वे सयममार्ग से च्युत हो गए।

उन च्युत हुए श्रमणो मे प्रह्लादन और सुप्रभ राजाओ के पुत्र चन्द्रोदय और सुरोदय भी थे। संयमच्युत होकर वे सुदीर्घकाल तक भवभ्रमण करते रहे।

भवभ्रमण की इस सुदीर्घ प्रक्रिया मे एक बार चन्द्रोदय का जीव गजपुर के राजा हरिमती और उसकी रानी चन्द्रलेखा का कुलंकर नाम का पुत्र हुआ। सुरोदय का जीव भी उसी नगर मे विश्वभूति ब्राह्मण की पुत्री अग्निकुण्डा का पुत्र श्रुतिरति हुआ। अनुक्रम से कुलंकर राजा बना और श्रुतिरति इसका पुरोहित।

एक बार कुलंकर किसी तापस से मिलने के लिए उसके आश्रम की

ओर जा रहा था। मार्ग मे उसे अवधिज्ञानी मुनि अभिनन्दन के दर्शन हो गए। कुलंकर ने उनकी वंदना की। मुनिराज को वंदन करके राजा आगे चलने लगा तो अवधिज्ञान से सब कुछ जानकर और जीवदया की भावना से प्रभावित होकर मुनिश्री ने कहा—

"राजन्! जिस तापस से मिलने तुम जा रहे हो, वह पंचाग्नि-तप तपता है। वहाँ जलाने के लिए लाये हुए लट्ठो मे से एक मे एक सर्प है। वह सर्प तुम्हारे पितामह राजा क्षेमंकर का जीव है। अत उस लट्ठे को सावधानी से चिरवाकर उसकी प्राण-रक्षा करना।"

'ऐसा ही करूँगा' कहकर राजा कुलंकर चल दिया। वह तापस के आश्रम मे पहुँचा। वहाँ उसने लट्ठो को चिरवाया तो उनमे से एक मे सर्प निकला। राजा कुलंकर श्रमणसाधुओ के अतिशयज्ञान, लोकोपकारीवृत्ति और जीवदया की भावना से बहुत प्रभावित हुआ। उसके हृदय मे वैराग्य-भाव उमडने लगे।

अपने वैराग्य-भाव उसने पुरोहित श्रुतिरति के समक्ष प्रगट किये तो श्रुतिरति अपने भविष्य के लिए चिन्तित हो गया। उसे अपनी आजीविका की हानि होती दिखाई दी। अपने स्वार्थ के वशीभूत होकर उसने विपरीत सलाह दी—

"राजन्! संन्यास और प्रव्रज्या तो वृद्धावस्था मे लेनी चाहिए। युवावस्था तो गृहस्थाश्रम के लिए ही है। आप राज्य का संचालन करते हुए ही गृहस्थधर्म का यथायोग्य पालन करे। यही उचित है, इसलिए आप इस समय प्रव्रजित होने का विचार त्याग दीजिए।"

पुरोहित के इन शब्दो से राजा का वैराग्य लेने का उत्साह भंग हो गया। वह श्रावकव्रत पालता हुआ गृहस्थाश्रम मे ही रहने लगा।

एक क्रिया किसी को सुखदायी होती है तो किसी के लिए दु:ख का कारण भी बन जाती है। राजा कुलंकर की एक रानी का नाम था श्रीदामा। वह पुरोहित श्रुतिरति के प्रति आसक्त थी। दोनो मे अनुचित सम्बन्ध था। पुरोहित ने तो कुलंकर को प्रव्रजित होने मे अपने स्वार्थवश रोका था, लेकिन रानी श्रीदामा के पापी हृदय मे शका का नाग कुलबुला उठा। जब उसने राजा के प्रव्रजित होने का विचार सुना तो बहुत प्रसन्न हुई, सोचा—अब मैं निराबाध अपना अनुचित सम्बन्ध जारी रख सकूँगी, लेकिन जब राजा का

वैराग्यभाव मंद हो गया तो उससे समझा कि राजा को मेरे अनुचित सम्बन्धो का पता लग गया है। वह राजा की शत्रु वन गई।

कामान्ध नारी क्या नही कर डालती ? श्रीदामा ने पुरोहित के सहयोग के अपने पति राजा कुलंकर को विप देकर मार दिया।

कुछ काल पश्चात् पुरोहित श्रुतिरति भी मर गया।

राजा कुलंकर और पुरोहित श्रुतिरति—दोनो चिरकाल तक भवभ्रमण करते रहे।

वहुत लम्वा काल व्यतीत हो जाने के वाद राजगृह नगर मे कपिल व्राह्मण की पत्नी सावित्री के उदर से राजा कुलंकर और पुरोहित श्रुतिरति के जीवो ने पुत्र रूप में जन्म लिया। वहाँ इनके नाम क्रमश रमण और विनोद रखे गये। रमण वेदो का अध्ययन करने के लिए काशी नगरी मे चला गया। पीछे से विनोद का विवाह शाखा नाम की एक तरुणी से हो गया। शाखा अतिशय कामुक और दुराचारिणी स्त्री थी। उसके पति विनोद को भी उसके चरित्र पर सन्देह था।

कितने ही वर्प वाद रमण वेदाध्ययन एवं ज्ञानार्जन करके वापिस राजगृह लौटा, लेकिन रात्रि का समय हो जाने मे नगर-रक्षको ने उसे नगर मे प्रवेश करने दिया। रात्रि व्यतीत करने के लिए वह यक्षमंदिर मे विश्राम हेतु रुक गया।

रात्रि के समय विनोद की पत्नी शाखा दत्त व्राह्मण के संकेत पर उसी यक्ष मन्दिर मे आई। दत्त किसी कारणवश वहाँ न आ सका। शाखा ने रमण को सोते देखा तो उसने उसी को दत्त समझा और उसे जगाकर रतिक्रिया मे निमग्न हो गई। विनोद को भी अपनी पत्नी पर सन्देह तो था ही, वह भी नंगी तलवार लिए पत्नी का पीछा करता-करता वहाँ आ पहुँचा। वहाँ उसने दोनो को पापाचार मे लीन देखा तो क्रोध में भर गया। उसने रमण को मार डाला। विनोद की पत्नी शाखा भी क्रोध मे वेभान हो गई। उसने समझा कि उसके पति ने उसके जार दत्त व्राह्मण को मार डाला है, इसलिए उसने अपने पति विनोद की तलवार छीनकर उसी से उसका प्राणान्त कर दिया।

रमण और विनोद दोनो अव फिर भवभ्रमण करने लगे।

जन्म-मरण करते हुए विनोद का जीव एक धनाढ्य श्रेप्ठी का धन नाम का पुत्र हुआ और रमण का जीव लक्ष्मी नाम की स्त्री का भूपण नाम

का पुत्र बना। धन की प्रेरणा और सहयोग से भूषण का विवाह बत्तीस श्रेष्ठिकन्याओ के साथ हो गया। एक रात्रि को भूषण अपने घर के सामने बैठा था कि उसे श्रीधर मुनि का कैवल्योत्सव मनाने हेतु जाते देवविमान आकाश मे दिखाई दिये। वह भी केवली मुनि के दर्शनो के लिए लालायित हो उठा। दो-चार कदम ही चला कि अंधेरे मे एक भयंकर काले नाग पर पाँव पड गया। विषधर ने काट खाया। शुभ परिणामो मे मरकर वह बहुत काल तक शुभ योनियो मे परिभ्रमण करता रहा। फिर इसी जम्बूद्वीप के अपर महाविदेह क्षेत्र के रत्नपुर नगर के अचल चक्रवर्ती की रानी हारिणी की कुक्षि से उत्पन्न हुआ। उसका नाम प्रियदर्शन रखा गया। उसकी इच्छा तो बिना विवाह किये ही प्रव्रजित होने की थी, परन्तु पिता के अत्यधिक आग्रह के कारण उसे तीन हजार नवयौवनाओं के साथ विवाहसूत्र मे बंधना पड़ा। चौसठ हजार वर्ष तक गृहस्थधर्म का पालन करते हुए वह सवेगपूर्वक गृहस्थाश्रम मे रहा और कालधर्म पाकर ब्रह्मलोक मे देव बना।

इधर धन भी संसार परिभ्रमण करता हुआ पोतनपुर मे अग्निमुख नामक ब्राह्मण की पत्नी शकुना के उदर मे मृदुमति नाम का पुत्र हुआ। मृदुमति अविनीत था, इसीलिए उसके पिता ने उसे घर मे निकाल दिया। अनेक देश-विदेशो मे भ्रमण करता हुआ मृदुमति अनेक कलाओ में निपुण हो गया, साथ ही पक्का धूर्त भी बन गया। द्यूत मे तो वह इतना कुशल हो गया कि उसे जीतना प्राय असम्भव ही था। द्यूतक्रीडा के माध्यम मे उसने विपुल धन अर्जित किया। धनोपार्जन के साथ साथ उसे वेश्यागमन का व्यसन भी लग गया। वह वेश्या वसतसेना मे आसक्त हो गया और वृद्धावस्था तक काम सुख भोगता रहा। वृद्धावस्था में जब इन्द्रियाँ शिथिल हो गई तो उसमे धर्मभावना जागी। उसने प्रव्रज्या ग्रहण करके तपस्या की और पांचवे देवलोक में देव बना।

धन का जीव कपट-दोष के कारण भुवनालंकार हाथी बना और प्रियदर्शन का जीव राम का छोटा भाई भरत।

इस प्रकार चन्द्रोदय का जीव भगवान ऋषभदेव के समय मे अनेक शुभाशुभ योनियो मे भ्रमण करता हुआ श्रीराम का अनुज भरत बना और इस जन्म मे तप करके मुक्त हुआ।

शत्रुघ्न और कृतांतमुख (राम का सारथी)

ढाल २४२-२४३, पृष्ठ २६५-६८

किसी नगर मे श्रीधर नाम का एक विप्र निवास करता

उसी नगर मे एक अन्य वणिक भी रहता था। उसका नाम सागरदत्त था। उसकी पत्नी का नाम रत्नप्रभा था। उसके एक पुत्र और एक पुत्री, ये दो सन्ताने थी। पुत्र का नाम था गुणधर और पुत्री का नाम था गुणवती।

उसी नगर मे एक तीसरा श्रेष्ठी भी रहता था। उसका नाम श्रीकान्त था और वह बहुत ज्यादा धनी था।

वणिक सागरदत्त ने अपनी पुत्री गुणवती का विवाह सेठ नयदत्त के बड़े पुत्र धनदत्त के साथ निश्चित किया। लेकिन सागरदत्त की पत्नी रत्नप्रभा लोभ मे फँस गई। उसने चुपचाप गुप्त रूप से गुणवती का विवाह धनी सेठ श्रीकान्त के साथ निश्चित कर दिया।

किसी तरह यह समाचार ब्राह्मण याज्ञवल्क्य को ज्ञात हो गया। सगपण (सगाई) किसी से और विवाह की बात किसी दूसरे पुरुष के साथ, यह तो सरासर विश्वासघात और धोखेबाजी थी। याज्ञवल्क्य इस धोखेबाजी को न सह सका। उसने सम्पूर्ण वृत्तान्त अपने मित्रो धनदत्त और वसुदत्त को बता दिया।

वसुदत्त को इस कपटपूर्ण आचरण से इतना क्रोध आया कि वह बेभान हो गया। रात्रि को ही नगी तलवार लेकर सेठ श्रीकान्त के घर जा धमका। श्रीकान्त ने भी उसका मुकाबिला तलवार से ही किया। इस खड्ग-सघर्ष मे दोनो ही मारे गये।

दोनो ही मरकर विध्याटवी मे मृग हुए। गुणवती भी कुँवारी ही मर गई। वह भी विध्याटवी मे मृगी हुई। इस मृगी के कारण दोनो ही मृग परस्पर जूझ गये और लडते-लडते प्राण दे दिये।

इसी प्रकार वसुदत्त और श्रीकान्त के जीव अनेक योनियो मे जन्म लेते रहे और गुणवती के जीव के निमित्त से लडते-मरते रहे। उनका वैर बढता ही रहा।

इधर धनदत्त अपने छोटे भाई वसुदत्त की मृत्यु से बहुत दुखी हुआ। वह घर से निकल गया और इधर-उधर भटकने लगा। एक रात्रि को वह बहुत ही क्षुधातुर हो गया। भूख उसे असह्य हो गई। वन मे भटकते-भटकते उसे एक मुनि दिखाई दे गये। वह उनके पास पहुँचा और उनसे भोजन की याचना करने लगा। मुनि ने समझाया—

"वत्स ! हम साधु लोग भोजन का सचय कभी नही करते। हमारे

पास भोजन कहाँ है ? फिर यह रात्रि का समय भी है। रात्रि को तो पक्षी भी भोजन नहीं करते, तुम तो मनुष्य हो। रात्रि के अन्धकार मे भोजन के साथ कोई विषैला जीव पेट मे चला जाय तो उसकी तो हिंसा हो ही जायगी किन्तु तुम्हारे भी प्राणो पर आ बनेगी। इसलिए प्रात काल ही भोजन करना।"

मुनि के इन शब्दो से धनदत्त को बहुत सन्तोष हुआ। उसने श्रावक-व्रत ग्रहण कर लिये। श्रावकव्रत पालन करते हुए कालधर्म प्राप्त करके वह सौधर्म देवलोक में देव बना। वहाँ से च्यवकर वह महापुर निवासी सेठ मेरु और सेठानी धारिणी का पद्मरुचि नाम का पुत्र हुआ। इस जन्म मे भी वह परम श्रावक था।

एक बार वह अपने घोडे पर बैठकर गोकुल को जा रहा था। मार्ग में उसे एक मरणासन्न बैल दिखाई दिया। बैल अन्तिम साँसे गिन रहा था। पद्मरुचि के उर मे करुणा का संचार हो गया। वह घोडे से उतरा और परलोक के पाथेय के रूप मे बैल को महामन्त्र नवकार सुनाने लगा। मन्त्र के प्रभाव से बैल के परिणाम शान्त हुए। वह मरकर उसी नगर के राजा छत्रछाय की रानी श्रीदत्ता की कुक्षि से वृषभध्वज नाम का पुत्र हुआ। कुमार वृषभध्वज जब युवा हो गया तब एक बार वह घूमता-घामता अपने पूर्वभव (बैल के भव) की मृत्युभूमि पर आ गया। उस भूमि का स्पर्श करते ही उसे जातिस्मरणज्ञान हो गया। पूर्वभव का अन्तिम दृश्य उसकी आँखो के सामने नाचने लगा। अपने उपकारी को खोजने की उसकी इच्छा अति तीव्र हो उठी। उसने उसी स्थान पर अपने पूर्वभव का दृश्य अंकित करते हुए एक चित्र का निर्माण कराया और वही रक्षक बिठा दिये। उनको आदेश दे दिया कि जो भी इसे रुचिपूर्वक देखे और इसका रहस्य बताये उसकी सूचना तुरन्त मुझे दे देना।

पद्मरुचि श्रावक एक बार उधर से निकला। चित्र को विस्मित होकर देखने लगा। रक्षको ने वृषभध्वज को सूचना दी। वह तुरन्त वहाँ आया और अपने उपकारी श्रावक पद्मरुचि को अपने साथ ले गया। श्रावक पद्म-रुचि चिरकाल तक श्रावकधर्म का पालन करता रहा। वृषभध्वज और पद्म-रुचि दोनो मरकर ईशान कल्प मे महर्द्धिक देव हुए।

ईशान कल्प से च्यवकर पद्मरुचि का जीव मेरुपर्वत की पश्चिम दिशा में स्थित वैताढ्यपर्वत पर नन्दावर्त नगर के राजा नन्दीश्वर

मुनि तो उत्तमक्षमाधर्म के धारी थे। वे तो पहले भी वेगवती का कल्याण चाहते थे और अब भी उनके हृदय मे उसके प्रति कल्याणभावना थी। लेकिन शासनदेव ने वेगवती को क्षमा करके उसकी व्याधि को मिटा दिया। उसे पुन पहले के समान ही रूपवती बना दिया।

वेगवती श्रद्धालु श्राविका बन गई।

शम्भु राजा ने वेगवती के रूप पर आकर्षित होकर श्रीभूति पुरोहित से उसकी याचना की। श्रीभूति ने यह कहकर राजा की माँग ठुकरा दी कि 'मिथ्यात्वी के साथ वेगवती का विवाह नही किया जा सकता।' इस पर शम्भु राजा कुपित हो गया। उसने पुरोहित श्रीभूति की हत्या कर दी और वेगवती के साथ बलात्कार किया। इस घोर अपमान से क्षुभित होकर वेगवती ने शम्भु राजा को शाप दिया कि 'मै भवान्तर मे तुम्हारे नाश का कारण बनूँ।'

यह शाप सुनकर शम्भु राजा का हृदय काँप गया। उसने वेगवती को छोड दिया। वेगवती ने हरिकान्ता नाम की आर्या के पास महाव्रत ग्रहण किये और कालधर्म पाकर ब्रह्म देवलोक मे उत्पन्न हुई। वहाँ से च्यवकर राजा जनक की पुत्री सीता बनी।

इस प्रकार गुणवती का जीव अनेक भव करके सीता के रूप में उत्पन्न हुआ। वेगवती के भव मे दिये शाप के कारण वह रावण के नाश का निमित्त बनी और मुनिराज के मिथ्या-अपवाद के कारण उसका भी अयोध्या मे अपवाद हुआ, उस पर भी मिथ्या कलक लगा।

शम्भु राजा का जीव भवभ्रमण करता हुआ एक बार कुशध्वज ब्राह्मण की पत्नी सावित्री के गर्भ मे प्रभास नाम का पुत्र हुआ। इस भव मे प्रभास ने विजयसिंह मुनि के श्रीचरणो में दीक्षा ली। तपश्चर्या करते हुए उसने एक दिन कनकप्रभ नाम के विद्याधर राजा को देखा। विद्याधर राजा की समृद्धि इन्द्र के समान महान थी। प्रभास ने उस समृद्धि को देखकर निदान किया कि 'इस तप के फलस्वरूप मै भी ऐसा ही समृद्धिसम्पन्न बनूं।'

मरकर वह तीसरे देवलोक मे देव बना और वहाँ से च्यवकर राक्षसपति रावण। उस निदान के कारण ही वह प्रतिवासुदेव और समस्त विद्याधरो का राजा बना।

इस प्रकार श्रेष्ठी श्रीकान्त का जीव लंकापति दशानन बना।

याज्ञवल्क्य ब्राह्मण, जो धनदत्त और वसुदत्त का मित्र था, वह अनेक भव करता हुआ, इस जन्म मे रावण का भाई **विभीषण** वना।

शम्भु राजा के द्वारा जो पुरोहित श्रीभूति की हत्या की गई थी, वह मरकर नरक[1] गया। नरक से निकलकर श्रीभूति का जीव विदेह के सुप्रतिष्ठ-पुर मे पुनर्वसु विद्याधर हुआ। एक वार उसने पुण्डरीक विजय के त्रिभुवना-नन्द चक्रवर्ती की पुत्री अनंगसुन्दरी का अपहरण किया और विमान मे विठाकर ले चला। अनंगसुन्दरी भी उसके प्रति आकर्षित थी, अत वह भी चली गई। लेकिन पिता त्रिभुवनानन्द चक्रवर्ती अपनी पुत्री अनंगसुन्दरी के अपहरण से कुपित हो गया। उसने विद्याधर पुनर्वसु को पकडने के लिए विद्याधर सेना भेजी। पुनर्वसु और चक्रवर्ती द्वारा भेजी गई सेना मे युद्ध होने लगा। इस युद्ध के दौरान अनंगसुन्दरी विमान से गिर पडी, किन्तु वह एक लता-मंडप मे गिरी, इस कारण उसे विशेष चोट नही लगी।

अनंगसुन्दरी लतामंडप से उठकर वन मे निकल गई। वहाँ उसने किसी साधु के निमित्त से व्रत धारण कर लिये और तपश्चरण करने लगी। आयु के अन्तिम दिन जव वह कायोत्सर्ग मे लीन थी, उसे एक अजगर निगल गया। समभाव और समाधिपूर्वक देह त्यागकर वह देवलोक मे देवी वनी। वहाँ से आयु पूर्ण कर वह कौतुकमंगल नगर के राजा द्रोण-मेघ की पुत्री विशल्या के रूप मे उत्पन्न हुई और राम के अनुज वासुदेव लक्ष्मण की पत्नी वनी।

विद्याधर पुनर्वसु ने जव अनगसुन्दरी को गिरा देखा तो उसे वहुत दुःख हुआ, वह शोक से भर गया। उसने भवान्तर मे अनंगसुन्दरी को पाने का निदान किया और तप करते हुए मरण करके देवलोक मे उत्पन्न हुआ। वहाँ से च्यवकर आठवाँ वासुदेव लक्ष्मण वना।

इस प्रकार **वसुदत्त** का जीव अनेक जन्म-मरण करके दशरथ-पुत्र **लक्ष्मण** वना।

---

१ त्रिषष्टि (७ १०) मे श्रीभूति पुरोहित का जीव स्वर्ग मे उत्पन्न हुआ यह वतलाया है।

लवण और अंकुश (लव-कुश) और श्रावक सिद्धार्थ

ढाल २७५, पृष्ठ ३२२

काकन्दी नगरी मे वामदेव नाम का एक ब्राह्मण रहता था, उसकी पत्नी का नाम श्यामला था और उसके वसुनन्द और सुनद नाम के दो पुत्र थे।

एक बार एक मासोपवासी मुनि उनके घर भिक्षा के लिए पधारे। दोनो भाइयो ने उन्हे भक्तिपूर्वक आहार दिया। इस दान के प्रभाव से दोनो उत्तरकुरु भोगभूमि मे युगलिया हुए। वहाँ से आयु पूर्ण कर सौधर्म देवलोक मे देव बने।

सौधर्म देवलोक से च्यवकर दोनो भाई काकन्दी नगरी के राजा वामदेव की रानी सुदर्शना के गर्भ से प्रियंकर और शुभंकर नाम के पुत्र बने। वहाँ राज्यसुख भोगकर प्रव्रजित हो गये। तप के फलस्वरूप उन्हे ग्रैवेयक मे देव पर्याय् प्राप्त हुई। वहाँ से आयु पूर्ण कर सीताजी के गर्भ से लवण-अकुश के रूप में जन्मे।

उनकी पूर्वभव की माता **श्यामला** अनेक योनियो मे भ्रमण करती हुई **सिद्धार्थ** नामक श्रावक बनी। पूर्वभव के स्नेह के कारण ही उसने लवण-अकुश को विभिन्न प्रकार की शस्त्रास्त्र एवं अन्य व्यावहारिक विद्या तथा कलाओ एव आगम तथा तत्त्वज्ञान मे निपुण बनाया।

लवण और अकुश (लव-कुश) और श्रावक सिद्धार्थ

ढाल २७५, पृष्ठ ३२२

काकन्दी नगरी में वामदेव नाम का एक ब्राह्मण रहता था, उसकी पत्नी का नाम श्यामला था और उसके वसुनन्द और सुनद नाम के दो पुत्र थे।

एक बार एक मासोपवासी मुनि उनके घर भिक्षा के लिए पधारे। दोनो भाइयो ने उन्हे भक्तिपूर्वक आहार दिया। इस दान के प्रभाव से दोनो उत्तरकुरु भोगभूमि में युगलिया हुए। वहाँ से आयु पूर्ण कर सौधर्म देवलोक में देव बने।

सौधर्म देवलोक से च्यवकर दोनो भाई काकन्दी नगरी के राजा वामदेव की रानी सुदर्शना के गर्भ से प्रियंकर और शुभंकर नाम के पुत्र बने। वहाँ राज्यसुख भोगकर प्रव्रजित हो गये। तप के फलस्वरूप उन्हे ग्रैवेयक मे देव पर्याय प्राप्त हुई। वहाँ से आयु पूर्ण कर सीताजी के गर्भ से लवण-अंकुश के रूप में जन्मे।

उनकी पूर्वभव की माता श्यामला अनेक योनियो मे भ्रमण करती हुई सिद्धार्थ नामक श्रावक बनी। पूर्वभव के स्नेह के कारण ही उसने लवण-अकुश को विभिन्न प्रकार की शस्त्रास्त्र एवं अन्य व्यावहारिक विद्या तथा कलाओ एव आगम तथा तत्त्वज्ञान मे निपुण बनाया।